गंगा-पुस्तकमाला का १८५वाँ पुष्प

अवध के ग़दर का इतिहास

देवीदत्त शुक्ल

अवध के ग़दर का इतिहास

संपादक

सर्वप्रथम देव-पुरस्कार-विजेता

श्रीदुलारेलाल भार्गव

(सुधा-संपादक)

गंगा-पुस्तकमाला का १८५वाँ पुष्प

अवध के गदर का इतिहास

लेखक

श्रीदेवीदत्त शुक्ल
(सरस्वती-संपादक)

मिलने का पता—
गंगा-ग्रंथागार
३६, लाटूश रोड
लखनऊ

प्रथमावृत्ति

सजिल्द २)] सं० १९९७ वि० [सादी १॥)
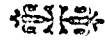
प्रीति-उपहार

निवेदन

इतिहास लिखना, और सो भी सन् ५७ के ग़दर का इतिहास, जिसे हमारे देश-भक्तों ने 'स्वाधीनता का युद्ध' घोषित कर गौरवान्वित किया है, हमारे लिये सर्वथा अनधिकार चेष्टा है ; हममें उसे लिखने का न तो विद्या-बल है, न बुद्धि-बल ही। यह जानते हुए भी हमने यह दुस्साहस जान-बूझकर किया है। इसका एक कारण है। हमने अपने बचपन में ग़दर की कथा बहुत सुनी ही नहीं है, हमारा जन्म-ग्राम बकसर उस ग़दर का एक लीला-क्षेत्र भी रहा है। उसके कारण वहाँ के डौंड़ियाखेरा का प्राचीन राज्य सदा के लिये नष्ट हो गया, और हमारे पितृव्य, जो वहाँ के राजदरबार के एक सम्मान-प्राप्त राजवैद्य थे, निराश्रय हो गए। यही नहीं, हमारी एक चाची के पिता बादशाह वाजिदअली के कप्तान पंडित माधवसिंह मिश्र ने विद्रोह में भाग लिया, जिसके कारण हमारी चाची को अपने कुटुंबियों के साथ नैपाल की तराई के जंगलों में महीनों मारा-मारा फिरना पड़ा था। ग़दर-संबंधी उनकी भी बातें हमें प्रायः सुनने को मिलती थीं। और, गाँव के बड़े-बूढ़ों की गोष्ठी में तो अपने गाँव एवं बैसवाड़े के दूसरे स्थानों की घटनाओं की वार्ता तो प्रायः नित्य ही सुना करते थे। लड़कपन की सुनी हुई वे सब बातें नहीं भूलीं। यही नहीं, पढ़ने-लिखने के बाद ग़दर-संबंधी ब्योरेवार हाल जानने की उत्सुकता और भी बढ़ गई। फलतः हमने तत्संबंधी पुस्तकें मनोयोग-पूर्वक पढ़ीं। उन सब पुस्तकों के पढ़ने से हमारे मन में यह धारणा घर कर गई कि ग़दर का सबसे अधिक ज़ोर एकमात्र अवध में ही रहा है, अतएव हिंदी में एक ऐसी पुस्तक लिखी जानी चाहिए, जिसमें अवध के ग़दर का विवरण क्रम-पूर्वक आ जाय। इस विचार के मन में उठते ही हम स्वयं उस पुस्तक को लिख डालने को सन्नद्ध हो गए।

हम इस महत्कार्य के करने के अधिकारी हैं या नहीं, इसकी ओर ध्यान तक न दिया। इसका कारण हमारी ग़दर-संबंधी हाल जानते रहने की अभिरुचि तथा उत्सुकता ही है। अस्तु। हमने यह पुस्तक लिख ही डाली, और हम अपने इस अनधिकार कार्य के लिये क्षमा भी नहीं माँगते।

हमने इस पुस्तक में अवध के ग़दर की सभी मुख्य-मुख्य घटनाओं तथा बातों को क्रम-पूर्वक लिखने का प्रयत्न किया है। इसके लिखने में हमने जिन पुस्तकों की सहायता ली है, उनके नाम अन्यत्र इसी पुस्तक में दिए गए हैं। उन पुस्तकों में उस समय के एक ही देशी लेखक की पुस्तक हमें मिल सकी है, और वह है सैयद कमालुद्दीन हैदर साहब की। यह लखनऊ के शाही दरबार के कर्मचारी थे। अँगरेज़ी में भी सरकारी दरबार में इनकी प्रतिष्ठा थी। इनकी पुस्तक यदि हमें न मिली होती, तो हम इस पुस्तक के ५वें, ७वें, १०वें और १५वें नंबर के शीर्षक इतने पूर्ण कदापि न लिख पाते। इसी प्रकार इसके अंतिम दो शीर्षकों के लिये हम 'राना जंगबहादुर के चरित' के ऋणी हैं। शेष पुस्तक हमने अँगरेज़ लेखकों की लिखी पुस्तकों के आधार पर लिखी है। परंतु हमें स्वयं इस पुस्तक से संतोष नहीं। आशा है, हमारी इस त्रुटि-पूर्ण पुस्तक को देखकर कोई अधिकारी विद्वान् अवध के ग़दर के संबंध में विवेचनात्मक ग्रंथ लिखने का कष्ट करेंगे, ताकि उसका ऐतिहासिक रूप भले प्रकार स्पष्ट हो जाय। जब तक उस तरह का ग्रंथ नहीं लिखा जाता, हमारी इस साधारण पुस्तक से ग़दर-संबंधी इतिहास के प्रेमियों का यदि कुछ भी मनोरंजन हो सका, तो हम अपने को कृतार्थ मानेंगे।

२५ दिसंबर, सन् १९२९ ई०
इंडियन प्रेस, प्रयाग

देवीदत्त शुक्ल

सूची

विद्रोह का सूत्रपात

सिपाही-विद्रोह का सूत्रपात दमदम की एक घटना से माना जाता है। सन् १८५७ की जनवरी में एक दिन वहाँ के एक खलासी ने एक सिपाही से पानी पीने के लिये लोटा माँगा। सेना के उस सिपाही ने लोटा देने से इनकार कर दिया। वह सिपाही ब्राह्मण था। उसने कहा—"मेरा लोटा फिर मेरे काम का न रह जायगा।" इस पर उस खलासी ने कहा—"तुम्हारा यह जाति-पाँति का ढकोसला अब न चलेगा। सरकार बहादुर ऐसे कार्तूस बनवा रही है, जिनमें गाय और सुअर की चर्बी लगाई गई है। और, वे तुम सिपाहियों को दाँतों से काटने पड़ेंगे।" यह बात सुनकर वह सिपाही डर गया। उसने कार्तूस काटने की बात अपने साथियों से कही। गवर्नर-जनरल लॉर्ड केनिंग की सेना-संबंधी नई व्यवस्थाओं से सिपाही असंतुष्ट तो थे ही, इस बात से वे भड़क उठे, और परस्पर सरकार की नीयत की निंदा करने लगे। कहने लगे, सरकार हमें जाति-भ्रष्ट कर ईसाई बनाना चाहती है। कार्तूसों की चर्चा ज़ोर पकड़ गई। उनमें गाय और सुअर की चर्बी लगी होने

तथा उनके दाँत से काटने की बात शीघ्र ही अन्य सेनाओं में भी पहुँच गई। फलतः सभी सिपाही भड़क उठे।

वह ब्राह्मण सिपाही जिस सेना का था, उसके सेनानायक लेफ़्टिनेंट राइट को भी कार्तूसों के काटने की चर्चा की ख़बर मिली। उन्होंने २२वीं जनवरी को इसकी सूचना अधिकारियों को दी। २८ वीं जनवरी को 'प्रेसीडेंसी डिवीज़न' के सेनापति जनरल हियरसी ने लिखा कि उनके सैनिक बहुत नाराज़ हैं। सैनिकों ने अपनी नाराज़ी प्रकट भी कर दी। बारकपुर और रानीगंज में सरकारी इमारतों और अफ़सरों के बँगलों में छिपकर आग लगाई गई।

इसी बीच में बारकपुर से ३४वीं पैदल-सेना के दो दल बरहामपुर भेज दिए गए। वहाँ १९वीं पैदल-सेना थी। उसके सिपाहियों को कार्तूसों की बात तीन हफ़्ते पहले से मालूम थी। उन्होंने ३४वीं के सिपाहियों से उसके बाबत पूछ-ताछ की। जब उन्हें मालूम हुआ कि बात सच है, तब वे और भी उत्तेजित हो उठे। उन्होंने २७वीं फ़रवरी की शाम को कार्तूस लेने से इनकार कर दिया। इसकी सूचना कर्नल मिचल को दी गई। सिपाहियों की इस हुक्मउदूली से चिढ़कर वह छावनी गए, और सिपाहियों को बहुत भला-बुरा कहा। परंतु उनकी डाँट-डपट का कुछ भी प्रभाव न पड़ा, वह अपने बँगले लौट गए। वहाँ जाकर अपने बिस्तरे पर लेटे ही थे कि उन्हें नगाड़ों की आवाज़ और शोर-गुल सुनाई

दिया। वह समझ गए, विद्रोह हो गया। उन्होंने झट अपने कपड़े पहने, और अपने अफ़सरों को बुलाकर देशी रिसाले और तोपख़ाने को छावनी चलने की आज्ञा दी। वहाँ पहुँचकर उन्होंने १९वीं सेना को पंक्तिबद्ध खड़ी पाया। वह फिर सैनिकों को डाँटने लगे। सैनिकों ने देखा, उनके साथी सैनिक उन पर गोली दागने को लाए गए हैं। इससे वे और भी उत्तेजित हो उठे। उनका रंग-ढंग देखकर उस सेना के देशी अफ़सरों ने कर्नल साहब को समझाया, और कहा, आप अपने साथ की सेना को यहाँ से हटा ले जायँ, नहीं तो विद्रोह हो जायगा। वह मान गए, और सेना को अपने साथ लेकर चले गए। मामला आगे नहीं बढ़ा। दूसरे दिन से सैनिक भी पूर्ववत् अपना काम-धाम करने लगे।

परंतु ३४वीं सेना अपनी बात पर अड़ी ही रही। हियरसी साहब ने ९वीं फ़रवरी को उसके सैनिकों को बहुत समझाया, परंतु जब ३४वीं के सैनिकों ने १९वीं सेना की उत्तेजना की बात सुनी, तब वे और भी तन गए। यह हाल देखकर १७वीं मार्च को हियरसी ने उन्हें फिर समझाया, और कहा, तुम लोग कार्तूसों को दाँत से न काटो। उन्हें पहले चुटकी से नोच डालो, तब भरो। परंतु वे नहीं माने, और बिगड़े ही रहे।

इसके बारह दिन बाद, २९वीं मार्च को, एक देशी अफ़सर ने दौड़कर सर्जंट मेजर ह्यूसन को खबर दी कि मंगल पाँड़े नाम का एक सिपाही भरी बंदूक़ लेकर बारक से निकला

है। ह्यूसन ने एडजूटेंट लेफ्टिनेंट बाघ को कहला भेजा, और ख़ुद परेड पर गए। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने देखा, मंगल पाँड़े बंदूक़ लिए क्वार्टर-गार्ड के सामने इधर से उधर आ-जा रहा है, और अपने साथियों से 'दीन' के लिये लड़ने को कह रहा है। ह्यूसन को देखकर उसने गोली चलाई, पर गोली नहीं लगी। इतने में एडजूटेंट साहब घोड़े पर सवार होकर आए। ह्यूसन ने कहा—"सावधान रहिएगा, सिपाही ज़रूर गोली मारेगा।" उनकी बात पूरी हुई थी कि सिपाही ने गोली दाग दी। गोली लगने से घोड़ा गिर गया, पर बाघ साहब उछलकर अलग जा खड़े हुए। उन्होंने ने भी सिपाही के गोली मारी, पर नहीं लगी। इतने में वह उस पर जा टूटे, और मुहमेल लड़ाई होने लगी। सिपाही ने बाघ साहब पर तलवार से वार किया। ह्यूसन भी मदद के लिये जा पहुँचे। परंतु सिपाही ने दोनो का सामना किया। २० सिपाहियों की गारद यह सब खड़ी देखती रही। जब शेख़ पल्टू नाम के एक मुसलमान ने जाकर सिपाही को पकड़ लिया, तब वे दोनो अँगरेज अफ़सर अपनी जान बचाकर भाग सके। इस बीच और अफ़सर वहाँ आ गए। ३४वीं के कर्नल ह्वेलर ने गारद को हुक्म दिया कि विद्रोही को पकड़ो। परंतु गारद के सिपाही चुपचाप खड़े रहे। तब छावनी के ब्रिगेडियर ग्रांट ने हुक्म दिया, पर उनकी आज्ञा का भी पालन नहीं हुआ। उधर मंगल पाँड़े अपने साथियों को धिक्कार रहा था

कि मैं अकेला लड़ रहा हूँ और तुम सब लोग खड़े तमाशा देख रहे हो। अब हियरसी साहब अपने दो पुत्रों के साथ वहाँ आए। उन्होंने अफ़सरों से पूछा कि विद्रोही अभी तक क्यों नहीं पकड़ा गया। उन्होंने कहा, गारद के सिपाहियों ने उनकी आज्ञा नहीं मानी। इस पर वह गारद की ओर बढ़े। एक अफ़सर ने कहा, सिपाही की बंदूक़ भरी हुई है। पर उन्होंने इसकी ज़रा परवा न की। गारद के पास पहुँचकर उन्होंने तमंचा निकालकर कहा—"मेरे आज्ञा देने पर यदि पहला आदमी तुरंत ही आगे नहीं बढ़ा, तो वह अपने को मरा हुआ समझे।" क्वीक मार्च। बड़ी अनिच्छा के साथ गारद ने आज्ञा मानी, और विद्रोही को पकड़ने के लिये सिपाही अपने सेनापति के साथ हो लिए। यह देखकर मंगल पाँड़े ने आत्महत्या करने के विचार से स्वयं अपने ही गोली मार ली। परंतु वह मरा नहीं; सिर्फ़ घायल हो गया। इस प्रकार पहली गोली दागकर मंगल पाँड़े ने सिपाही-विद्रोह का श्रीगणेश कर दिया।

इसके दूसरे दिन १९वीं सेना बारकपुर भेज दी गई, जहाँ ३०वीं मार्च को उसके हथियार ले लिए गए, और वह सेना तोड़ दी गई। परंतु ३४ वीं सेना के साथ ऐसा व्यवहार उतनी जल्दी नहीं किया गया। हाँ, मंगल पाँड़े को, ६ एप्रिल को, फाँसी की सज़ा सुनाई गई, और ८ एप्रिल को उसे फाँसी दे दी गई। गारद के जमादार को, ११ एप्रिल को, हुक्म सुनाया

गया, और २१ एप्रिल को उसे फाँसी दी गई। इस तरह यह विद्रोह जहाँ-का-तहाँ दबा दिया गया। बाद को, ४ मई को, यह सेना भी तोड़ दी गई।

परंतु कार्तूसों की बात तो तभी पश्चिमोत्तरी प्रांतों के परे पहुँच गई थी। मार्च के मध्य में प्रधान सेनापति जॉर्ज ऐन्सन दौरे के सिलसिले में अंबाला गए। उनके साथ ३६वीं देशी पल्टन थी। ३६वीं की एक टुकड़ी अंबाला में पहले से ठहरी थी। उसके दो देशी अफ़सर अपने साथियों से मिलने के लिये ३६वीं के पड़ाव में गए। उनके साथियों ने कहा कि तुम लोग ईसाई हो गए हो, क्योंकि तुम लोग चर्बीवाले कार्तूस इस्तेमाल करते हो। यह सुनकर वे बड़े चिंतित हुए, और अपनी फ़ौज में आकर उन्होंने वह बात अपने लेफ़्टिनेंट मार्टीन्यु से कही। वह तुरंत समझ गए कि इस बात के फैलने से सेना में गड़बड़ होगा। उन्होंने जाँच की कि सिपाहियों का क्या मनोभाव है। दूसरे दिन उन्होंने असिस्टेंट एडजूटेंट से जाकर कहा कि कार्तूसों की बात से सारी सेना असंतुष्ट है। इस पर प्रधान सेनापति ने डिपो के सिपाहियों को बहुत समझाया-बुझाया, पर सिपाही नहीं माने, और उन्होंने नए कार्तूस नहीं लिए। अंत में ४ एप्रिल को गवर्नर जनरल का हुक्म आ गया कि कार्तूसों के बारे में कोई रियायत नहीं की जायगी, और सिपाहियों को उन्हें दाँत से काटना ही पड़ेगा।

जब गवर्नर जनरल के इस निर्णय की खबर सिपाहियों को हुई, तब उन्होंने सरकारी इमारतों और अफ़सरों के बँगलों में आग लगानी शुरू की। १७ एप्रिल से २२ एप्रिल तक सिपाहियों ने कई इमारतें और बँगले जला डाले।

इस प्रकार तीन महीने के भीतर कार्तूसों की कथा कलकत्ते से लेकर अंबाला तक सारी छावनियों में फैल गई। बंगाल हाते की देशी पल्टनों के सिपाहियों को इस बात का पूरा विश्वास हो गया कि सरकार उन्हें भ्रष्ट करके ईसाई बनाना चाहती है। इसी बीच में यह गप उड़ी कि सरकार आटे और कुओं में गाय की हड्डी का आटा डलवा रही है। उस समय कानपुर में आटा का भाव चढ़ा हुआ था, अतएव वहाँ सस्ते भाव में मेरठ से आटा लाया गया था। परंतु इस संदेह से कि उसमें हड्डी का आटा मिला हुआ है, किसी ने उसे नहीं लिया। उधर पश्चिमोत्तर-प्रदेश में, जनवरी महीने में एक छोर से लेकर दूसरे छोर तक, गाँव-गाँव चपातियाँ बाँटी गई थीं। कहीं-कहीं मैजिस्ट्रेटों ने उसके वितरण को रोकना चाहा, पर वे रोक न सके। न इसका पता लग सका कि चपातियाँ क्यों और कैसे बाँटी गई। पर लोगों ने उसका यही अर्थ लगाया कि अँगरेज़ उनका धर्म लेना चाहते हैं, अतएव सबको धर्म की रक्षा के लिये तैयार होना चाहिए।

इधर अँगरेज़ी सरकार के विरुद्ध यह भयानक असंतोष फैल रहा था, उधर मुल्की और फ़ौजी अँगरेज़-अफ़सर चैन

की वंशी बजा रहे थे। पहले की भाँति वे सभी अपने-अपने काम-काज में संलग्न थे। उन्हें इसकी ख़बर तक न थी कि उनके ऊपर कैसी विपत्ति की घटा उठ रही है। यहाँ तक कि स्वयं गवर्नर जनरल लार्ड केनिंग और पश्चिमोत्तर-प्रदेश के लेफ्टिनेंट गवर्नर सर काल्विन तथा प्रधान सेनापति जॉर्ज ऐन्सन तक को पता नहीं था कि सारे उत्तर-भारत में घोर विद्रोह मचना चाहता है। कार्तूसों का मामला उनकी निगाह में कुछ महत्त्व ही नहीं रखता था। हाँ, अवध के नए आए हुए चीफ़ कमिश्नर सर हेनरी लारेंस को विद्रोह की पूरी आशंका थी, और आत्मरक्षा की यथासंभव तैयारी कर भी रहे थे।

सिपाहियों के इस विद्रोही मनोभाव से दिल्ली के अधिकार-च्युत सम्राट् बहादुरशाह और अवध के अधिकार-च्युत बादशाह वाजिदअलीशाह के मुसाहब लोग पूर्णतया अवगत थे। भीतर-ही-भीतर बड़े प्रसन्न थे। उन्हें आशा हुई कि सिपाहियों के विद्रोह करने पर उनका साथ देने से उनके स्वामियों की अवस्था में उपयुक्त परिवर्तन हो जायगा। इसी प्रकार की भावना बिठूर के नानाराव पेशवा के मन में उछल-कूद मचा रही थी, क्योंकि उन्हें बाजीराव पेशवा की पेंशन नहीं दी गई थी। वह भी विद्रोह के षड्यंत्र में शामिल थे, और उसके संबंध में कालपी, दिल्ली और लखनऊ का चक्कर भी लगा आए थे। ये लोग तथा इनके-जैसे अन्य असंतुष्ट लोग भीतर-ही-भीतर

सिपाहियों के विद्रोह से समुचित लाभ उठाने के लिये तरह-तरह के षड्यंत्र कर रहे थे, परंतु इसका उन्हें पता न था कि उनमें सफलता प्राप्त करने की कहाँ तक क्षमता है।

मार्च में लखनऊ पहुँचकर सर हेनरी लॉरेंस ने वहाँ के चीफ़ कमिश्नर के पद का भार ग्रहण किया। अँगरेज़ी सरकार के विरुद्ध जो असंतोष उस समय चारों ओर फैल रहा था, उसका पता उन्हें था। लखनऊ आने पर वह अवध के लोगों की सारी शिकायतें दूर करने में लग गए, ताकि वहाँ का असंतोष मिट जाय। उन्हीं दिनों फ़ैज़ाबाद में अब्दुल्ला-शाह नाम के एक मौलवी अँगरेज़ी सरकार के विरुद्ध राज-द्रोह का प्रचार कर रहे थे, अतएव वह क़ैद कर लिए गए। पहले के अधिकारियों ने जो भूमि-कर बढ़ा दिया था, और जिससे ताल्लुकेदार असंतुष्ट हो गए थे, सर हेनरी ने उसे घटा देने की आज्ञा दी। शाही घराने के लोगों तथा उनके आश्रितों को नियत समय पर उनकी पेंशनें देने की व्यवस्था की। जो देशी अफ़सर नौकरी से निकाल दिए गए थे, तथा जो सेनाएँ तोड़ दी गई थीं, उन्हें नौकरी देने के लिये हुक्म दिया। जिनकी ज़मींदारियाँ छीन ली गई थीं; उन्हें वचन दिया गया कि उनकी ज़मींदारियाँ उन्हें वापस मिल जायँगी। इस प्रकार तत्परता के साथ उपयुक्त व्यवस्था करके उन्होंने अवध में लोगों को बहुत अधिक संतुष्ट कर लिया। परंतु देशी फ़ौजों के असंतोष को वह भी न दूर कर सके। यहाँ तक कि पहली

मई को वहाँ की ७वीं अवध इर्रेगुलर सेना ने कार्तूसों के छूने से इनकार कर दिया।

इस तरह जगह-जगह की फ़ौजों में असंतोष का भाव प्रकट हो रहा था। अंत में, मेरठ में उसने भयानक रूप धारण कर लिया, और जिस बात की महीनों से आशंका थी, वह घटित हो ही गई।

विद्रोह का प्रारंभ

२२वीं एप्रिल को मेरठ की छावनी में संध्या-समय आग लगाई गई। २३वीं एप्रिल को तीसरे देशी रिसाले के कर्नल स्मिथ ने अपनी रेजीमेंट को हुक्म दिया कि वह २४वीं को सवेरे परेड पर उपस्थित हो। पर वहाँ ६० ही आदमी गए, और उन्होंने कार्तूस लेने से इनकार किया। इस पर स्मिथ साहब परेड से चले गए, और सिपाहियों के व्यवहार की जाँच करने का हुक्म दिया। जाँच की रिपोर्ट उन्होंने प्रधान सेनापति के पास भेज दी, जो उस समय अंबाले में थे। उन्होंने देशी फ़ौजी अदालत में उस मामले को रखने का हुक्म दिया। अदालत ने प्रत्येक सिपाही को दस-दस वर्ष की क़ैद की सजा दी। ९वीं मई को सवेरे, सारे ब्रिगेड की उपस्थिति में, अपराधियों के बेड़ियाँ डाली गईं, और वे जेल भेज दिए गए।

१०वीं को रविवार था। छावनी या शहर में वैसी कोई नई बात नहीं थी। नित्य की तरह सब काम-काज जारी था। परंतु देशी सिपाही उस दिन दोपहर के समय इधर-उधर

घूम-फिर रहे थे। अपने साथियों के जेल में बंद कर दिए जाने के कारण वे मन-ही-मन क्षुब्ध थे, परंतु साथ ही अँगरेज़ों से डर भी रहे थे। संध्या-समय सदा की भाँति अँगरेज़ गिरजाघर जाने की तैयारी करने लगे। अँगरेज़ सैनिक भी गिरजाघर जाने को एकत्र हुए। उनका एकत्र होना था कि एकाएक यह ख़बर उड़ी कि गोरी सेना तोपख़ाने के साथ देशी पलटनों के हथियार छीनने आ रही है। इस ख़बर का उड़ना था कि जो सिपाही जहाँ था, अपनी-अपनी छावनी को दौड़ पड़ा। उनके पीछे-पीछे नगरवासी भी दौड़ आए। अब सिपाहियों ने विद्रोह कर दिया।

३री के घुड़सवारों ने पहलो की। उसके कई सौ सवार जेल-ख़ाने दौड़ गए। खिड़कियों के सीख़चे तोड़कर वे भीतर घुस गए, और अपने साथियों को बंधन-मुक्त कर दिया।

उधर छावनी का शोर-गुल सुनकर कैप्टन क्रेगी और लेफ़्टिनेंट मेलवाइल क्लार्क ने पहुँचकर अपनी सेना को सँभाल लिया, और परेड में लाकर खड़ा कर दिया। अन्य सेनाओं के सिपाही शोर-गुल करते हुए छावनी की परेड पर जमा हो रहे थे। इस बीच में दूसरे अफ़सर भी आ गए; और वे अपनी-अपनी सेना के सिपाहियों को समझाने-बुझाने लगे। सिपाही शांत हो रहे थे कि एकाएक एक सवार वहाँ आ पहुँचा, और उसने चिल्लाकर कहा कि गोरी सेना उन्हें निःशस्त्र करने को आ रही है। यह सुनकर २०वीं के सिपाही

अपनी बंदूक़ें लेने दौड़ पड़े। परंतु ११वीं के सैनिक हिच-किचाकर रह गए। उनके सेनापति कर्नल फ़िनेस उन्हें समझाने लगे। इतने में दूसरी रेजीमेंटों के कुछ सिपाहियों ने उन्हें गोली मार दी। वह गोलियों से छलनी होकर वहीं गिर गए। सिपाही-विद्रोह की पहली बलि कर्नल फ़िनिस ही हुए। अब क्या था। सिपाही बावले हो गए। जो भी ईसाई मिला, मार गिराया। वे छावनी के घरों को लूटने-फूँकने लगे। इस काम में शहर के बदमाशों ने उनका दिल खोलकर साथ दिया। मुसलमानों की अली-अली की आवाज़ से छावनी गूँज रही थी। जब सिपाही दिल भरकर मार-काट और लूट-फूँक चुके, तब वे एकत्र हुए, और परस्पर सलाह कर झटपट उन्होंने दिल्ली की राह ली। वे डर रहे थे कि कहीं गोरी सेना आकर उन पर आक्रमण न कर दे। फलतः सारे विद्रोही सैनिक दिल्ली चले गए। ११वीं को वहाँ पहुँचकर उन्होंने क़िले पर अधिकार कर लिया, और जो अँगरेज़ या ईसाई मिला, उसे मार डाला। यही नहीं, उन्होंने दिल्ली में अँगरेज़ों को ढूँढ़-ढूँढ़कर मारना शुरू कर दिया। उनके पहुँचते ही दिल्ली में भी विद्रोह हो गया। वहाँ जो देशी पलटनें थीं, वे पहले से ही इस साज़िश में शामिल थीं। मेरठ की सेना आ जाने और क़िले पर उसका अधिकार हो जाने पर वहाँ की पलटनें भी बिगड़ गईं, और अपने अफ़सरों को मारकर विद्रोहियों के साथ हो गईं। विद्रोही फ़ौजों ने बादशाह

बहादुरशाह को अपने हाथ में कर उन्हें विद्रोह का नेतृत्व प्रदान किया। बादशाह के आगे आ जाने से विद्रोह ने भयानक रूप धारण कर लिया।

मेरठ और दिल्ली की इन घटनाओं का पश्चिमोत्तर-प्रदेश पर बड़ा भयानक प्रभाव पड़ा। यहाँ की राजधानी आगरा थी। कालविन साहब लेफ्टिनेंट गवर्नर थे। भयंकर स्थिति देखकर वह आत्मरक्षा के लिये सावधान हुए। उन्होंने ग्वालियर और भरतपुर के राजाओं से मदद माँगी। वहाँ से मदद मिलने का आश्वासन पा जाने पर वह निश्चिंत-से हो गए।

एक तो गोरी सेनाएँ पर्याप्त संख्या में न थीं, दूसरे, वे स्थान-स्थान पर थीं। मेरठ में अवश्य उनका एक प्रबल सैन्य-दल था, परंतु वहाँ की गोरी सेना ने विद्रोहियों का सामना ही नहीं किया। देशी सेनाओं के विद्रोह करने के बाद १५ दिन तक गोरी सेनाएँ चुपचाप बैठी रहीं, अपनी किसी प्रकार की गति-विधि नहीं प्रकट की, और विद्रोही सेनाओं को अपने इच्छानुसार उपद्रव और मार-काट करते रहने दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि मेरठ और दिल्ली के बाद विद्रोह के अन्य स्थानों में फैल जाने का प्रोत्साहन मिला। १५ दिनों में सारे पश्चिमोत्तर-प्रदेश में ऐसा विद्रोह फैल गया कि अँगरेज़ों की सत्ता ही जाती रही। यह हाल देखकर विद्रोही सिपाहियों के साथ प्रांत के कतिपय ख़ानदानी रईस भी हो गए, और इससे वह विद्रोह एक प्रकार का राष्ट्रीय विद्रोह बन गया।

कलकत्ते में गवर्नर जनरल को तथा शिमला में प्रधान सेनापति को देशी सिपाहियों के विद्रोही भाव की यथासमय बराबर सूचना भेजी गई; पर उन दोनों प्रधान अधिकारियों ने उसकी ओर वैसा ध्यान ही नहीं दिया। उन्होंने यही समझा कि सिपाहियों का यह विद्रोह यथासमय दबा लिया जायगा। और तो और, मेरठ और दिल्ली के विद्रोह की ख़बर पाकर भी वे सचेत न हुए। वास्तव में उन्हें इसका गुमान ही न था कि सिपाहियों का विद्रोह इतना भीषण रूप धारण कर जायगा। इसी से वे उसके लिये तैयार भी न थे।

अंत में, १५ दिन बाद, प्रधान सेनापति ने सैन्य-संचालन का आदेश दिया। अँगरेज़ी सेनाएँ दिल्ली पर चढ़ दौड़ीं। परंतु जो होना था, सो हो गया था। विद्रोह ज़ोरों पर था, और अँगरेज़ जगह-जगह मारे जा रहे थे।

अवध की अवस्था और आत्मरक्षा की व्यवस्था

पश्चिमोत्तर-प्रदेश तथा दिल्ली में जो सिपाहियों का विद्रोह उठ खड़ा हुआ था, उसे देखते हुए अवध कैसे शांत रह सकता था? वहाँ की अवस्था तो विद्रोह के लिये और भी अनुकूल थी। कुल १५ महीने पहले वहाँ के बादशाह वाजिदअली शाह पद-च्युत किए गए थे, और उनके राज्य को कंपनी की सरकार ने अपने अधिकार में कर लिया था। इस बात से वहाँ के अनेक रईस और ताल्लुक़ेदार अँगरेज़ी सरकार से नाराज़ थे। नवाबी शासन के सारे उच्च राजकर्मचारी हटा दिए गए थे, तथा सारी फ़ौज भी तोड़ दी गई थी। ये सब लोग भी अँगरेज़ी अमलदारी से असंतुष्ट थे। शहर के महाजनों तथा दूकानदारों के चलते हुए व्यापार को भी नई अमलदारी में भारी धक्का पहुँचा था। ये लोग भी मन-ही-मन जल-भुन रहे थे।

परंतु इस अवस्था की ओर वहाँ के अँगरेज़ी अधिकारियों का ध्यान ही नहीं था। वे केवल सरकारी ख़ज़ाना भरने की धुन में थे। इसके लिये स्टांप चलाए गए। अर्ज़ीदावा

पर टिकट लग गया। भोजन-सामग्री, घर, घाट आदि पर तरह-तरह के कर लगा दिए गए। अफ़ीम, अन्न, नमक आदि के वेचने का ठेका दे दिया गया। और इन सबका महसूल कड़ाई के साथ वसूल होने लगा। इनमें अफ़ीम का कर तो लोगों को और भी अखर गया। फलतः इन सारी नई व्यवस्थाओं से लोगों में भीतर-ही-भीतर असंतोष का भाव बढ़ रहा था। इधर कार्तूसों की चर्बी की वात से देशी पलटनों के सिपाही असंतुष्ट थे ही। इसी समय लखनऊ में एक घटना भी हो गई, जिससे सिपाही और भी भड़क उठे। एप्रिल के प्रारंभ में एक दिन ४८वीं देशी पलटन के सर्जन डॉक्टर वेल्स अस्पताल की दवाइयों का भांडार देखने गए। उन्होंने एक वोतल की दवा वोतल मुँह से लगाकर पी ली, और शेष दवा से भरी वह वोतल जहाँ-की-तहाँ रख दी। जो देशी डॉक्टर उनके साथ उस समय था, उसने उनका वैसा करना सिपाहियों को वता दिया। हिंदू सिपाही पहले से विगड़े हुए थे ही, अव कहने लगे कि वे अस्पताल की दवा नहीं छुएँगे। जब इसकी खवर उस सेना के प्रधान कर्नल पायर को मिली, उन्होंने देशी अफ़सरों को वुलाया, और उनके सामने वह वोतल तोड़वा दी, साथ ही डॉक्टर वेल्स को उनके सामने ही खूव डाँटा भी। परंतु अपने कर्नल के इस कार्य से सिपाही संतुष्ट नहीं हुए, और उन्होंने अवसर पाने पर उस डॉक्टर का वँगला फूँक दिया। किसने यह काम

किया, इसका पता नहीं मिला, अतएव किसी को दंड नहीं दिया जा सका। हाँ, यह स्पष्ट था कि यह कार्य ४८वीं के ही सिपाहियों ने किया था।

इसके बाद पुलिस ने यह सूचना दी कि फ़ौज के कुछ देशी अफ़सर भूतपूर्व बादशाह के संबंधी रुकनुद्दौला और मुस्तफ़ाअली से षड्यंत्र कर रहे हैं। ऐसा समझा गया कि उन्होंने प्रस्ताव किया था कि यदि शाही घराने का कोई व्यक्ति उनका नेतृत्व करे, तो वे विद्रोह करने को तैयार हैं।

देशी फ़ौज का यह रंग-ढंग देखकर सर हेनरी लॉरेंस साव-धान हो गए, और उन्होंने अपने सैनिक साधनों को केंद्रीभूत करने का काम विशेष तत्परता के साथ शुरू कर दिया। उन्होंने देखा, यदि देशी पलटनें विद्रोह कर बैठेंगी, तो शहर में इधर-उधर ठहरे हुए अँगरेज़ संकट में पड़ जायँगे।

लखनऊ में सेना का विद्रोह

मई के प्रारंभ होते ही देशी पलटन के सिपाहियों का मनोभाव और भी चिंता-जनक हो उठा। ७वीं मई को ७वीं इर्रेगुलर देशी पलटन के सिपाहियों ने नए कार्तूस काम में लाने से साफ़ इनकार कर दिया। यह सेना मूसाबाग़ में रहती थी। सर हेनरी के आदेश से सेना के अफ़सरों ने उसे बहुत समझाया-बुझाया, पर सिपाहियों ने उनकी बात न मानी। यही नहीं. उन्होंने ४८वीं के सिपाहियों को भड़काने के लिये उन्हें एक चिट्ठी भेजी, जो अधिकारियों के हाथ लग गई। यह

देखकर सर हेनरी लॉरेंस ने उस सेना को निःशस्त्र करने का निश्चय किया। १०वीं मई की रात को ६ बजे वह गोरी पलटन, तोपख़ाना और रिसाला लेकर उस सेना की छावनी में गए। वह सेना परेड में जमा की गई, और ज्यों ही अँगरेज़ी तोपख़ाने के एक सर्जेंट ने अपनी तोप का पलीता सुलगाया, तोपें भरी जाने लगीं। यह हाल देखकर विद्रोही सेना के सिपाही भागने लगे। सातवें रिसाले का एक दल उन्हें रोकने के लिये आगे बढ़ा। परंतु सिपाही भाग गए। केवल १२० सिपाही अपनी जगह पर खड़े रह गए थे। सर हेनरी ने उनके पास जाकर हथियार रख देने की आज्ञा दी। उन्होंने तत्काल हथियार और पेटियाँ खोलकर रख दीं। इसके बाद उन्हें छावनी में जाने की आज्ञा दी गई। चौथी सेना के सिपाहियों और रिसाले के एक दल को वहाँ पहरे पर नियुक्त कर सर हेनरी लौट आए। दो बजे रात तक तोपख़ाना और सेना भी अपनी-अपनी छावनी में पहुँच गई। इस प्रकार सर हेनरी ने विद्रोह की पहली चिनगारी आसानी से बुझा तो दी, परंतु वह वास्तव में बुझी न थी।

उक्त घटना के बाद दो दिन तक उसकी जाँच होती रही, पर कोई फल न निकला। अतएव सेना के जिन लोगों पर अफ़सरों को संदेह हुआ, वे क़ैद कर लिए गए।

अब सर हेनरी रेज़ीडेंसी से मड़ियाँव की छावनी में उठ गए। वहाँ वह देशी सेना को शांत रखने के लिये तरह-तरह के

उपाय करने लगे। उन्होंने १३वीं के एक सिपाही तथा ४८वीं के एक सूबेदार को पुरस्कार देने के लिये १२वीं मई को एक दरबार किया। सिपाही ने नगर के दो आदमियों को पकड़वा दिया था, क्योंकि वे उसके पास छावनी में आए थे, और विद्रोह करने को प्रलोभन दे रहे थे। इस दरबार में मुल्की और जंगी, दोनों प्रकार के अधिकारी बुलाए गए थे। सेना के देशी अफ़सरों के बैठने के लिये कुरसियाँ दी गईं। दरबार में सर हेनरी ने एक भाषण किया। उसमें उन्होंने देशी अफ़सरों को लक्ष्य करके कहा कि अँगरेज़-सरकार ने तुम लोगों के साथ सदा माता-पिता-जैसा व्यवहार किया है। दिल्ली के मुसलमान शासकों ने हिंदुओं पर अत्याचार किए, और लाहौर के हिंदू शासकों ने मुसलमानों पर, पर अँगरेज़-सरकार ने दोनों के साथ एक-सा व्यवहार किया है। पिछले सौ वर्ष के इतिहास से तुम लोगों को शिक्षा लेनी चाहिए। उससे उन लोगों का झूठ प्रकट हो जायगा, जो यह कहते हैं कि अँगरेज़-सरकार तुम लोगों को जाति-भ्रष्ट करना चाहती है।

व्याख्यान के बाद लोगों को खिलअतें और पुरस्कार दिए गए। दरबार की समाप्ति पर अँगरेज़ और देशी अफ़सरों ने छोटी-छोटी मंडलियों में बँटकर परस्पर बातचीत की। अधिकांश देशी अफ़सरों ने राजभक्त होने की बात कही, और वे आज्ञाकारिता का भाव ही दिखलाते रहे। परंतु इस प्रदर्शन का सिपाहियों पर उलटा प्रभाव पड़ा। उन्होंने आपस की बातचीत

में यही कहा कि यह सब धूमधाम डर के कारण की गई है। और सिपाही भड़के ही रहे। उन्हें १३वीं मई को मेरठ की देशी सेनाओं के विद्रोह कर देने की भी खबर मिल गई। १४वीं मई को इस बात की भी खबर आ गई कि दिल्ली पर विद्रोही सेनाओं ने अधिकार कर लिया है, और अधिकार-च्युत मुग़ल बादशाह बहादुरशाह ने उनका नेतृत्व ग्रहण किया है। इन खबरों को पाकर सर हेनरी और उनके सहकारी बहुत चिंतित हुए, और अब उन्होंने ७वीं पलटन के विद्रोह के मामले को तत्काल तय कर देने का निश्चय किया। विद्रोह के ४० मुखिया तो क़ैद कर दिए गए। शेष सेना की चौथी सेना के साथ परेड हुई। सर हेनरी ने उनके आगे भाषण किया, जिसमें उन्होंने सेना के देशी अफ़सरों में से अधिकांश को बरखास्त कर देने तथा सिपाहियों को निःशस्त्र रहकर काम करने की बात कही, जिन्होंने अच्छा काम किया था, उनकी पदोन्नति की।

अब सर हेनरी का ध्यान अपनी ओर गया। उन्होंने देखा, विद्रोह हो जाने पर भारी संकट का सामना करना पड़ेगा। उस समय लखनऊ में अँगरेज़ अधिकारी तथा सरकारी सेना कहाँ कितनी थी, इसका यहाँ जान लेना ज़रूरी है।

चीफ़ कमिश्नर रेज़ीडेंसी-भवन में रहते थे। यह भवन गोमती के दक्षिणी तट के समीप, लोहे के पुल से एक मील के अंतर पर, था। इसके आस-पास और भी कई इमारतें थीं। इनमें सिविल सर्जन, अर्थ-कमिश्नर, न्याय-कमिश्नर आदि

रहते थे, तथा उनके दफ़्तर थे। यहाँ खज़ाना, अस्पताल और ठगों का क़ैदख़ाना था। खज़ाने और रेज़ीडेंसी की रक्षा के लिये देशी पलटन की एक कंपनी यहाँ तैनात रहती थी।

रेज़ीडेंसी से पूर्व डेढ़ मील की दूरी पर 'चौपारा अस्तबल' में गोरी पलटन रहती थी। इसके अफ़सर अस्तबल के पास ही, इधर-उधर, भिन्न-भिन्न मकानों में, रहते थे, तथा शेष अफ़सर छतरमंज़िल और खुर्शेद-मंज़िल में रहते थे। खुर्शेद-मंज़िल में उनका भोजन-गृह भी था। क़दमरसूल नाम की इमारत में मेगज़ीन थी। इसकी रक्षा के लिये देशी सिपाहियों की एक गारद रहती थी। इसके पड़ोस में जंगी पुलिस की ३री रेजीमेंट रहती थी। इसी के जवान नगर-रक्षा के लिये नगर के भिन्न-भिन्न भागों में तैनात किए जाते थे। गोरी सेना के मेस के पास ताराकोठी (वेधशाला) नाम की एक इमारत थी। इसमें सरकारी कचहरियाँ लगती थीं। इसके आस-पास के मकानों में कमिश्नर, डिप्टी-कमिश्नर, नहर-सुपरिंटेंडेंट-जैसे अधिकारी रहते थे। उधर रेज़ीडेंसी की दूसरी ओर एक मील की दूरी पर दौलतख़ाना और शीशमहल नाम की इमारतें थीं। अवध इर्रेगुलर फ़ोर्स-नामक देशी सेना के सेनापति दौलतख़ाना में रहते थे, और शीशमहल में मेगज़ीन थी। शीशमहल में बहुत-से अस्त्र-शस्त्र तथा शाही तोपें भी रक्खी थीं। इस जगह से दो मील और आगे, मूसाबाग़ के समीप, 'अवध-इर्रेगुलर-इन्फ़ेन्टरी' की चौथी देशी रेजीमेंट रहती थी। इस स्थान से

एक मील और आगे उक्त सेना की सातवीं रेजीमेंट रहती थी। इन दोनों रेजीमेंटों के अफ़सर मूसावाग़ में रहते थे।

अँगरेज़ी सेना की छावनी गोमती के उत्तर, अपनी पुरानी जगह मड़ियाँव में, थी। यह जगह रेज़ीडेंसी से ३ मील दूर, गोमती के पार, थी। यहाँ सेना के अफ़सर फूस के बँगलों में और पलटन के सिपाही अपने-अपने परेड-मैदान के पास, फूस की झोपड़ियों में, रहते थे। नगर से जाने पर छावनी का जो फाटक मिलता था, उसकी दाहनी ओर गोरों के तोपखाने की कंपनी के सैनिक रहते थे। इनके पास ही एक देशी तोपख़ाना भी था। उधर देशी पलटन की छावनी के आगे दो देशी तोपख़ाने और थे। इनके और आगे, डेढ़ मील पर, घुड़दौड़ का मैदान था। इस मैदान के आगे, मुदकीपुर में, रिसाले की छावनी थी, जिसमें देशी रिसाले की ७वीं रेजीमेंट रहती थी। इसके सिवा गोमती के बाएँ किनारे, सिकंदरबाग़ के सामने, चक्कर-कोठी में अवध-इर्रेगुलर-कवेलरी (रिसाले) की दूसरी रेजीमेंट रहती थी। मड़ियाँव की छावनी में अँगरेज़ों का घोड़ों का तोपख़ाना, बैलों का देशी तोपख़ाना, घोड़ों का देशी तोपख़ाना और देशी पैदल-सेना की ३री रेजीमेंट थी। १३वीं, ४८वीं और ७१वीं पैदल सेनाएँ भी रहती थीं।

लखनऊ में अँगरेज़ अधिकारी और अँगरेज़ी-सेनाएँ इस प्रकार अवस्थान करती थीं। और सैनिक दृष्टि से यह सारी व्यवस्था दोष-पूर्ण थी। इसी को व्यवस्थित करने का

उपाय सर हेनरी करने लगे। उन्होंने अँगरेज़ी सेना के और १२० सैनिक रेज़ीडेंसी में बुला लिए। इनके साथ सेना के रोगी तथा स्त्रियाँ भी वहीं चली आईं। इसके सिवा उन्होंने चार तोपें भी मँगवाकर रेज़ीडेंसी में लगवा दीं। इस व्यवस्था से रेज़ीडेंसी का खज़ाना, जिसमें नोटों के सिवा ३० लाख रुपया भी था, अधिक सुरक्षित हो गया। यह कार्य उन्होंने १६वीं की शाम को ही कर डाला, यद्यपि इसके लिये १८वीं मई नियत की थी। १७वीं को सवेरे, रविवार को ३२वीं गोरी पलटन गोमती-पार छावनी में भेज दी गई। यह सेना वहाँ गोरों के तोपख़ाने के पास ठहराई गई। चौपीरा बारक के ख़ाली हो जाने से उक्त भूभाग अरक्षित हो गया। अतएव जो मुल्की अधिकारी वहाँ रहते थे, वे भी रेज़ीडेंसी में चले गए। इस प्रकार आत्मरक्षा के लिये जितनी व्यवस्था जल्दी-जल्दी हो सकती थी, वह सब यथासंभव की गई।

सर हेनरी पहले से ही एक ऐसे सुदृढ़ स्थान की खोज में थे, जिसमें फ़ौजी सामान सुरक्षित रूप से रक्खा जा सके। इसके लिये उन्होंने मच्छीभवन को चुना था। परंतु उसमें विशेष फेर-फार करने की ज़रूरत थी, और वह सब उतनी जल्दी हो नहीं सकता था, अतएव वह विचार छोड़ देना पड़ा। परंतु बाद को, जब कोई और उपयुक्त स्थान न मिला, उन्होंने मच्छीभवन को ही पसंद किया। १७वीं

मई, १८५७ को उसकी मरम्मत की जाने लगी, तथा गोरों और देशियों की एक फ़ौज वहाँ लाकर ठहरा दी गई। इसके सिवा गोला-बारूद का भांडार भी मिर्ज़ा खुर्रम-बख़्त बहादुर को ४० हज़ार रुपया देकर मच्छीभवन लिया गया था। अब उसे क़िले का रूप दिया जाने लगा। उसके आस-पास के सब मकान गिरा दिए गए, और जगह-जगह तोपें लगा दी गईं। दो बड़ी तोपें इस क़िले के नीचे, गोमती के पुल पर भी, लगाई गईं। लाखों रुपए का अन्न और लड़ाई का सामान खरीदकर, मच्छीभवन में खत्ते खोदकर, रक्खा गया।

रेज़ीडेंसी की कोठी के बेलीगारद की ओर जितनी कोठियाँ थीं, सबके इर्द-गिर्द धुस बाँधकर उसे क़िले का रूप दिया गया, और हर तरफ़ तोपें लगवा दी गईं, और दूर तक सामने जितने मकान पड़ते थे, सब गिरा दिए गए, तथा पेड़ भी काट डाले गए। इस प्रकार सब कोठियाँ सुरक्षित की गईं। ६०२ फ़ौजी गोरे, ४०२ मुल्की अँगरेज़ अफ़सर और क़रीब-क़रीब इतने ही स्त्री-बच्चे रेज़ीडेंसी में आ गए थे। ये सब सशस्त्र कर दिए गए, तथा इनकी क़वायद-परेड होने लगी। यह सारी व्यवस्था इसीलिये की गई कि फ़ौज के विद्रोह करने पर आत्मरक्षा की जा सके।

परंतु अवध अभी शांत था। इतना गड़बड़ हो जाने पर भी वहाँ अभी तक विद्रोह नहीं हुआ था। हाँ, सिपाही

भीतर-ही-भीतर भड़क रहे थे, उनके विद्रोह करने की पूरी आशंका थी।

मई के अंतिम दिनों में सर हेनरी ने नगर के रईसों को बुलाकर उनसे बातचीत की, और कहा कि आप लोग अपनी रक्षा के लिये अस्त्र-शस्त्र एकत्र कर लें, क्योंकि देशी सेना के विद्रोह करने का डर है। यह सुनकर बादशाह वाजिदअली के निकट-संबंधी मुहसिनुद्दौला और भूतपूर्व दीवान राजा बालकृष्ण तो घबरा गए, केवल मुनौवरुद्दौला ने अपनी रक्षा कर लेने का आश्वासन दिया। अर्थ-कमिश्नर मिस्टर गुबिंस के पास नगर के कुछ रईस प्रायः आया करते थे। अब वे भी कहने लगे कि बलवा हो जाने की पूरी आशंका है। और, उस दशा में उन सबके लूट लिए जाने का डर है। ये लोग थे नवाब अहमदअलीख़ाँ मुनौवरुद्दौला (हकीम मेहँदी के भतीजे), नवाब मिर्ज़ा हुसेनख़ाँ इकरामुद्दौला (वाजिदअली शाह के पितिया ससुर), मुहम्मद इब्राहीम शर्फ़ुद्दौला (भूतपूर्व शाह के वज़ीर), मिर्ज़ा हैदर (बहू बेगम के नाती), नवाब मुम्ताज़ुद्दौला (शाही घराने के एक संबंधी), शर्फ़ुद्दौला ग़ुलाम रज़ा (भूतपूर्व शाही ठेकेदार) तथा नगर के कई एक महाजन।

सर हेनरी अभी तक अवध के केवल सर्वोच्च मुल्की ही अधिकारी थे, देशी पल्टनों का रंग-ढंग देखकर उन्होंने गवर्नर जनरल से निवेदन किया कि उन्हें फ़ौजी अधिकार भी दिए जायँ।

सरकार ने उनके परामर्श को मान लिया। और, वह २० मई को अवध की सेनाओं के प्रधान सेनापति भी बना दिए गए।

इस समय तार-पर-तार आ रहे थे। अलीगढ़, बुलंदशहर की देशी पल्टनों के भी बलवा कर देने की ख़बर सर हेनरी को आगरे से मिल चुकी थी। कानपुर के गड़बड़ के भी समाचार उन्हें मिल रहे थे। यहाँ तक कि २१ मई की रात को कानपुर से सहायता की माँग आई, और सर हेनरी ने उसी समय सेना की एक टुकड़ी कानपुर भेज दी। अभी तक लखनऊ एवं अवध के अन्य ज़िलों में पूर्ण शांति थी। २४वीं मई को ईद थी, और इसकी पूरी आशंका थी कि इस अवसर पर देशी पल्टनें अवश्य विद्रोह करेंगी। परंतु ईद शांति से बीत गई, तो भी दुआबे के गोलमाल का अवध में गंगा के किनारे के ज़िलों पर बुरा प्रभाव पड़ रहा था। ज़िलों के अधिकारियों की ऐसी सूचना पाकर सर हेनरी ने ग्रैंड ट्रंक रोड को सुरक्षित रखने के लिये २६ मई को एक सेना-दल भेजा।

२५वीं तक अवध में किसी तरह का कोई भी गोलमाल न था, परंतु अब कुछ ताल्लुक़ेदार सिर उठाने लगे। नए बंदोबस्त के अनुसार जिनके जो गाँव छिन गए थे, वे उन्हें अपने अधिकार में करने लगे। इनमें मलिहाबाद के पठानों ने अधिक सरकशी की; परंतु सेना भेजकर वे जहाँ-के-तहाँ दबा दिए गए।

२७वीं को सर हेनरी ने एक सेना-दल गंगा के किनारे के

ज़िलों में प्रदर्शन करने तथा फ़तेहगढ़ में पेंशन बाँटने के लिये भेजा। जब यह सेना मल्लावाँ पहुँची, तब इसने यह सुनकर कि लखनऊ में बलवा हो गया है, आगे बढ़ने से इनकार कर दिया, और दिल्ली जाने के लिये मेहँदीघाट की राह ली। घाट पर पहुँचने पर अफ़सरों ने सेना को कानपुर चलने को राज़ी कर लिया, परंतु ५० सिपाही नहीं राज़ी हुए, वे दिल्ली चले गए। इस सेना ने चौबेपुर पहुँच-कर विद्रोह कर दिया, और अपने अफ़सरों को मारकर कानपुर के विद्रोहियों से जा मिली। इस घटना का भी बुरा प्रभाव पड़ा। परंतु सर हेनरी ज़रा भी विचलित नहीं हुए, वह पहले की ही भाँति अपने कर्तव्य-पालन में संलग्न रहे।

लखनऊ में यद्यपि अभी तक कोई घटना घटित न हुई थी, तथापि छावनी के बँगलों में तीर चलाकर आग लगाने के प्रयत्न मई प्रारंभ होते ही शुरू हो गए थे। परंतु सफलता नहीं मिली। ऐसे इश्तिहार भी चिपके हुए मिले, जिनमें हिंदुओं और मुसलमानों से अपील की गई थी कि वे विद्रोह करके 'फ़िरंगियों' को मार डालें। २५वीं मई को तो पूरी आशंका थी कि लखनऊ की भी फ़ौजें उस दिन विद्रोह करेंगी, अतएव छावनी से स्त्री-बच्चे, सब रेज़ीडेंसी में रहने को भेज दिए गए।

लखनऊ में विद्रोह का प्रारंभ

अँगरेज़ अफ़सरों को इस बात की पूरी आशंका थी कि ३०वीं मई राज़ी-ख़ुशी न बीतेगी। दिन तो शांति से बीत गया, पर रात में ज्यों ही ६ बजे तोप दगी, छावनी में देशी सिपाही गोलियाँ दागने लगे। जिस बात की आशंका गत १५-२० दिन से की जाती थी, वह विद्रोह अब शुरू हो गया। अब क्या था, विद्रोही सैनिक बाढ़-पर-बाढ़ दागने लगे। लगभग २ बजे अर्थात् ५ घंटे तक छावनी में बराबर गोली दगती रही। सबसे पहले ७१वीं के सिपाही अपनी बारकों से निकलकर गोलियाँ दागने लगे। इनमें से ४० सिपाहियों ने बढ़कर 'मेस' पर धावा कर दिया। उनकी मदद के लिये ७१वें रिसाले के कुछ सवार भी आ गए। परंतु अँगरेज़ अफ़सर पहले से ही सावधान थे। पहली गोली के दगते ही सर हेनरी सब अँगरेज़ अफ़सरों को अपने साथ लेकर गोरों की बारक में चले गए। वहाँ ३२वीं के ३०० गोरे और ६ तोपें थीं। उन्होंने शहर को जानेवाली सड़क पर २ तोपें लगवा दीं, और गोरों को नियुक्त कर दिया, ताकि विद्रोही शहर की ओर जाने से रोके जायँ। ब्रिगेडियर हैंडस्कोब भी गोरों की बारक में आ गए, परंतु वह विद्रोहियों को समझाने

के लिये उनकी परेड की ओर गए। जब वह उनके अधिक समीप पहुँच गए, तब उनके गोली लग गई, और वह घोड़े से गिरकर तत्काल मर गए। इससे ७१वीं के सिपाहियों का हौसला बढ़ गया। उन्होंने अब ३२वीं के गोरों को अपना लक्ष्य बनाया, और उन पर गोलियाँ चलाने लगे। यह देखकर सर हेनरी ने उन पर तोप दागने का हुक्म दिया। तीन-चार गोलों के दगते ही विद्रोही भागकर अपनी छावनी में घुस गए।

सिपाहियों के गोली दागना शुरू करते ही उनके अँगरेज़ अफ़सर उन्हें शांत करने के लिये अपने-अपने मेसों से अपनी-अपनी सेना की परेड की ओर दौड़े गए। उन्होंने उस विकट समय में असीम साहस का परिचय दिया। वहाँ पहुँचने पर उन्होंने देखा, कई रेजीमेंटें खड़ी हुई गोलियाँ दाग रही हैं। उनके अफ़सरों ने उन्हें मना किया, पर सिपाही गोली दागते रहे। कुछ अफ़सरों को उनके सिपाहियों ने वहाँ से लौट जाने को मजबूर किया, और वे सिपाहियों का उग्र मनोभाव देखकर लौट गए। परंतु कैप्टेन स्ट्रेंजवेज ७१वीं के कुछ सिपाही अपने साथ लिवा लाए, और उन्हें ३२वीं के पास ले जाकर खड़ा कर दिया। मेजर ब्रूरी उधर परेड पर १३वीं के एक बड़े भाग को रोके खड़े रहे। परंतु उसमें से भी बहुत-से सिपाही निकल खड़े हुए, और उन्होंने मेगज़ीन पर धावा कर दिया। यह देखकर मेजर ब्रूरी शेष सिपाहियों

को अपने साथ लेकर गोरी बारक में चले आए। उनके साथ १०० सिपाही थे। उन्हें उन्होंने ३२वीं के पास ले जाकर खड़ा कर दिया। कर्नल पायर ने तो ४८वीं के अधिकतर सिपाहियों को अपने वश में कर लिया था, परंतु उन्हें यह भी मालूम हो गया कि वे विद्रोहियों पर गोली नहीं चलाएँगे। वे गोरी बारक की ओर भी जाने को राज़ी न हुए। इस पर मैगज़ीन खोल-कर उन्हें गोली-बारूद दी जाने लगी। उन्होंने लेफ़्टिनेंट औसले को डंडे से मारा, और मनमाने ढंग से गोली-बारूद लेने लगे। कर्नल पायर ने उन्हें रेज़ीडेंसी चलने को कहा। वे उनकी आज्ञा के अनुसार रेज़ीडेंसी को चले। परंतु लोहे के पुल तक पहुँचते-पहुँचते उनके साथ केवल ५० सिपाही रह गए। उन्होंने उन्हें भी ३२वीं के पास लाकर खड़ा कर दिया।

मुदकीपुर में ७वें रिसाले के १५० सवार थे। वे तुरंत तैयार किए गए। पंक्तिबद्ध होते ही ४० सवार मड़ियाँव की छावनी की ओर भाग गए। शेष सवार रात-भर अपनी छावनी में पहरा देते रहे, और सवेरा होने के पहले ही वे भी ३२वीं सेना के पास लाकर खड़े कर दिए गए। ३२वीं को कर्नल इँगलिश ने ज़मीन पर लिटा दिया। वह रात-भर अपनी जगह पर चुपचाप पड़ी रही।

लेफ़्टिनेंट हार्डिंज अपने रिसाले के साथ छावनी की सड़क पर नियुक्त थे, पर वह विद्रोहियों का उपद्रव नहीं रोक सके। विद्रोही सिपाही और अफ़सरों के खानगी नौकर बँगलों को

मनमाने ढंग से लूटते-फूँकते रहे। उन्होंने बाज़ार को भी लूटा-फूँका। छावनी में रेज़ीडेंसी का बँगला तथा उसके पास के कुछ बँगले ही आग लगाए जाने से बच सके।

३१वीं को सवेरे ७वाँ रिसाला मुदकीपुर की छावनी को भेजा गया। वहाँ विद्रोही सैनिक जमा थे। रिसाला आता देख एक विद्रोही सवार ने आगे बढ़कर तलवार से इशारा किया। इस पर ४० सवार रिसाले की पंक्ति से भागकर विद्रोहियों में जा मिले। वहाँ लगभग एक हज़ार विद्रोही एकत्र थे। अब सर हेनरी ४ तोपें, कुछ गोरे, कुछ देशी सिपाही और हार्डिंज का रिसाला अपने साथ लेकर मुदकीपुर को रवाना हुए। एक मील की दूरी से विद्रोहियों पर गोला-बारी शुरू की गई। कुछ ही गोलों के चलाए जाने पर विद्रोही भाग खड़े हुए। तोपें साथ रखते हुए सर हेनरी ने उनका पीछा किया। उन्होंने हुक्म दिया कि जो जितने विद्रोही मारेगा या पकड़ लावेगा, उसे आदमी पीछे १००) इनाम दिया जायगा। उनकी अनुमति से सवारों ने धावा बोल दिया। कुछ विद्रोही पकड़े गए तथा अनेक मारे गए। इस प्रकार सर हेनरी ने विद्रोहियों को मारकर भगा दिया।

विद्रोहियों को भगा आने के बाद सर हेनरी जब लौटकर छावनी आए, तब उन्होंने शहर की परिस्थिति के संबंध में अफ़सरों से परामर्श किया। इसके बाद उन्होंने सेना की नई व्यवस्था की। जो देशी पल्टनें तथा रिसाले के सवार

अभी तक राजभक्त बने हुए थे, उन्हें उन्होंने छावनी में, ३२वीं गोरी पल्टन और तोपों के पास, रहने का हुक्म दिया। कर्नल हल्फ़ोर्ड पुराने आदमी थे, इसलिये छावनी की सेनाओं के प्रधान सेनापति बनाए गए। रेज़ीडेंसी की सेनाओं के प्रधान सेनापति कर्नल इँगलिश बनाए गए। छावनी की रेज़ीडेंसी के बँगले की रक्षा का भार हार्डिंज के रिसाले को सौंपा गया। यह व्यवस्था करके सर हेनरी लॉरेंस रेज़ीडेंसी चले गए।

विद्रोही सिपाही और सवार छावनी से भागकर मल्लावाँ होते हुए दिल्ली चले गए। इससे सर हेनरी की चिंता कुछ कम हुई। परंतु परिस्थिति भयानक रूप से बिगड़ गई थी, इसमें संदेह करने की कुछ भी गुंजाइश न थी। वह डर रहे थे कि यह विप्लव यहीं न समाप्त हो जायगा, बल्कि इसका असर प्रांत की अन्य छावनियों पर अवश्य पड़ेगा तथा शहर भी बचा न रहेगा।

३०वीं की रात को, जब छावनी में विद्रोह मचा हुआ था, इधर शहर में भी ७१वीं देशी पल्टन की एक कंपनी ने विद्रोह का भाव दिखाया। उस कंपनी पर पहले से ही संदेह था। अतएव मच्छीभवन से हटाकर वह शहर में तैनात कर दी गई। विद्रोह हो जाने पर वह उसी रात को शहर के अपने स्थान से रेज़ीडेंसी में लाई गई, और तोपों के पास ले जाकर उससे हथियार रख देने को कहा गया, परंतु

सिपाहियों ने अपने हथियार नहीं दिए। परिस्थिति देखकर अधिकारी भी चुप रहे।

परंतु ताराकोठी की गारद के सिपाही तो इनसे भी आगे बढ़ गए। वे संख्या में ५० थे। उन्होंने अपने साथ के सवारों को भी उभाड़ा कि आओ, ताराकोठी का ख़ज़ाना लूट लें। सवारों ने साथ देने से इनकार किया, तो भी वे बड़ी मुश्किल से शांत किए जा सके।

यह सारा गोलमाल नगरवासियों से छिपा न था। विद्रोह हो जाने पर, दूसरे दिन सवेरे, शहर के बदमाश एकत्र हुए, और उनका गिरोह, जिसकी संख्या पाँच-छ हज़ार के लगभग रही होगी, गोमती को पार कर छावनी की ओर चला। कदाचित् उन बदमाशों की विद्रोही देशी फ़ौज के नेताओं से पहले से ही साँठ-गाँठ थी। परंतु सर हेनरी ने उन पर तत्काल आक्रमण कर उन्हें मार भगाया। यह देखकर कि विद्रोही सेना भाग खड़ी हुई है, वे भी शहर लौट आए, और शहर में उपद्रव तथा लूट-मार करने लगे। उन्होंने मशकगंज में 'निशान महम्मदी' खड़ा किया, और दोपहर तक ऐशबाग़ में फिर एकत्र हुए। पर उनमें २०० के लगभग सिपाही जान पड़ते थे, क्योंकि उनके पास बंदूक़ें थीं। बाक़ी में से कुछ के पास तलवारें या भाले थे, शेष लोग लाठियाँ या बाँस लिए थे। ये सब लोग शोर-गुल मचाते, बड़े इमामबाड़े की दीवार के नीचे से, गऊघाट की ओर चले। बाज़ारों में जिस दूकान

लखनऊ में नजरबंद थे, मच्छीभवन में लाकर रक्खे गए। इस कारखाई का शहर पर अच्छा असर पड़ा, और शहर में फिर कोई उपद्रव नहीं हुआ। परंतु विद्रोह का भाव तो वृद्धि पर था ही। इधर अँगरेजी सरकार ने भी वहुत कड़ा रुख़ ले लिया था।

अवध की भिन्न-भिन्न छावनियों में विद्रोह

जब इस बात की ख़बर प्रांत के ज़िलों की छावनियों में पहुँची कि लखनऊ में देशी पल्टनों ने विद्रोह कर दिया है, और उनके सिपाही पकड़-पकड़कर फाँसी पर लटकाए जा रहे हैं, तब वहाँ की देशी पल्टनों के सिपाही और भी उत्तेजित हो उठे। ज़िलों में सबसे पहले खैराबाद-कमिश्नरी के सीता-पुर-ज़िले की छावनी में विद्रोह हुआ। ३ जून को सवेरे ४१वीं रेजीमेंट की छावनी में यह ख़बर उड़ी कि १०वीं रेजीमेंट सरकारी ख़ज़ाना लूट रही है। यह सुनकर सेनापति कर्नल बर्च दो कंपनियों को लेकर ख़ज़ाने को गए। पर वहाँ कोई गड़बड़ न था। जब वह लौटने लगे, तो पहरेदारों में से एक सिपाही ने बढ़कर उन्हें गोली मार दी, जो उनकी पीठ में लगी, और वह अपने घोड़े से गिर पड़े। इसके बाद लेफ़्टिनेंट स्माली और सर्जेंट मेजर भी गोली से मारे गए। एडजूटेंट ग्रेव्ज़ को भी गोली मारी गई, पर वह घायल होकर भाग निकले। छावनी के इस गोलमाल का हाल जब कमिश्नर मिस्टर क्रिश्चियन को मिला, तो वह अपनी पुलिस गारद

के पास गए। उन्हें उस पर पूरा विश्वास था। परंतु गारद के सिपाहियों ने जब उन्हें आते देखा, तो गोली चला दी। यह देखकर वह जान लेकर भागे, और अपने बँगले में जा घुसे। वहाँ जो अँगरेज़ स्त्री-पुरुष मौजूद थे, उनसे कहा, विद्रोह हो गया है, अब भागकर अपनी-अपनी जान बचाओ। इस पर सब लोग नदी की ओर भागे। उधर विद्रोही सिपाहियों ने गोली चलाते हुए उनका पीछा किया। कुछ तो नदी के किनारे पहुँचने के पहले ही मारे गए, कुछ नदी पार करते समय मारे गए, और कुछ उस पार पहुँच जाने पर मारे गए। केवल सर मांटस्टुअर्ट जैक्सन और उनकी दो बहनें तथा सोफ़ी क्रिश्चियन मारे जाने से बच सके। सोफ़ी क्रिश्चियन को लेफ़्टिनेंट जी० एच्० बार्नेस और सर्जेंट मेजर मार्टन ने बचाया। ये सातो वहाँ से भागकर मिठौली पहुँचे, और राजा लोनेसिंह के क़िले में आश्रय लिया।

सारी छावनी में विद्रोह फैल गया। ६वीं रेजीमेंट के सेनापति कैप्टेन गोवान और उनकी पत्नी, उनके सहायक लेफ़्टिनेंट ग्रीन तथा असिस्टेंट सर्जन हिल, सब-के-सब मारे गए। केवल सहायक सेनापति की पत्नी श्रीमती ग्रीन किसी तरह भागकर अपनी जान बचा सकीं। १०वीं रेजीमेंट के सेनापति कैप्टेन डोरिन, उनके सहायक लेफ़्टिनेंट स्नेल तथा स्नेल की पत्नी और उनका बच्चा, ये चारो जान से मारे गए। सेनापति की पत्नी और एडजूटेंट लेफ़्टिनेंट बार्नेस किसी तरह जान बचाकर भाग

निकले। जंगी पुलिस के सेनापति कैप्टेन जॉन हियरसे भी भाग निकले। छावनी में जो कुछ अँगरेज़ स्त्री-पुरुष मारे जाने से बच गए थे, वे भागकर पास के झाड़-झंखाड़ों में छिप रहे। विद्रोही सिपाहियों ने यद्यपि उन्हें खोज लिया, किंतु कैप्टेन हियरसे के कारण सूबेदार माधवसिंह मिश्र और सूबेदार रघुनाथसिंह ने उन सबको बचा लिया। कैप्टेन हियरसे के साथ मिस जैक्सन, मिसेज़ ग्रीन, मिसेज़ राजर्स, उनका पुत्र और सर्जेंट मेजर राजर्स आदि थे। सूबेदार माधवसिंह मिश्र अपने १५ आदमियों के साथ उन सबको लेकर ओयल तक पहुँचा आए। वहाँ से चलकर उन लोगों ने धौरहरा के राजा के मुठियारी के क़िले में शरण ली।

४१वीं के लगभग ३० सिपाहियों ने भी कुछ अँगरेज़ों को मारे जाने से बचाया। इन्हें लेकर वे लखनऊ आए, और रेज़ीडेंसी में राज़ी-ख़ुशी पहुँचा दिया। इसके बाद एक-एक, दो-दो करके और भी कुछ अँगरेज़ सीतापुर से भागकर राज़ी-ख़ुशी लखनऊ पहुँच गए।

सीतापुर के विद्रोह में कुल २४ अँगरेज़ स्त्री-बच्चों-सहित जान से मारे गए। यहाँ की छावनी में ४१वीं पल्टन, अवध इर्रेगुलर की ६वीं और १०वीं रेजीमेंट तथा जंगी पुलिस की २री रेजीमेंट आदि फ़ौजें थीं। इन सबने विद्रोह कर दिया।

खैराबाद-कमिश्नरी के मुहम्मदी-ज़िले में ५वीं जून को वहाँ के अँगरेज़ बाल-बच्चे-सहित मार डाले गए। उनमें केवल दो

व्यक्ति बच सके। बात यह हुई कि शाहजहाँपुर की २८वीं देशी सेना ने अपने आस-पास की देखादेखी विद्रोह और अपने अँगरेज़ अफ़सरों का वध किया। वहाँ से १४ पुरुष और ८ स्त्रियाँ तथा ४ बच्चे अपनी जान बचाकर १ली जून को मुहम्मदी भाग आए। तीन अँगरेज़ अफ़सर पवायाँ के राजा के यहाँ गए। पर राजा साहब ने अपने यहाँ उन्हें नहीं रहने दिया, अतएव वे भी मुहम्मदी चले आए। इन सबके आ जाने से मुहम्मदी की सेना के आदमी भी विद्रोह का भाव दिखाने लगे। ४ जून को सीतापुर से ५० सिपाही शाहजहाँपुर के उन अँगरेज़ों को लिवा जाने को आए। इन लोगों ने आकर कहा कि हमारी सेना के आदमी लखनऊ में मार डाले गए हैं, अतएव हम उनका बदला लेंगे। यह रंग-ढंग देखकर अँगरेज़ अधिकारियों ने फ़ौजियों को समझाया-बुझाया। अंत में वे राज़ी हो गए, और शपथ-पूर्वक कहा कि हम डिप्टी कमिश्नर और उनके सहकारी को सीतापुर पहुँचा देंगे। साथ ही अन्य अँगरेज़ों को भी राज़ी-ख़ुशी चले जाने देंगे।

देशी सैनिकों ने वहाँ के ख़ज़ाने का सारा रुपया, जो एक लाख दस हज़ार के लगभग था, अपने हाथ में कर लिया। क़ैदियों को छोड़ दिया। यह सब हो जाने पर, ५ जून को, संध्या-समय साढ़े पाँच बजे अँगरेज़ मुहम्मदी से निकले। साढ़े दस बजे के लगभग वे बरबर पहुँचे। दूसरे दिन सवेरे वे वहाँ

से औरंगाबाद को रवाना हुए। चार मील जाने के बाद देशी फ़ौजी ठहर गए, और उनमें से एक ने अँगरेज़ों से कहा कि तुम्हें जहाँ जाना हो, जाओ। इस पर अँगरेज़ आगे बढ़े। कुछ दूर जाने के बाद फ़ौजियों के एक दल ने उन्हें आ घेरा। औरंगाबाद एक मील रह गया था। सिपाहियों ने गोलियाँ चलानी शुरू कर दीं। इस पर सब अँगरेज़ स्त्री-पुरुप एक वृक्ष के नीचे जाकर एकत्र हो गए। लगभग दस मिनट के भीतर सब-के-सब अँगरेज़ स्त्री-पुरुप बच्चों-सहित मार डाले गए। केवल मुहम्मदी के सहायक डिप्टी-कमिश्नर कैप्टेन पी० ओर को उन्होंने नहीं मारा, उन्हें मिठौली के राजा लोनेसिंह को सौंप दिया। उनके सिवा एक लड़का भी बच गया था।

अंत में ४१वीं और १०वीं ने ख़ज़ाने का अधितर रुपया अपने क़ब्ज़े में किया, और शहर तथा छावनी को लूट लिया। ४१वीं और १०वीं तो गंगा पार कर फ़तेहगढ़ चली गईं, उधर ६वीं और जंगी पुलिस सीतापुर छोड़कर महमूदाबाद चली गईं, जहाँ के ताल्लुक़ेदार राजा नवावअली ने उनकी सहायता करने का वचन दिया। परंतु जून के अंत में वे वहाँ से नवावगंज-बाराबंकी चली गईं।

ख़ैराबाद-कमिश्नरी का तीसरा ज़िला मल्लावाँ था। यहाँ के डिप्टी-कमिश्नर मिस्टर डब्ल्यू० सी० कैपर थे। इनकी रक्षा के लिये ४१वीं और ४थी के सिपाहियों का एक दल वहाँ

था। सीतापुर के विद्रोह के बाद जब उन्होंने अपने सिपाहियों का मनोभाव बदला हुआ देखा, तो वह लखनऊ रवाना हो गए, और सही-सलामत पहुँच गए।

बहराइच की कमिश्नरी में बहराइच, गोंडा और मल्लापुर, ये तीन ज़िले थे। यहाँ के कमिश्नर मिस्टर सी० जे० विंगफ़ील्ड सेकरोरा की छावनी में रहते थे। यहाँ डेली के घुड़सवारों की पहली रेजीमेंट और अवध इर्रेगुलर पैदल सेना की दूसरी रेजीमेंट थी। घुड़सवारों के अफ़सर लेफ्टिनेंट बोनहम और पैदल सेना के कैप्टेन जी० ब्वालू थे। इन दोनों में घुड़सवार तो विद्रोह करने को पूरे तौर पर तैयार थे, और पैदल सेना भी विश्वास-योग्य न थी। अतएव यह निश्चय किया गया कि स्त्रियाँ लखनऊ भेज दी जायँ। वहाँ की घुड़सवार सेना के सेनापित कैप्टेन एच्० फ़ोर्बेस उस समय लखनऊ में थे। वह कुछ सिक्ख और स्वयंसेवक लेकर सेकरोरा आए, और डोलियों तथा हाथियों पर स्त्रियों को चढ़ाकर ६ जून को लखनऊ लिवा ले गए। इस दल में फ़ोर्बेस, हेल और ब्वालू की पत्नियों के सिवा अन्य कई स्त्रियाँ और बच्चे भी थे।

सेना के विद्रोही मनोभाव को कई दिनों तक परखने के बाद विंगफ़ील्ड साहब ने अच्छी तरह समझ लिया कि यहाँ भी विद्रोह होगा। फलतः उन्होंने बचाव का प्रबंध किया। उन्हें बलरामपुर के राजा दिग्विजयसिंह का विश्वास था, अतएव उन्होंने आदेश कर दिया कि विद्रोह के होते ही

योरपीय अफ़सर बलरामपुर के राजा के यहाँ चले जायँ। ६वीं जून को सेना के विद्रोह करने का पक्का विश्वास हो गया, अतएव विंगफ़ील्ड साहब उस दिन संध्या-समय घोड़े पर सवार होकर गोंडा चले गए। दूसरे दिन सवेरे कैप्टन ब्वालू, लेफ़्टिनेंट हेल और डॉक्टर किडल ने भी बलरामपुर की राह ली। इधर सेना ने विद्रोह कर दिया।

सबसे आख़िर में लेफ़्टिनेंट बोनहम ने छावनी छोड़ी। वह १०वीं की दोपहर तक वहाँ ठहरे रहे। उनके आदमी उन्हें चाहते थे। पर जब सिपाहियों ने देखा कि उनकी जान को जोखिम है, एक घोड़ा तथा कुछ रुपया देकर उन्हें वहाँ से चले जाने की सलाह दी, और यह भी कहा कि वह बहरामघाट होकर न जायँ, क्योंकि वहाँ विद्रोही सेना ने अपना पहरा बिठा दिया है। वह अपने सर्जेंट और कार्टर-मास्टर को लेकर एक साधारण घाट से घाघरा पार कर राज़ी-ख़ुशी दूसरे दिन लखनऊ पहुँच गए।

विंगफ़ील्ड साहब अधिक समय तक गोंडा में नहीं रहे। जब उन्हें वहाँ की सेना का भाव मालूम हुआ, गोंडा के मुल्की अधिकारियों को अपने साथ लेकर शीघ्र ही बलरामपुर चले गए। यहाँ गोंडा में अवध इर्रेगुलर तीसरी पैदल सेना की पहली रेजीमेंट थी। उसके सेनापति कैप्टेन माइल्स और दूसरे अफ़सर भी दो दिन बाद सेना का रंग-ढंग देखकर बलरामपुर भाग गए।

कुछ दिनों तक बलरामपुर में रहने के बाद वे सब अँगरेज़ गोरखपुर जाने को तैयार हुए। राजा ने उनकी रक्षा के लिये अपने सैनिक उनके साथ कर दिए, जो उन्हें अवध की सीमा तक पहुँचा आए। वहाँ बाँसी के राजा ने उन्हें बड़े आदर से लिया। बाद को वे सब सही-सलामत गोरखपुर पहुँच गए।

परंतु बहराइच के अँगरेज़ अफ़सर संकट में पड़ गए। यहाँ तीसरी इर्रेगुलर पैदल सेना की दो कंपनियाँ थीं, तथा तीन अँगरेज़ अफ़सर थे—डिप्टी-कमिश्नर मिस्टर सी० डब्ल्यू० कंलिफ़; कैप्टेन लॉग बिली और इनके सहायक मिस्टर जार्डन। जब इन्होंने देखा कि सेना का रंग-ढंग अच्छा नहीं, तब ये आश्रय के लिये नानपारा भागे। परंतु इन्हें वहाँ आश्रय न मिला, अतएव लखनऊ जाने का निश्चय किया, और बह-राइच आकर घाघरा पार करने को बहरामघाट आए। ये हिंदो-स्तानी भेप में थे। यहाँ घाट पर सेकरोरा के जो विद्रोही सैनिक थे, उन्होंने इन्हें नहीं पहचाना, और नदी-पार जाने के लिये नाव पर चढ़ जाने दिया। पर नाव छूट जाने पर उन्हें इनका पता लग गया, और वे दूसरी नावों पर चढ़कर इनके पीछे दौड़े, और गोली चलाने लगे। यह हाल देखकर इनकी नाव के मल्लाह नदी में कूद तैरकर भाग गए, और ये नाव में छिपकर अपने रिवाल्वर दागने लगे। इधर नाव खेई न जा सकने के कारण नदी के प्रवाह में पड़कर फिर किनारे लौट आई। दो अफ़सर तो तत्काल मार डाले गए, और तीसरा

सेकरोरा के विद्रोही अफ़सरों की अनुमति से दूसरे दिन मारकर नदी में फेंक दिया गया।

मल्लापुर में कोई सेना न थी, परंतु प्रांत के विद्रोह का प्रभाव यहाँ भी पड़ा, और सरकारी अधिकारियों की सत्ता उठ गई। यहाँ मिस्टर गोने और कैप्टेन हेस्टिंग्स नाम के दो अँगरेज़ अफ़सर थे। इनके सिवा कैप्टेन जॉन हियरसे, श्रीमती ग्रीन और कुमारी जैक्सन सीतापुर से और ब्रैंड तथा कैरथ्यू शाहजहाँपुर के रोसा के शक्कर के कारख़ाने से भागकर आ गए। इन सबने धौरहरा के नाबालिग़ राजा के मुठियारी के क़िले में शरण ली, जहाँ से इन्होंने लखनऊ जाने के लिये एक से अधिक बार असफल प्रयत्न किए। अतएव इन्हें अधिक समय तक धौरहरा में रुकना पड़ा। परंतु जब इन्हें ज्ञात हुआ कि राजा के नौकर अंत में दग़ा करेंगे, तब ये भाग खड़े हुए। इनमें श्रीमती ग्रीन, कुमारी जैक्सन और मिस्टर कैरथ्यू तथा दो और अँगरेज़ विद्रोहियों के हाथ में पड़ गए। बाक़ी लोग बच निकले, और पदनहा के ताल्लुक़ेदार कुलराजसिंह ने उन्हें अपने यहाँ आश्रय दिया। परंतु तराई के दूषित जल-वायु के कारण वे एक-एक करके मर गए। उनमें केवल जॉन हियरसे ही बच पाए।

गोंडा और सेकरोरा की विद्रोही सेनाओं ने पहले तो सरकारी ख़ज़ाना अपने क़ब्ज़े में किया, फिर कुछ दिन वहाँ ठहरे

रहने के बाद वे घाघरा पार कर विद्रोहियों के केंद्र, बाराबंकी-नवाबगंज, को चली आईं।

फ़ैज़ाबाद की कमिश्नरी में फ़ैज़ाबाद, सुलतानपुर और सलोन, ये तीन ज़िले थे। फ़ैज़ाबाद में देशी पैदल-सेना की २२वीं रेजीमेंट थी। इसके सेनापति कर्नल लेनाक्स थे। इसके सिवा अवध इर्रेगुलर पैदल सेना की छठी रेजीमेंट थी। इसके सेनापति कर्नल ओ' ब्रियन थे। इनके सिवा मेजर मिल की अधीनता में एक देशी तोपख़ाना भी था। फ़िशर की १५वीं इर्रेगुलर घुड़सवार सेना का एक ट्रुप भी, एक देशी अफ़सर की अधीनता में, यहाँ नियुक्त था। इस अफ़सर ने विद्रोह में काफ़ी अधिक भाग लिया।

कमिश्नर कर्नल गोल्डने का सदर मुक़ाम सुलतानपुर था, पर वह फ़ैज़ाबाद चले आए थे।

२२वीं रेजीमेंट असंतोष का भाव पहले से ही दिखा रही थी। वर्लो की पल्टन छठी इर्रेगुलर एक बदनाम सेना थी, देशी तोपख़ाना भी विश्वास-पात्र न था, अतएव फ़ैज़ाबाद के अधिकारियों को बड़ी चिंता थी।

शाहगंज के ताल्लुक़ेदार राजा मानसिंह फ़ैज़ाबाद में, चीफ़ कमिश्नर की आज्ञा के अनुसार, क़ैद थे। उन्होंने अधिकारियों को बुलाकर कहा कि फ़ौजें विद्रोह करने को तैयार हैं, और यदि मैं क़ैद से छोड़ दिया जाऊँ, तो अपने क़िले में अधिकारियों को आश्रय दूँगा। परिस्थिति देखकर कर्नल गोल्डने ने

उन्हें छोड़ दिया, और वह जाकर अपने क़िले की मरम्मत तथा सेना-संगठन करने लगे। इसके बाद ही सेना ने अपना विद्रोही भाव प्रकट करना शुरू किया। उसने इस बात की माँग की कि सरकारी ख़ज़ाना हमें सौंप दिया जाय, ताकि सुरक्षित रहे। अधिकारियों ने लाचार होकर इस प्रस्ताव को स्वीकार किया, और विद्रोही सैनिक जय-घोष करते हुए ख़ज़ाने को छावनी में उठा ले गए। सिविलियनों ने अपने कुटुंबियों को शाहगंज भेज दिया, और परिस्थिति का सामना करने को तैयार हो गए। २२वीं रेजीमेंट के देशी अफ़सरों का विश्वास करके फ़ौजी अफ़सरों की स्त्रियाँ छावनी में ही ठहरी रहीं।

उधर आज़मगढ़ से विद्रोह करके १७वीं रेजीमेंट (देशी पैदल सेना) फ़ैज़ाबाद आ रही थी। उसके साथ घुड़सवारों का एक दल और दो तोपें भी थीं, तथा आज़मगढ़ के ख़ज़ाने का सारा रुपया भी था। जब यह सेना फ़ैज़ाबाद से एक पड़ाव दूर बेगमगंज में ८ जून को आ पहुँची, तब फ़ैज़ाबाद की सेनाओं ने अपना रूप प्रकट कर दिया, और उसी दिन रात को उन्होंने विद्रोह कर दिया। दूसरे दिन सवेरे मुल्की अधिकारी कैप्टेन जे० रीड, मिस्टर अलेक्ज़ेंडर और कैप्टेन ब्रेडफ़ोर्ड घोड़ों पर सवार होकर शाहगंज चले गए। विद्रोहियों ने अपने फ़ौजी अफ़सरों से कहा कि छावनी के घाट पर जो नावें बँधी हैं, उन पर सवार होकर आप

लोग यहाँ से चले जायँ। नावें छाई हुई न थीं, और न उन पर मल्लाह ही थे। कर्नल लेनाक्स को छोड़कर सभी अफ़सर नावों पर सवार हुए, और खुद ही उन्हें खेते हुए ले चले। उनके साथ २२वीं का तेग़अली नाम का एक मुसलमान सैनिक था, जो उनके साथ बराबर बना रहा। चार नावें छूटी थीं, जिनमें २० पुरुष और १ स्त्री थी।

इधर २२वीं के सैनिकों ने अपना दूत बेगमगंज भेजकर १७वीं के सैनिकों से यह कहलाया कि फ़ैज़ाबाद से उनके जो फ़ौजी अफ़सर नावों से उधर आ रहे हैं, वे जीवित न जाने पावें। बेगमगंज ठीक घाघरा के किनारे बसा हुआ था, जहाँ १७वीं का पड़ाव था। फ़ैज़ाबाद के छावनी-घाट से चार नावें छूटी थीं, उनमें से दो नावें जब बेगमगंज के सामने पहुँचीं, उन पर गोलियाँ चलाई गईं। छठी (अवध इर्रेगुलर पैदल सेना) के सर्जेंट मेजर मैथ्यूज़ मारे गए। यह देखकर कि ऐसी दशा में नावें आगे न जा सकेंगी, दो नावें नदी के दूसरे तट की ओर ले जाई गईं। विद्रोहियों ने नावों पर चढ़कर गोली चलाते हुए उनका पीछा किया। अब मृत्यु प्रत्यक्ष थी। कर्नल गोल्डने ने अपने साथियों से भागकर जान बचाने को कहा, और खुद नाव पर जमे रहे, क्योंकि वृद्ध होने से वह भाग न सकते थे। दूसरी नाव में मेजर जे० मिल्स (तोपखाने के), २२वीं देशी पल्टन के लेफ़्टिनेंट और सर्जेंट ए० ब्राइट, सर्जेंट मेजर होल्म और उनकी पत्नी, क्वार्टर-मास्टर

सर्जेंट रसल तथा तोपख़ाने के बगलर विलियम सन थे। कर्नल गोल्डने के साथ के लोग नाव से कूदकर तैर गए। दूसरी नाव के मेजर मिल तैरकर भागते समय डूब गए। कर्नल गोल्डने और लेफ़्टिनेंट व्राइट को विद्रोहियों ने पकड़ लिया, जिन्हें वे अपनी छावनी में ले गए, और मार डाला। शेष सब लोग डूब गए या विद्रोहियों की गोलियों से मारे गए। कर्नल गोल्डने की नाव के जो सात आदमी तैरकर बच निकले थे, उनमें दो व्यक्ति (लेफ़्टिनेंट आर० करी और लेफ़्टिनेंट सी० एम्० आर० पार्सन्स) एक दूसरी नदी पार करते समय डूब गए। शेष पाँच आदमी एक ज़मींदार की सहायता से गाँवों के चौकीदारों द्वारा एक गाँव से दूसरे गाँव को पहुँचाए गए, यहाँ तक कि वे अमोरह पहुँच गए। यहाँ उनसे चौथी नाव के आदमी आ मिले। यहाँ से वे सब कप्तानगंज गए, जहाँ के देशी अधिकारियों ने उन्हें रुपया दिया, तथा पुलिस का एक दल उनके साथ कर दिया। अब वे सब गायघाट को रवाना हुए। परंतु महुआदाबर के बाज़ार में पहुँचने पर साथ के पुलिस के आदमियों ने उनका भेद खोल दिया, जिससे कुछ सशस्त्र आदमियों ने उन पर आक्रमण कर दिया, और छ आदमियों को मार डाला। केवल सर्जेंट बूशर और तेग़अली बच गए। सर्जेंट बूशर को बाबू बल्लीसिंह ने गिरफ़्तार कर लिया, परंतु बाद को डरकर छोड़ दिया। वह कप्तानगंज में कर्नल लेनाक्स और उनके परिवार से जा मिले। बस्ती में इस

दल में तेग़अली भी आ मिला। और, ये सब लोग गोरखपुर पहुँच गए। गोरखपूर के मैजिस्ट्रेट मिस्टर पैटर्सन को जब महुआदाबर की घटना का हाल मालूम हुआ, तब पुलिस के साथ आकर उन्होंने उसे फूँक दिया।

तीसरी नाव में छठी पैदल सेना के कर्नल ओ' ब्रियन, कैप्टेन डब्ल्यू० आर० गार्डन और असिस्टेंट सर्जन कोलीसन, २२वीं के लेफ़्टिनेंट जे० डब्ल्यू० ऐंडर्सन और तोपख़ाने के लेफ़्टिनेंट पर्सिवाल थे। यह नाव कुशल-पूर्वक गोलाघाट पहुँच गई। यहाँ एक राजा ने अपने कुछ सिपाही इसके साथ कर दिए, और यह नाव दीनापुर पहुँच गई। इस नाव के लोग अयोध्या में एक बड़ी नाव पर चढ़े, और नाव खेने के लिये उन्हें मल्लाह भी मिल गए। नाव में छिपकर बैठने की जगह थी, अतएव विद्रोही उस पर संदेह न कर सके, और नाव चुपचाप निकल गई।

कर्नल लेनाक्स अपने कुटुंब के साथ ९वीं जून को दोपहर के समय नाव पर चढ़े। कुछ दूर जाने पर उन्हें नाव से उतरना पड़ा, जहाँ से वह पैदल गोरखपुर रवाना हुए। एक सवार ने मार्ग में उन्हें गिरफ़्तार कर लिया, और विद्रोहियों को सौंपने के लिये उन्हें लिये जा रहा था, परंतु सौभाग्य से बहराइच के भूतपूर्व नाज़िम मुहम्मद-हुसेनख़ाँ ने उन्हें छुड़ा लिया, और नौ दिन तक अपने यहाँ रक्खा। बाद को जब गोरखपुर के मिस्टर पैटर्सन

ने अपने आदमी भेजे, तब उन्हें उनके साथ कर दिया।

जिन लोगों ने राजा मानसिंह के क़िले में शरण ली थी, उन्हें वह कुछ दिनों तक अपने यहाँ ठहराए रहे। परंतु बाद को विद्रोहियों के डर से उन्हें अपने यहाँ से चले जाने को कहा। राजा ने उनके लिये जलालुद्दीन नगर के घाट में नावों का प्रबंध कर दिया, जहाँ उनके सिपाही उन्हें पहुँचा आए। परंतु इन सिपाहियों ने मार्ग में उनका सब कुछ छीन लिया। नाव एक ही थी, जिस पर सारे दल को चढ़ना पड़ा। इस दल में ७ पुरुष, ८ स्त्रियाँ और १४ बच्चे थे। इस जल-यात्रा में मार्ग में बीरहार के सोमवंशी राजा उदितनारायणसिंह ने उन्हें लूटकर कैप्टेन रीड और कैप्टेन अलेक्ज़ेंडर ओर को क़ैद कर लिया। परंतु इसी बीच में बीरहार के दूसरे ताल्लुक़ेदार माधो-नारायणसिंह उनकी मदद को आ गए, और पाँच-छ दिन तक उन्हें अपने यहाँ रक्खा। बाद को अपने सिपाहियों के साथ उन्हें गोपालपुर भेज दिया, जहाँ से वह राज़ी-ख़ुशी दीनापुर पहुँच गए।

मेजर मिल की स्त्री अपने बच्चों के साथ सबसे अंत में रवाना हुईं। अपने बच्चों को धूप से बचाने के लिये वह स्थल-मार्ग से गईं, और राज़ी-ख़ुशी निकल गईं। उनका एक बच्चा बीमार होकर मार्ग में मर गया। इसके सिवा उन्हें किसी तरह के संकट का सामना नहीं करना पड़ा।

अँगरेज़ अफ़सरों के चले जाने के बाद १७वीं पल्टन ने

फ़ैज़ाबाद की छावनी में प्रवेश किया। उसके पास सरकारी ख़ज़ाने का बहुत-सा रुपया था, पर गोली-बारूद का अभाव था। इसका फ़ैज़ाबाद की विद्रोही सेनाओं से झगड़ा हो गया, और दोनो दल लड़ने को तैयार हो गए। जब १७वीं ने एक लाख साठ हज़ार रुपया देना स्वीकार किया, तब वह वहाँ से जाने पाई। वह वहाँ से सीधे कानपुर चली गई। और, कानपुर के सामने गंगा के दूसरे तट पर ठीक उस समय पहुँची, जब कानपुर के भागनेवाले अँगरेज़ों के संहार का जघन्य कार्य हो रहा था। उस कार्य में भी इस सेना ने भाग लिया।

फ़ैज़ाबाद की विद्रोही सेना ने मौलवी अहमदुल्ला शाह को अपना नेता बनाया, और उसके सम्मान में तोप की सलामी दाग़ी। शाहजी उस समय फ़ाँसी का दंड पाने के लिये जेल में बंद थे। वह एक अच्छे घराने के थे। मदरास से उत्तर-भारत में आए थे, और घूम-घूमकर विद्रोह का प्रचार कर रहे थे। आगरा से निकाल दिए जाने पर एप्रिल में अपने कई साथियों के साथ फ़ैज़ाबाद आए थे, और यहाँ विद्रोही पर्चे बाँटकर जेहाद करने की खुल्लमखुल्ला घोषणा कर रहे थे। इस पर पुलिस को उन्हें गिरफ़्तार करने का हुक्म दिया गया, परंतु उन्होंने और उनके साथियों ने पुलिस का सशस्त्र विरोध किया। यह देखकर सेना के आदमी बुलाए गए, और जब उनके कई साथी मारे गए, तब शाहजी पकड़े जा सके। उन पर

मुक़द्दमा चलाया गया, और उन्हें फाँसी देने का हुक्म दिया गया। परंतु फाँसी नहीं दी जा सकी। अस्तु, विद्रोह होने पर सिपाहियों ने उन्हें अपना नेता बनाया। परंतु दो दिन बाद शाहजी पद-च्युत कर दिए गए। इसके बाद विद्रोहियों ने राजा मानसिंह को सरदार बनाना चाहा। वे उनसे लल्लो-पत्तो करते रहे। उन्होंने अपने भाई रामाधीन को नानाराव के पास कानपुर भेजा। इधर अपने विश्वास-पात्र एजेंटों से वह लखनऊ की रेज़ीडेंसी के अधिकारियों से भी पत्र-व्यवहार करते रहे। विद्रोही कुछ समय तक फ़ैज़ाबाद में ठहरे रहे। इसके बाद वे दरियाबाद चले गए, और वहाँ से जून के अंत तक नवाबगंज-बाराबंकी जा पहुँचे।

सुलतानपुर में १५वीं इर्रेगुलर घुड़सवार सेना थी। इसके सेनापति कर्नल एस्० फ़िशर थे। इसके सिवा ८वीं अवध इर्रेगुलर पैदल सेना थी, जिसके सेनापति कैप्टेन डब्ल्यू० स्मिथ थे। मिलीटरी पुलिस की पहली रेजीमेंट कैप्टेन बनबरी के नेतृत्व में थी। जब सेना के विद्रोह करने के लक्षण दिखाई दिए, तो कर्नल फ़िशर ने ७वीं जून की रात को स्त्रियों और बच्चों को डॉक्टर कार्विन और लेफ़्टिनेंट जेंकिंस के साथ इलाहाबाद भेज दिया। ये लोग सही-सलामत प्रतापगढ़ पहुँच गए। परंतु गाँववालों ने इन पर आक्रमण कर इन्हें लूट लिया, जिससे श्रीमती गोल्डने, श्रीमती ब्लाक और श्रीमती स्ट्रोयान अपने साथियों से अलग हो गईं, और वे

लाल माधोसिंह के क़िले में पहुँचाई गई, जहाँ उनके साथ अच्छा व्यवहार किया गया। कुछ दिनों तक अपने यहाँ रखकर राजा ने उन्हें इलाहाबाद भेज दिया। शेष लोगों को, जिनमें असिस्टेंट कमिश्नर लेफ्टिनेंट ग्रांट आ मिले थे, पड़ोस के एक जमींदार ने आश्रय दिया, जिसने उन सबको इलाहाबाद पहुँचा दिया। उक्त दल के शेष लोग पहले तरोल के ताल्लुक़ेदार गुलाबसिंह की शरण में गए थे, परंतु उन्होंने आश्रय नहीं दिया। असिस्टेंट कमिश्नर लेफ्टिनेंट ग्रांट और चुंगी-विभाग के मिस्टर डब्ल्यू० ग्लीन ने इन लोगों की गाँववालों की भीड़ से बड़ी बहादुरी से रक्षा की। इसके बाद वे अजीतसिंह नाम के एक छोटे जमींदार के क़िले में गए। इन्होंने उन्हें आश्रय दिया, और उन्हें इलाहाबाद पहुँचाया। अजीतसिंह ने उपर्युक्त स्त्रियों को भी अपने हाथी पर चढ़ाकर अमेठी भेजा।

जो अफ़सर सुलतानपुर में रह गए थे, उन्हें संकट का सामना करना पड़ा। ९वीं जून को सवेरे फ़ौजों ने विद्रोह कर दिया। जंगी पुलिस को समझाने-बुझाने के बाद जब कर्नल फ़िशर वहाँ से लौटे, तो एक सिपाही ने पीछे से उन्हें गोली मार दी। इसके बाद विद्रोहियों ने कैप्टेन गिबिंग्स को मार डाला। लेफ्टिनेंट टकर से उनके आदमियों ने भाग जाने को कहा। कोई उपाय न देखकर वह वहाँ से अपने घोड़े पर चल खड़े हुए, और नदी पार कर दियरा के रुस्तमशाह के क़िले में

आश्रय लिया। दूसरे दिन मिलीटरी पुलिस के कैप्टेन बनबरी और ८वीं के कैप्टेन स्मिथ, लेफ्टिनेंट डॉ० लेविस ओ' डोनेल भी वहीं आ गए। इसकी सूचना बनारस भेजी गई। वहाँ के कमिश्नर ने अपने देशी आदमियों को भेजकर इन सब लोगों को बनारस बुला लिया।

कर्नल फ़िशर और कैप्टेन गिविंग्स के सिवा दो सिविलियन—मिस्टर ए० ब्लाक और मिस्टर एस० स्ट्रोयन—भी सुलतानपुर में मारे गए। सेना के विद्रोह करने पर इन दोनो ने नदी पार कर सुलतानपुर के ज़मींदार यासीनखाँ का आश्रय लिया। परंतु उन्होंने अपने घर से निकाल दिया, और इनको गोली मरवा दी।

इस प्रकार अपने अफ़सरों से छुट्टी पाकर विद्रोहियों ने उनके घरों को लूटकर फूँक दिया। इसके बाद तीनो रेजीमेंटें लखनऊ रवाना हुईं। मार्ग में उन्हें मिलीटरी पुलिस की ३री रेजीमेंट की पराजय का हाल मिला। वह लखनऊ से इन लोगों में शामिल होने आ रही थी। अतएव वे सेनाएँ दरियाबाद चली गईं, और वहाँ से बाराबंकी। २७वीं जून से यह स्थान विद्रोहियों का केंद्र हो गया।

फ़ैज़ाबाद-कमिश्नरी के तीसरे ज़िले सलोन में फ़र्स्ट अवध इर्रेगुलर पैदल सेना की छ कंपनियाँ थीं। इनके सेनापति कैप्टन आर० एल० थामसन थे। इन सबने सबसे बाद को विद्रोह किया। १०वीं जून तक यहाँ के डिप्टी-कमिश्नर कैप्टेन

एल्० बैरो के प्रयत्नों से यहाँ किसी ने चूँ तक न की। परंतु १०वीं को सिपाहियों ने हुक्म मानने से इनकार कर दिया, और अफ़सरों से कहा कि अब वे वहाँ से चले जायँ। फलतः दोनो अफ़सर कुछ विश्वासपात्र साथियों के साथ छावनी से होकर निकले। छावनी के बाहर धारूपुर के ताल्लुक़ेदार लाल हनुमंतसिंह अपने आदमियों के साथ मौजूद थे। कैप्टेन बैरो ने उन्हें वहाँ पहले से ही नियत समय पर आ जाने के लिये कह दिया था। उन्हें राजा अपने धारूपुर के क़िले में लिवा ले गए, जहाँ उन्हें १५ दिन तक बड़े आराम से रक्खा। फिर पाँच सौ सिपाहियों को साथ लेकर ख़ुद राजा उन्हें गंगा-पार उतार आए, जहाँ से वे सब लोग सही-सलामत इलाहाबाद पहुँच गए।

लखनऊ कमिश्नरी के दरियाबाद-ज़िले के ख़ज़ाने में लगभग तीन लाख रुपया था। अवध इर्रेगुलर पैदल सेना की ५वीं पल्टन यहाँ थी। इसके सेनापति कैप्टेन डब्ल्यू० एच्० हाविस थे। इन्होंने ख़ज़ाने का रुपया लखनऊ पहुँचा देने का प्रयत्न किया, परंतु कुछ आदमियों के विरोध करने पर वह उसे नहीं हटा सके। ६वीं जून को वह अपने निश्चय पर तुल गए, और रुपया गाड़ियों में लादकर लखनऊ रवाना किया। वह आध मील भी न गया होगा कि उसके साथ के सिपाहियों में से आधे लोगों ने रुपया ले जाने से इनकार कर दिया। पर आधे सैनिक ले जाना चाहते थे। झगड़ा यहाँ तक बढ़ गया कि

विद्रोही गोली चलाने लगे। फलतः उनकी जीत हुई, और वे रुपयों से लदी गाड़ियाँ छावनी लौटा ले गए। यह हाल देख-कर अँगरेज़ अफ़सर भाग खड़े हुए। कैप्टेन हावेस बाल-बाल बच गए। वे सब-के-सब भागकर सूहा पहुँचे। वहाँ के ज़मींदार रामसिह ने बड़े सम्मान के साथ उन्हें आश्रय दिया। यहाँ से वे लोग ११वीं जून को लखनऊ पहुँच गए। रामसिंह ने लेफ्टिनेंट ग्रांट और फ़ुलर्टन को भी आश्रय दिया था। ये लोग अपने स्त्री-बच्चों को देशी गाड़ियों में चढ़ाकर भागे थे। कुछ बागियों ने इन्हें घेरकर पकड़ लिया था, और दरियाबाद लिए आ रहे थे। परंतु दरियाबाद से विद्रोहियों का संदेश पाकर उन्होंने इन्हें चले जाने दिया, और ये सही-सलामत लखनऊ पहुँच गए। डिप्टी कमिश्नर मिस्टर डब्ल्यू० वेन्सन अपनी स्त्री-सहित बच निकले। पहले उन्होंने हड़हा के ताल्लुक़े-दार का आश्रय लिया, जिसने उनका सत्कार किया। वहाँ से वह लखनऊ पहुँच गए।

५वीं पल्टन कुछ दिनों तक दरियाबाद में ठहरी रही। इसके बाद वह भी विद्रोहियों के केंद्र, नवाबगंज-बाराबंकी, को चली गई।

इस प्रकार कुल दस दिन के भीतर प्रांत के सभी जिलों का अधिकार अँगरेज़ों के हाथों से जाता रहा। १०वीं जून के बाद से ज़िलों से डाक का आना बंद हो गया।

लखनऊ का रंग-ढंग

अब लखनऊ में अँगरेज़ों की सत्ता केवल रेज़ीडेंसी तथा उसके आस-पास तक ही रह गई थी। रेज़ीडेंसी की सुरक्षा की व्यवस्था करने में रात-दिन के घोर परिश्रम के कारण सर हेनरी लॉरेंस बुरी तरह कमज़ोर हो गए थे, यहाँ तक कि ६वीं जून को डॉक्टरों ने उन्हें एकदम विश्राम करने की सलाह दी। फलतः प्रबंध के लिये उनके आदेश से मिस्टर गुबिंस, मिस्टर ओमैने, मेजर बैंक्स, कर्नल इँगलिश और मेजर ऐंडर्सन की एक कौंसिल बनाई गई। इसके सभापति मिस्टर गुबिंस बनाए गए। कौंसिल ने देशी पल्टनों को, जो वहाँ मौजूद थीं, तोड़ देने का निश्चय किया, क्योंकि उन पर अब उसका विश्वास नहीं था। १२वीं जून से फ़ौजों के तोड़ने का काम शुरू हो गया। देशी अफ़सरों को छोड़कर ७वीं के सभी सवार चले गए। लगभग ३५० सिपाही रोक लिए गए। इनमें १७० सिपाही १३वीं देशी पल्टन के थे, शेष ४८वीं और ७१वीं रेजीमेंटों के। ये लोग रेज़ीडेंसी में लाकर एकत्र किए गए। घुड़सवारों के घोड़े लाकर रेज़ीडेंसी के सामने बाँध दिए गए।

२री अवध इर्रेगुलर घुड़सवारों के सेनापति मिस्टर गाल

थे। सर हेनरी ने इन्हें इस पद से हटाकर अपना एड-डि-कैंप बना लिया। इन्होंने कर्नल इँगलिश द्वारा कौंसिल में यह प्रस्ताव कराया कि यह चिट्ठी-पत्री लेकर इलाहाबाद भेजे जायँ। इनका प्रस्ताव मान लिया गया। ११वीं जून की रात को यह अपने कुछ चुने हुए सवारों के साथ लखनऊ से चले। गाल साहब हिंदोस्तानी भेस में थे। रायबरेली पहुँचने पर सराय की भठियारिन ने इनका भेद खोल दिया। संयोग-वश उधर से कुछ विद्रोही सैनिक जा रहे थे। खबर पाकर वे तथा नगर के लोग सराय में जा पहुँचे। यह देखकर कि बचना कठिन है, गाल ने आत्महत्या कर ली।

११वीं जून की रात को मिलिटरी पुलिस के सवारों ने विद्रोह कर दिया। कैप्टेन वाटसन ने उन्हें बहुतेरा समझाया, पर वे न माने, शोर-गुल मचाते ही रहे। १२वीं को सवेरे जंगी पुलिस की पैदल-सेना भी विगड़ खड़ी हुई, और वे सब मिलकर लूट-मार करने लगे। वह सेना योरपियनों के घरों को लूट-फूँककर सुलतानपुर को रवाना हो गई। उसका पीछा करने को ठीक दोपहर में ३२वीं की २ कंपनियाँ, २ तोपें, ७० सिक्ख सवार, ४० या ५० योरपियन वालंटियर भेजे गए; परंतु ये उन्हें पकड़ न सके, तथापि इन्होंने उनके १५ आदमियों को मार गिराया, और १५ सिपाही पकड़ भी लिए। विद्रोही वीरता से लड़े, और उन्होंने दो देशी सवारों को मार डाला, तथा कई को घायल किया। दो योरपियन धूप के कारण

मर गए। इस संघर्ष के बाद यह विद्रोही-दल कानपुर की ओर घूम पड़ा, और नानाराव के दल में जाकर शामिल हो गया।

१२वीं जून को सर हेनरी काफ़ी स्वस्थ हो गए, और उन्होंने अपने कार्य का भार सँभाल लिया। रामनगर-धमेड़ी के पास-पड़ोस के ३० पासी हरकारों का काम करने के लिये नौकर रक्खे गए। ये लोग कानपुर के घाट से गंगा पार कर लखनऊ की ख़बर कानपुर पहुँचाते, और वहाँ की लखनऊ लाते। इसी प्रकार इलाहाबाद और बनारस को भी इनके द्वारा ख़बरें भेजी तथा वहाँ से मँगाई जाती थीं।

प्रांत के विद्रोही सिपाहियों की ख़बरें प्राप्त करने के लिये दूसरे एजेंट रक्खे गए। इसके सिवा कुछ देशी रईसों से भी इस कार्य में सहायता मिलती थी। बहू बेगम के एक वंशधर मिर्ज़ा हैदर से फ़ैज़ाबाद के विद्रोहियों की ब्योरेवार ख़बर रोज़ मिलती थी। इसी प्रकार राजा मानसिंह का एक एजेंट भी विद्रोही सेना की गति-विधि की ठीक-ठीक सूचना देता रहता था। मौरावाँ के गौरीशंकर के एजेंट झब्बासिंह भी यही काम करते थे। इनके सिवा कई देशी अधिकारी भी विद्रोहियों की सूचनाएँ देते रहते थे। सीतापुर के तह-सीलदार महमूदाबाद के पास एक गाँव में छिपे हुए थे। वहाँ से वह सीतापुर के विद्रोहियों की तथा महमूदाबाद के राजा नवाबअली के षडयंत्रों की सूचना नियमित रूप से देते

रहते थे। बाराबंकी के तहसीलदार मुहम्मद असग़री भी इस काम में बराबर लगे रहे।

लगभग १५वीं जून से रेज़ीडेंसी की क़िलेबंदी अधिक मुस्तैदी के साथ की जाने लगी, ताकि विद्रोहियों की गोला-बारी से उसकी रक्षा की जा सके। इसके लिये रेज़ीडेंसी के भीतर तोपें लगाने के लिये मोर्चे बनाए जाने लगे। इसके सिवा दो हज़ार नए जवान पुलिस में भरती किए गए, जो इमामबाड़े में रक्खे गए। ८० पेंशनर सिपाही भी बुलाए गए। इनमें से लगभग १५ विश्वासी आदमी और भरती किए गए।

दौलतख़ाना में ४थी अवध इर्रेगुलर पल्टन तैनात थी। इसके सेनापति कप्तान ह्यूजेस को मालूम हुआ कि शहर के कुछ लोग उनके सैनिकों को भड़का रहे हैं। अतएव १६ या १७ जून को सिटी-मैजिस्ट्रेट कप्तान कारनेगी को लेकर उन भड़कानेवालों को पकड़ने गए। उन्होंने पहुँचकर उन सबको पकड़ लिया। जाँच करने पर ४ मुसलमान अपराधी साबित हुए। इनमें एक रसूलबख़्श नाम के वकील थे, दूसरा उनका लड़का। इन चारों को मच्छीभवन के फाँसी के अड्डे पर फाँसी दे दी गई। रसूलबख़्श काकोरी के थे। उनके फाँसी पा जाने पर उनके संबंधी बिगड़ पड़े, और उन्होंने वहाँ की पुलिस के थाने पर आक्रमण कर दिया, जिसमें पुलिस के दो सिपाही मारे गए। अधिकारियों ने प्रतिकूल

समय देखकर उन लोगों को समुचित दंड देने का विचार नहीं किया; और वे चुप रहे।

२५ जून, १८५७, को दोपहर के समय चीफ़ कमिश्नर ने दो तोपों और गोरों की एक कंपनी के साथ मेजर बैंक्स और कैप्टेन कारनेगी को क़ैसरबाग़ भेजा। ये शाही महलों का सारा बहुमूल्य सामान अपने साथ रेज़ीडेंसी में उठा लाए, जिसमें २२ संदूक़चियाँ हीरों की, तीन शाही ताज, एक राज-सिंहासन, कई तोड़े, अशर्फ़ियाँ और रत्न-जटित अस्त्र-शस्त्र थे। इसका प्रस्ताव अलीरज़ा कोतवाल ने किया, और उक्त सामान उठा लाने के लिये मेजर बैंक्स भेजे गए। यह काम २८वीं जून को किया गया। गुबिंस साहब ने यही लिखा है। चाहे जो हो, उक्त सामान लाया गया, जिसका कुछ अंश रेज़ीडेंसी में चोरी भी चला गया था। दूसरे दिन एक पीतल की तोप तथा दूसरे हथियार भी क़ैसरबाग़ से उठा लाए गए।

२७वीं जून को रेज़ीडेंसी में ख़बर पहुँची कि अँगरेज़ी सेना का दिल्ली पर क़ब्ज़ा हो गया है। इस ख़ुशी में रेज़ीडेंसी, मच्छीभवन और छावनी से तोपें दाग़ी गईं। परंतु यह ख़बर ठीक न थी। इसमें तथ्य इतना ही था कि अँगरेज़ी फ़ौज दिल्ली पर आक्रमण करने को वहाँ पहुँच गई थी।

जून के महीने में उन ताल्लुक़ेदारों से पत्र-व्यवहार किया गया, जिनके विद्रोहियों से मिल जाने की आशंका थी। राजा

मानसिंह को २५ हज़ार पौंड वार्षिक आय की जागीर देने को लिखा गया, यदि वह सरकार की सहायता करें। इसी प्रकार महमूदाबाद के राजा नवाबअली और रामनगर-धमेड़ी के राजा गुरुबख़्शसिंह को ५ हज़ार पौंड की वार्षिक आय की जागीर देने को लिखा गया। ऐसा ही दूसरों को भी लिखा गया, परंतु संतोष-जनक उत्तर किसी ने न दिया।

२६ जून को सर हेनरी को ख़बर मिली कि कानपुर के अँगरेज़ों ने नानाराव को आत्मसमर्पण कर दिया। इस सिलसिले में कानपुर से गोरों से भरी जो नावें छूटी थीं, उनमें से एक बचकर निकल गई। परंतु विद्रोही उसका भी पीछा बराबर किए रहे। तीसरे दिन, २८वीं जून को, वह गंगा में डौंडिया खेड़ा के पास एक जगह रेत में धँस गई। अब बाएँ किनारे से, अवध की ओर से, तीस-चालीस आदमी उसको लक्ष्य कर गोली चलाने लगे। यह देख चौदह अँगरेज नाव से उतरकर उनकी ओर किनारे को बढ़े। उन्हें आते देखकर वे गोली चलानेवाले हट गए। परंतु उनका अधिक दूर तक पीछा करने के कारण वे अँगरेज नदी के किनारे से दूर चले गए, साथ ही अब वे खुद भी शत्रुओं से घेरे जाने लगे। फलतः नदी के समानांतर में वे दो मील तक बढ़ते चले गए, और इस तरह अपने आप बकसर के पास नदी के तट पर पहुँच गए। वहाँ उनका स्वागत करने के लिये एक बड़ी सेना पहले से ही तैयार खड़ी थी। गंगा के ठीक तट पर एक शिवालय था। उस सेना

को देखकर गोरों ने तुरंत एक बाढ़ दागी, और झपटकर वे उस शिवालय में घुस गए। मंदिर के भीतर से वे ताक-ताककर शत्रुओं को मारने लगे। फलतः विद्रोहियों ने मंदिर के चारो ओर लकड़ी रखकर आग लगा दी। धुएँ और आग से व्याकुल होकर गोरे मंदिर से बंदूकें लेकर बाहर निकल आये। उनमें से सात नदी तक पहुँच सके, जिनमें से दो को विद्रोहियों ने मार डाला। पाँच नदी में कूद गए। उनमें एक चित तैरने के कारण किनारे आ लगा, और मारा गया। चार पीछा किए जाने पर भी बच निकले। ६ मील जाने पर कुछ लोगों ने उन्हें आश्वासन देकर बुलाया। ये गोरे उनके पास गए, और वे लोग इन्हें मुरारमऊ के राजा के पास ले गए, जहाँ एक महीने तक ये आराम से रहे। इसके बाद गंगा-पार भेज दिए गए, जहाँ से ये सही-सलामत इलाहाबाद पहुँच गए। ये थे लेफ़्टिनेंट डेलाफ़ोसी, लेफ़्टिनेंट मोब्रे टामसन, प्राइवेट मर्फी और गनर सुलीवान।

चिनहट का युद्ध और लखनऊ पर विद्रोहियों का अधिकार

सारे प्रांत में उपद्रव मचा हुआ था। लखनऊ की भी अवस्था गंभीर थी। फलतः रेज़ीडेंसी और मच्छीभवन की क़िलेबंदी ज़ोरों के साथ हो रही थी। सर हेनरी ने इन्हीं दोनो स्थानों में रहकर विद्रोहियों से सामना करने का निश्चय किया। उन्हें अधिक समय तक घिरे रहने की आशंका थी। अतएव वह काफ़ी परिमाण में आवश्यक सामग्री जुटाने में लगे हुए थे।

इधर विद्रोही नवाबगंज में एकत्र हो रहे थे। जब उन्होंने सुना कि कानपुर की अँगरेज़ी फ़ौज ने आत्मसमर्पण कर दिया और वहाँ की विद्रोही सेनाओं की जीत हुई है, तो उनको भी लखनऊ पर आक्रमण करने का हौसला हुआ, और उनका हरौल दल लखनऊ के पास चिनहट गाँव में आ गया।

२६वीं जून को तड़के यह ख़बर मिली कि विद्रोही सेना के ५०० पैदल और १०० घुड़सवार चिनहट आ गए हैं, और सब-की-सब सेना दूसरे दिन आ जायगी। अतएव सर हेनरी

ने उससे ३० जून को ही युद्ध करने का निश्चय किया। तदनुसार ३०वीं को सवेरे वह ११ तोपें, ११६ सवार और ५२० पैदल सेना लेकर लखनऊ से चिनहट चले। आगे-आगे घुड़सवार, उनके पीछे तोपख़ाना और उसके पीछे पैदल-सेना जा रही थी। कुकरायल-नदी का पुल पार करने पर कच्ची सड़क मिली। पुल के आगे लगभग डेढ़ मील जाने के बाद इस्माइलगंज से घुड़सवारों पर गोली चलाई गई। इस पर वे हट आए, और ८ इंची हाविट्ज़र आगे लाई गई। विद्रोही भी आगे बढ़कर १४०० गज़ की दूरी से गोली चलाने लगे। यही नहीं, वे दिखाई भी दिए, और चिनहट के समीप आम के एक घने बाग़ में जम गए। शत्रु की इस गति-विधि को देखकर ३२वीं के ३०० अँगरेज़ सैनिक सड़क और इस्माइलगंज के बीच के भूभाग में लिटा दिए गए, ताकि शत्रु की गोली से उनकी रक्षा हो। दाहनी ओर एक छोटी-सी झोपड़ी थी। देशी पल्टन के सिपाहियों ने उसके आगे जाकर अपना मोर्चा लगाया। सड़क पर तोपें लगा दी गईं, जिनसे २० मिनट तक गोला-बारी की गई। शत्रु की सेना के व्यूह के मध्य-भाग में उसका तोपख़ाना था, अँगरेज़ी सेना के तोपख़ाने की गोला-बारी से विद्रोहियों की तोपें चुप हो गईं, और ऐसा जान पड़ा, वे पीछे हट रहे हैं। परंतु यह भ्रम था। विद्रोही दो दलों में विभक्त होकर अँगरेज़ी सेना के दाएँ-बाएँ, दोनो ओर बढ़ रहे थे। दाहनी ओर चार-पाँच सौ गज़ की दूरी से अँगरेज़ी

सेना की तोपों ने उन पर गोले चलाए, पर कोई असर न हुआ। विद्रोही बढ़ते ही रहे, और उनकी अग्रगामी घुड़सवार सेना ने अँगरेज़ी सेना के पृष्ठ-भाग में पहुँचने का प्रयत्न किया। बाईं ओर उनकी पैदल-सेना इस्माइलगंज की ओर बढ़ रही थी। इस पर ४ तोपें दाहनी ओर से बाईं ओर लाई गईं, और उनकी गोला-बारी से विद्रोहियों को उस ओर से रोकने का प्रयत्न किया गया। यद्यपि इसका कुछ प्रभाव पड़ा, तथापि विद्रोही बढ़ते ही आए। अब घुड़सवारों को आक्रमण करने का हुक्म दिया गया। इनमें अँगरेज़ स्वयंसेवक घुड़सवारों ने, जो केवल ३६ थे, बढ़कर विद्रोहियों की पैदल-सेना की अगली पंक्ति को मारकर भगा दिया, परंतु सिक्ख-सवार आक्रमण करने के स्थान में भाग खड़े हुए। इस समय तक विद्रोहियों की पैदल-सेना इस्माइलगंज पहुँच गई, और वहाँ से अँगरेज़ी सेना पर गोलियाँ बरसाने लगी। ३२वीं के सैनिकों को इस्माइलगंज पर आक्रमण करने का हुक्म हुआ, परंतु विद्रोहियों की गोलियों की मार से वे आगे न बढ़ सके, उलटा अव्यवस्थित होकर भाग खड़े हुए।

यह हाल देखकर अँगरेज़ी सेना को पीछे हटने का हुक्म दिया गया। विद्रोही बढ़ते आ रहे थे। अँगरेज़ी सेना में अव्यवस्था फैल गई। कुकरायल-नदी के पुल पर पहुँचने पर विद्रोहियों के घुड़सवार दिखाई दिए। अँगरेज़ घुड़सवारों ने आगे बढ़कर उन्हें मार भगाया। पुल पार कर आने पर भी

सेना भागती ही गई। उसके पृष्ठ-भाग पर अँगरेज़ सैनिक थे, जो अपनी गोलियों की मार से विद्रोहियों की पैदल-सेना को काफ़ी दूर किए रहे। अंत में भागती हुई सेना लखनऊ के पास पहुँच गई, जहाँ पानी पीने के लिये उसे ठहरने का हुक्म दिया गया। घुड़सवारों ने विद्रोहियों को रोकने का प्रयत्न एक बार फिर किया, किंतु वे ठहर न सके। अंत में अँगरेज़ी सेना लोहे का पुल पार कर रेज़ीडेंसी और मच्छीभवन पहुँच गई।

इस युद्ध में अँगरेज़ी सेना की भारी हानि हुई। उसकी ४ तोपें और सारा गोला-बारूद युद्ध-भूमि में ही छूट गया। इसके सिवा ११२ अँगरेज़ सैनिक मारे गए, ४४ अँगरेज़ सैनिक घायल हुए। देशी सिपाही भी काफ़ी अधिक मारे गए। कुल मृतकों की संख्या २०० के लगभग रही होगी।

विद्रोहियों के पास १२ तोपें थीं। ये सेकरोरा और फ़ैज़ाबाद के तोपख़ानों की थीं। इनके सिवा ३-४ देशी तोपें थीं। सुलतान-पुर की १५वीं के ७-८ सौ सवार थे, तथा पैदल-सेना की ६ रेजीमेंटें थीं—फ़ैज़ाबाद की २२वीं, सलोन की पहली के कुछ आदमी, सेकरोरा की २री, गोंडा की ३री, दरियाबाद की ५वीं, फ़ैज़ाबाद की छठी, सुलतानपुर की ८वीं, सीतापुर की ६वीं थीं। इनके सिवा फ़ौजी पुलिस की पहली और दूसरी रेजीमेंटें थीं।

शहर में रेज़ीडेंसी और मच्छीभवन के सिवा दौलतख़ाना

में इर्रेगुलर पैदल-सेना की ढाई रेजीमेंटें थीं, और दौलतखाना तथा मच्छीभवन के बीच इमामवाड़े में पुलिस की फ़ौज थी। ज्यों ही चिनहट की हार की ख़बर शहर में पहुँची, उक्त रेजीमेंटों ने विद्रोह कर दिया, और शोर-ग़ुल करते हुए वे अपने अफ़सरों का माल-असबाब लूटने लगीं। यह हाल देखकर अफ़सर लोग मच्छीभवन चले आए। पुलिस की फ़ौज ने भी उनका अनुकरण किया। क़रीब ५ हज़ार बरक़ंदाज़ भरती किए गए। इन्हें लेकर शहर के कोतवाल मुहम्मद ख़ाँ इमामवाड़े में चले गए, और उसका फाटक बंद कर लिया। परंतु शाम होते ही बरक़ंदाज़ों ने ताला तोड़ डाला, और फाटक खोलकर भाग निकले। कोतवाल साहब भी भेस बदल-कर शहर से भाग गए। यही नहीं, बेलीगारद में जो मुंशी लोग दफ़्तरों में काम करते थे, तथा जो मज़दूर मोरचेबंदी कर रहे थे, वे सब तथा साहब लोगों के नौकर-चाकर भी अँगरेज़ी फ़ौज के भागकर आते ही भाग खड़े हुए।

अँगरेज़ी फ़ौज का हारकर एकाएक भाग खड़ा होना, तत्काल ही उसका खदेड़ लिया जाना और विद्रोहियों द्वारा शीघ्र ही रेज़ीडेंसी का घिर जाना, यह सब एक-दूसरे के बाद इतनी जल्दी-जल्दी हो गए कि रेज़ीडेंसी में बड़ा आतंक छा गया, और बड़े-बड़े अधिकारी भी कुछ समय तक भौचक्के बने रहे।

अँगरेज़ी सेना को खदेड़ती हुई विद्रोही सेनाएँ लोहे के पुल

तक चली आई थीं, पर वे रेज़ीडेंसी की तोपों की मार के कारण आगे न बढ़ सकीं। उधर जो विद्रोही सेनाएँ पत्थर के पुल की ओर गई थीं, उन्हें मच्छीभवन की तोपों ने आगे न बढ़ने दिया। यह देखकर विद्रोही भी अपनी तोपें ले आए, और रेज़ीडेंसी तथा मच्छीभवन पर गोले बरसाने लगे। इधर विद्रोही रिसालों ने और नीचे जाकर गोमती को पार किया, और उस ओर से शहर में घुस आए। उसके बाद पैदल-सेनाओं ने भी शहर में प्रवेश किया, और शाम तक लोहे के पुल से उनकी तोपें भी शहर में आ गईं।

विद्रोहियों ने अपना एक मोरचा नक़्क़ारखाने के मुक़ाबिले और दूसरा जफ़रुद्दौला के दरवाज़े पर लगाया। इसके बाद वे फ़रहतबख़्श और छतरमंज़िल पहुँचे। यहाँ जो बेगमें रहती थीं, उन्होंने शोर-गुल मचाया। फ़ौजियों ने कहा—आप लोग डरें नहीं, रात-भर रहेंगे, सबेरे चले जायँगे। बाक़ी विद्रोही फ़ौजें बादशाहबाग़, मोतीमहल, कोठी मिर्ज़ा शाद-मंज़िल, ख़ुरशेद-मंज़िल, मुबारक-मंज़िल, कोठी रसद-ख़ाना, हज़रतगंज, दिलकुशा के मैदान और मुहम्मदबाग़ में जाकर ठहरीं।

विद्रोही सैनिक रेज़ीडेंसी के पास के घरों में जा घुसे, और उनकी दीवारों में गोली चलाने के लिये छेद बनाकर रात होने के पहले ही रेज़ीडेंसी में गोलियाँ बरसाने लगे। विद्रोहियों ने रेज़ीडेंसी को चारो ओर से घेर लिया।

पहली जुलाई का सवेरा होने पर शहर के शोहदों ने देखा कि इमामवाड़ा और मुसाफ़िरख़ाना आदि सरकारी जगहें ख़ाली पड़ी हैं, वहाँ के सिपाही भाग गए हैं, और वहाँ का सरकारी माल-असवाव और अस्त्र-शस्त्र अरक्षित पड़े हैं। वे सब एकत्र होकर उन्हें लूटने लगे। यही नहीं, उनमें से कुछ ने एक छोटी-सी तोप खींचकर, मच्छीभवन को लक्ष्य कर खड़ी की, और गोला-वारी भी शुरू कर दी। उन्होंने दो तोपें और लगाईं। मच्छीभवन से भी इन शोहदों पर गोले चलाए गए, परंतु उन गोलों से इनकी ज़रा भी हानि न हुई। आधी रात होने पर इन्होंने रुई के गट्ठे इकट्ठे किए, और उनमें आग लगाकर मच्छी-भवन पर धावा कर दिया, और उसके फाटक पर जा टूटे।

परंतु इस धावे के पहले ही मच्छीभवन को ख़ाली कर गोरे रेज़ीडेंसी चले गए थे। मच्छीभवन में जो सेना थी, उसके सेनापति कर्नल पामर ने रेज़ीडेंसी को यह ख़बर भेज दी कि उनके पास खाद्य सामग्री का अभाव है, साथ ही गोले भी नहीं हैं। इसके सिवा दो जगहों से आत्मरक्षा करना भी समुचित नहीं। अतएव यह निश्चय हुआ कि मच्छीभवन ख़ाली करके वहाँ की सेना रेज़ीडेंसी चली आवे। यह ख़बर पहुँचानेवाला कोई न था। अतएव तार से ख़बर देने का प्रबंध किया गया। पहली जुलाई की दोपहर को सेमा-फोर द्वारा यह ख़बर भेजी कि तोपें बेकार कर, क़िले को उड़ाकर आधी रात के समय यहाँ चले आओ। फलतः

मच्छीभवन की अँगरेज़ी फ़ौज मेमों और शाही क़ैदियों तथा ख़ज़ाने को लेकर वहाँ से आधी रात के समय निकली, और सही-सलामत रेज़ीडेंसी पहुँच गई। विद्रोही जान जाने पर भी कुछ कर-धर न सके। कोई साठ नए नौकर राह में साथ छोड़कर भाग गए। उनके साथ चार-पाँच गोरे भी भ्रम से चले गए थे, जो गलियों में मार डाले गए। मच्छीभवन छोड़ते समय गोरे उसे उड़ा देने के लिये सुरंग में बत्ती दे आए थे। उसके उड़ने से वह भवन ढह गया, और सारा शहर काँप उठा।

अस्तु, शोहदे डरते-डरते मच्छीभवन के फाटक पर गए। सुरंग के उड़ने से उसका एक पल्ला उखड़कर दूसरे पर गिर गया था, जिससे भीतर जाने का मार्ग हो गया था। उसी से होकर वे भीतर घुस गए, और माल-असबाब लूटने लगे। बाद को एक राजा के आदमियों ने वहाँ आकर डेरा लगाया, और उसकी लूट बंद हुई।

जिस समय मच्छीभवन लुट रहा था, शोहदों ने दो तोपें लीं, और रेज़ीडेंसी पर गोले चलाने लगे। उनका हौसला बढ़ गया। उन्होंने अपनी एक फ़ौज खड़ी की, और उसके बल से शहर के रईसों को धमकाकर रुपया ऐंठना शुरू किया। नंगी तलवारें लिए शहर में घूमते और दूकानों से मनमानी चीज़ें उठा लेते। शहर में किसी तरह का प्रबंध न होने से उनकी बन आई थी।

इधर यह हो रहा था, उधर विद्रोही सेना ने भी शहर के रईसों को लूटना शुरू किया। तिलंगे शहर के रईसों को चुन-चुनकर लूटने लगे। बाग़ी फ़ौज के नगर में आते ही मुहसिनुद्दौला अपना घर-द्वार नौकरों को सौंपकर फ़तेहपुर-चौरासी चले गए थे। तिलंगों ने उनका घर लूट लिया, और जो सामान नहीं ले जा सके, उसे नष्ट कर डाला। उनके घोड़े शाहजी खोल ले गए। नवाब मुनौवरुद्दौला अपना घर छोड़कर, सआदतगंज में, एक दूसरे नवाब के यहाँ जा छिपे। हकीम मीरअली फाटक बंद करके बैठ रहे। तिलंगों ने फाटक खुलवाया, और अँगरेज़ों के छिपाने का इलज़ाम लगाकर तलाशी लेने के बहाने उनका घर लूट लिया। इसी प्रकार नवाब अमीनुद्दौला का घर लूटा, हुज़ूर-मंज़िल में शरफ़ुद्दौला का माल-असबाब रक्खा था। वह भी सब तिलंगे लूट ले गए। इस तरह कितने ही रईसों को तिलंगों ने लूटा और अपमानित किया।

अब बाग़ी फ़ौज के अफ़सरों ने अपनी एक पंचायत बनाई। उसमें निश्चय हुआ कि राज-काज के लिये शाही घराने का कोई शाहज़ादा गद्दी पर बिठाया जाय।

नवाबी अमलदारी की स्थापना

अब अवध अँगरेज़ी अमलदारी के विरुद्ध उठ खड़ा हुआ। परंतु यह कहना कि अवध का यह विद्रोह पूर्व-कल्पित था, निराधार है। यह सच है कि प्रसिद्ध विद्रोही-नेता बिठूर के नानाराव पेशवा सैर करने के बहाने एक बार पहले लखनऊ आए थे। कदाचित् उन्होंने वहाँ के वैसे ही दो-चार लोगों से अँगरेज़ी अमलदारी के विरुद्ध विद्रोह करने की बातचीत भी की हो। परंतु उसके साथ यह भी सच है कि उस समय लखनऊ में वैसे हौसले के आदमी न थे, जो फिर से नवाबी शासन प्रचलित करने का साहस रखते हों। विद्रोह तो वहाँ इसलिये हुआ कि वह अन्य स्थानों में हुआ था। अवध को विद्रोह करना या लड़ना होता, तो वह उसी समय करता, जब उसके बादशाह वाजिदअली शाह पद-च्युत किए गए थे। उस समय विरोध करने की बात तो अलग रही, उलटा अँगरेज़ी अमलदारी का स्वागत-सा किया गया था। जो ताल्लुक़ेदार राज़ी-राज़ी मालगुज़ारी नहीं देते थे, वे अँगरेज़ी होने पर ठीक समय पर मालगुज़ारी ही नहीं देने लगे, बल्कि अधिकारियों के आज्ञानुसार उन्होंने वे जायदादें भी उनके असली स्वामियों को चुपचाप लौटा दीं, जिन्हें नवाबी अमलदारी में बल-पूर्वक

छीन लिया था। अवध में अँगरेज़ी-सत्ता गत १५ महीने से ही स्थापित थी। पुलिस के व्यवहार और प्रबंध से प्रजा संतुष्ट थी। खैराबाद और बहराइच की कमिश्नरियों का मुल्की 'बंदोबस्त' हो गया था, और उनका राजस्व सरकारी अधिकारियों ने ठीक-ठीक निश्चित कर दिया था। शेष दो कमिश्नरियों का जो बंदोबस्त हुआ था, उसमें राजस्व बहुत अधिक नियत हो गया था, अतएव फिर से विचारकर वह कम कर दिया गया, और इस बात की पहली एप्रिल को घोषणा भी हो गई थी। यह सब कुछ हुआ, परंतु सिपाहियों के विद्रोह करते ही इस सबका सारा प्रभाव जाता रहा, और प्रायः बड़े-बड़े लोग विद्रोहियों की दाब में आ गए। और, उन्होंने वह भारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली, जिसके वे पात्र न थे। उन्होंने समझा था, विद्रोही सेनाएँ अँगरेज़ों को भारत से निकाल बाहर करेंगी, और वे आराम के साथ अपने पूर्वजों के राज्य के स्वामी बन बैठेंगे। परंतु इस उद्देश-सिद्धि की बुद्धि उन दोनो में से किसी में न थी। अँगरेज़ों ने तो धीरे-धीरे सारे भारत को अपने अधिकार में कर लिया था, और वे भारत के स्वामी बन चुके थे। ऐसे शक्तिमान् अँगरेज़ों का आरामतलब भारतीय नवाब और राजे क्योंकर मुक़ाबला कर सकते? और, जिन्होंने ऐसा दुस्साहस किया, मुँह की खाई। खैर, अपने निश्चय के अनुसार विद्रोही सेना के अफ़सरों ने राजा जयलालसिंह नसरतजंग को बुलवाया। उन्होंने आकर

अफ़सरों से शिकायत की कि फ़ौज के सिपाहियों ने उनका घर लूट लिया है। अफ़सरों ने उनका सम्मान किया, और उन्हें आश्वासन दिया कि भविष्य में उनका भला होगा। इसके बाद उनकी सलाह से यह निश्चय किया गया कि नवाब सआदतअलीख़ाँ के वंश का कोई आदमी गद्दी पर बिठाया जाय। लेकिन उस वंश के नवाब मुहम्मदहसनख़ाँ (रुक्नुद्दौला) को अँगरेज़ों ने पहले से ही ले जाकर रेज़ीडेंसी में बंद कर दिया था। अतएव अफ़सरों ने राजा से कहा, तुम दरबार के पुराने ख़ैरख़्वाह रईस हो, और यह दीन का काम है, कोई ऐसा आदमी चुनो, जो उपयुक्त हो, साथ ही अब शहर की शांति का भी प्रबंध होना चाहिए। राजा की सलाह से गारद भेजकर मिर्ज़ा अलीरज़ा कोतवाल और मीर नादिरहुसेन बुलाए गए, और उनसे कहा गया कि वे पहले की तरह शहर का प्रबंध करें। परंतु फ़ौज के अफ़सरों का उन पर विश्वास न था; क्योंकि वे अँगरेज़ों के मुलाज़िम रह चुके थे, अतएव मुहम्मद क़ासिमख़ाँ उनके अफ़सर बनाए गए। शहर के प्रबंध के लिये एक कंपनी और ५० सवार दिए गए। शाहजी ने शहर में प्रबंध के लिये जगह-जगह अपने थाने क़ायम किए थे, उन्हें इन अधिकारियों ने उठा दिया। और, जब इसके लिये शाहजी ने भला-बुरा कहा, तब वह ताराकोठी से मार भगाए गए, और उनका माल-असबाब लूट लिया गया। शाहजी नंगे पैर भागकर रघुनाथसिंह व उमरावसिंह की पल्टन में जाकर छिप रहे।

फ़ौज की पार्लियामेंट ने अब जिन्नतमकान के बेटे मिर्ज़ा दारासतून को गद्दी पर बिठाने को चुना, और इसके लिये उनसे छ लाख रुपए माँगे। उन्होंने कहा, जब नवाब शुजाउद्दौला अँगरेज़ों का सामना न कर सके, तब हम क्या कर सकेंगे। हमें क्षमा करो। इस पर राजा जयलाल से कहा गया कि तुम काफ़ी जानकार हो, कोई शाहज़ादा ढूँढ़ निकालो, जो राज्य का प्रबंध कर सके।

जिस दिन फ़ौज ने शहर में प्रवेश किया, उसके चौथे दिन, सवेरे, राजा जयलाल नवाब ख़ासमहल की ड्योढ़ी पर गए, और पूछा, मिर्ज़ा नौशेरवाँक़द्र (मिर्ज़ा वलीअहद के बड़े भाई) कहाँ हैं, फ़ौज उन्हें गद्दी पर बिठाना चाहती है। दारोग़ा शमशेरुद्दौला ने जवाब दिया, बिना नवाब ख़ासमहल और बादशाह के हुक्म के हम लोग ऐसा नहीं कर सकते। अंत में यह ख़बर महमूदख़ाँ और शेख़ अहमदहुसेन ने सुनी। उन्होंने राजा से कहा, मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र को गद्दी पर बिठाओ। राजा ने कहा, अगर सब शाही बेगमें इस बात को एकमत से स्वीकार कर लें, तो फ़ौज को भी स्वीकार होगा। इस पर मम्मूजान राजा को ख़ास मकान में ले गया, और मीर वाजिदअली को भी बुलाया। वहाँ सब बेगमें भी एकत्र हुईं। बातचीत होने लगी। पर बेगमें एक-मत न हुईं। ख़ुर्दमहल ने कहा, अगर हम यहाँ अपनी मुहर कर दें, और वहाँ कलकत्ते में अँगरेज़ बादशाह को मार

डालें, तो क्या होगा। यह रंग-ढंग देखकर राजा जयलाल वहाँ से चले आए। हज़रतमहल निराश हो गईं। परंतु मम्मूजान ने राजा को समझाया, और कहा, मैं हज़रतमहल की ओर से एक ख़त फ़ौज को भेजता हूँ, जो मुनासिब होगा, फ़ौज करेगी। अस्तु, ख़त भेजा गया। वहाँ से जवाब आया, कल हम लोग आकर लड़के को देखेंगे।

५ जुलाई सन् १८५७ की शाम को ६ बजे फ़ौज के अफ़सर राजा जयलाल के साथ दीवानख़ाने में आकर बैठे। मिर्ज़ा रमज़ानअलीख़ाँ अललक़ब मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र तामजाम में सवार होकर आए, और वहाँ मसनद पर बैठे। अफ़सरों ने बातचीत शुरू की। कोई कहता था, लड़का छोटा है; कोई कहता था, लड़का सुंदर है, इससे क्या काम होगा। इस तरह बातचीत होने के बाद अफ़सरों ने ये शर्तें पेश कीं—

(१) दिल्ली के बादशाह चाहे इन्हें बादशाह स्वीकार करें, चाहे अपने अधीन वज़ीर बनावें।

(२) हमारा वेतन दूना किया जाय अर्थात् जहाँ अभी तिलंगा ६) पाता है, १२) पाए।

(३) जो नई पल्टन भरती की जाय, उसका अफ़सर हमारी सलाह से बनाया जाय।

(४) नायब दीवान हमारी सलाह से नौकर रक्खा जाय। उसकी बहाली-मौक़ूफ़ी में हमारी सलाह मानी जाय। राज का कोई काम बिना हम लोगों की सलाह के न हो सकेगा।

(५) हमारी जो तनख्वाह अँगरेज़ी सरकार के यहाँ बाक़ी है, वह भी हम लेंगे।

ये शर्तें लिखी गईं, और बिरजिसक़द्र की मुहर माँगी गई कि वह कागज़ में लगाई जाय। हकीम हसनरज़ा मुहर लेने गए, पर मुहर नहीं मिली। तब यह कहा गया कि कागज़ यहाँ छोड़ जाओ, कल मुहर करके तुम्हारे पास भेज दिया जायगा। अफ़सरों ने कहा, एक कागज़ से काम न चलेगा। इसकी नक़लें सब अफ़सरों के पास होनी चाहिए। अंत में उस पर मुद्दब्बिरुद्दौला आदि अफ़सरों की मुहरें की गईं, और वह कागज़ फ़ौज के अफ़सरों को दिया गया। उन्होंने कहा, आज ही गद्दीनशीनी हो जाय। कुछ ने कहा, क्या जल्दी है; परंतु अफ़सर न माने। सूर्यास्त हो रहा था। अलाउद्दीनख़ाँ, सैयद बरकतअहमद, १५वें रिसाले के रिसालदार ने उठकर मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र के सिर पर मंदील रख दी, और उनकी शुभ कामना की। फ़ौज के अफ़सरों ने तलवार नज़र की। फ़ैज़ाबाद के तोपख़ाने के सूबेदार जहाँगीरबख़्श ने २१ तोप की सलामी दागी।

जिस समय गद्दीनशीनी की क्रिया संपन्न हो रही थी, बड़ी गरमी थी, जिससे घबराकर बिरजिसक़द्र उठ खड़े हुए, और तामजाम में सवार होकर बाहर निकल आए। तिलंगे उन्हें देखकर फ़ौजी सलामी करने के बजाय कारतूस दागने लगे, जिससे डरकर मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र महल के भीतर

चले गए। यह देखकर कि तिलंगे महल के भीतर घुसने का इरादा कर रहे हैं, नायब रिसालदार क़ासिमख़ाँ ने महल की ड्योढ़ी पर पहरा बिठा दिया। इसी समय घमंडीसिंह सूबेदार की कंपनी अंड-बंड बकती हुई वहाँ आई। उसके सिपाही कहते थे, उनके सूबेदार को सलाह गद्दीनशीनी के संबंध में नहीं ली गई, और वे इन्हें बादशाह न मानेंगे। इसी क्रोध में उन्होंने रेज़ीडेंसी पर से अपना मोर्चा भी हटा लिया। बहुत समझाने-बुझाने और यह कहने पर कि हम तुम्हारे सूबेदार को राज़ी कर लेंगे, वे चुप हुए। अब शहर में यह मुनादी हुई कि खलक़ ख़ुदा का, मुल्क बादशाह दिल्ली का, हुक्म मिर्ज़ा बिरजिसक़दर का अब कोई किसी को शहर में न लूटे, वर्ना सज़ा पाएगा। परंतु तिलंगे लूट-मार करते ही रहे।

दूसरे दिन यह मुनादी हुई कि जो सिपाही, सवार, पैदल, गोलंदाज़, अफ़सर आदि सरकार में पहले नौकर थे, वे हाज़िर हों, सरकार उन्हें उनकी नौकरी देगी। फलतः सभी लोग हाज़िर हुए। उनसे यह तय किया गया कि जब तक मुल्क का इंतज़ाम न हो जाय, कोई तनख्वाह न माँगे। वे सब पहले की भाँति अपनी-अपनी जगह पर नियुक्त किए गए। तोपख़ाने के लोगों ने तोपें लाकर क़रीने से मोर्चों पर लगाईं, और दिल लगाकर काम करने लगे। इस प्रकार विद्रोही फ़ौज ने लखनऊ में एक बार फिर नवाबी राज्य स्थापित कर दिया।

गद्दीनशीनी के बाद नायब दीवान आदि नियुक्त करने का विचार होने लगा। किसी ने जनरल हिसामुद्दौला का नाम लिया, किसी ने मुनौवरुद्दौला का। मुनौवरुद्दौला के नाम का सब लोगों ने विरोध किया। नवाब शाहंशाहमहल ने मुक़ता-हुद्दौला से कहा कि इस पद को तुम स्वीकार कर लो। उन्होंने इनकार किया। तब फिर कहा कि जनरल का पद स्वीकार कर लो। तुम्हारे चचा इक़बालुद्दौला पहले जनरल थे भी। जब इससे भी इनकार किया, तब उनसे पूछा कि तुम्हीं बताओ, कौन आदमी नियुक्त किया जाय। उन्होंने कहा, शरफ़ुद्दौला मुहम्मद इब्राहीमख़ाँ से योग्य दूसरा आदमी नहीं है। आख़िर फ़ौज की पंचायत में शरफ़ुद्दौला का नाम पेश किया गया, और उनके नाम पर सब सहमत हो गए। केवल जवाहर-अलीख़ाँ ने कहा कि वह सुन्नी हैं, उनका नायब होना ठीक नहीं। जब सवेरे शरफ़ुद्दौला आए, तब मम्मूख़ाँ बिगड़े कि बिना मेरी आज्ञा लिए वह क्यों बुलाए गए। इसी समय सब अफ़सर घमंडीसिंह सूबेदार को ले आए। मम्मूख़ाँ से अब बातचीत हुई, और सब मामला तय हो गया। मम्मूख़ाँ शर-फ़ुद्दौला को ख़ास मकान में ले गए। उन्होंने बेगम साहब को ११ अशर्फ़ियाँ भेंट कीं। नवाब हिसामुद्दौला ने उठकर बेगम साहब के हाथ पर रख दीं। सैयद बरक़तअहमद क़ासिमख़ाँ उनकी तारीफ़ करने लगे। शरफ़ुद्दौला ने कहा, मैं इस घराने का पुराना खैरख्वाह हूँ, और सदा ताबेदारी करने को तैयार हूँ,

पर नायव दीवान का पद न लूँगा, यह कहकर वह चले गए। दूसरे दिन जब फिर आए, मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र ने ख़िलत मँगाकर दी। शरफ़ुद्दौला ने मजबूर होकर स्वीकार किया।

नायव का पद राजा बालकृष्ण को देने का निश्चय किया गया। उन्होंने पहले इनकार किया, पर जब सुना कि अगर वह नायव के पद की ख़िलत न लेंगे, तो फ़ौज के अफ़सर उन्हें लूट लेंगे, वह दरबार में गए, और चुपचाप ख़िलत स्वीकार कर ली। कोतवाल की ख़िलत मिर्ज़ा अलीवेग को, मुहतमिम रवंद को मीर नादिरहुसेन को और जनरल की हिसामुद्दौला बहादुर को दी गई। इसके बाद दरबारियों ने मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र, हज़रतमहल और शाहंशाहमहल को नज़रें दीं।

अमीरहैदर ख़ास कचहरी के मुंशी, मीर वाजिदअली ड्योढ़ी के दारोग़ा और मम्मूख़ाँ अललक़व अलीमुहम्मदख़ाँ बहादुर दीवान ख़ास के दारोग़ा बनाए गए। इस प्रकार अन्य आवश्यक अधिकारियों की नियुक्ति की गई।

इसके बाद ताल्लुक़ेदारों और ज़मींदारों को हुक्मनामे भेजे गए, जिनमें लिखा था, भगवान् की दया से हमारा मुल्क हमें मिल गया। तुम लोगों को चाहिए कि सब लोग मिलकर बेलीगारद के बचे हुए अँगरेज़ों को मार डालो। जो इस कार्य को पूरा करेगा, उसकी आधी जमा माफ़ कर दी जायगी, और इनाम तथा जागीर दी जायगी।

जनरल हिसामुद्दौला को १३ नई पल्टनें भरती करने का

हुक्म हुआ। खाँ अलीखाँ की निगरानी में फ़ौज की भरती का काम शुरू हुआ।

दूसरे हुक्मनामे के अनुसार निम्न-लिखित ज़मींदार और ताल्लुक़ेदार अपनी-अपनी फ़ौज लेकर लखनऊ आए थे—

(१) गोंडा के राजा देवीबख़्शसिंह ३ हज़ार

(२) गोसाईंगंज के ज़मींदार और ताल्लुक़दार अनंदी और खुशहाल ४ हज़ार

(३) सेमरौता के ज़मींदार राजा सुखदर्शनसिंह १० हज़ार

(४) सेमरौता वग़ैरह के ज़मींदार सहजरामबख़्श हज़ार २ फ़ौज और ३ तोपें

(५) गढ़ अमेठी के ताल्लुक़ेदार राजा लालमाधोसिंह बहादुर ५ हज़ार फ़ौज ४ तोपें और दो सौ सवार

(६) बैसवाड़ा के ताल्लुक़ेदार राना बेनीमाधोबख़्शसिंह बहादुर ५ हज़ार फ़ौज और ५ तोपें

(७) संडीला के हशमतअली चौधरी ४ हज़ार फ़ौज

(८) रसूलाबाद के मीर मनसबअली चौधरी १ हज़ार फ़ौज

(९) डलमऊ (बरेली) के ताल्लुक़े के खजूरगाँव के ताल्लुक़ेदार रघुनाथसिंह २ हज़ार फ़ौज और ४ तोपें

(१०) नानपारा के ताल्लुक़ेदार के कारिंदा कल्लूख़ाँ १० हज़ार फ़ौज

रेज़ीडेंसी का अवरोध

रेज़ीडेंसी का विद्रोही सेनाओं ने पहली जुलाई को ही सुदृढ़ घेरा डाल दिया। उनकी मदद के लिये जहँगीराबाद, मलिहाबाद और मनवा के ताल्लुक़ेदारों की भी फ़ौजें उसी दिन लखनऊ आ गईं। दूसरे दिन, २ जुलाई को, अहमदुल्लाशाह ने फ़ौज लेकर रेज़ीडेंसी पर धावा किया। उनकी सेना उसके फाटक तक पहुँच गई। फाटक की आड़ से शाहजी ने सिपाहियों को आगे बढ़ने के लिये बहुतेरा प्रोत्साहन दिया, पर उन्हें हिम्मत न हुई। इतने में ऊपर से बम का एक गोला आकर गिरा। शाहजी बकते-झकते भागे। सिपाही भी भाग खड़े हुए। धावा तो विफल हुआ, परंतु गोला-बारी होती रही, और इसी दिन एक गोला सर हेनरी लॉरेंस के लग गया। वह रेज़ीडेंसी की कोठी में बैठे काम कर रहे थे। गोला लगने से बुरी तरह घायल हो गए, और ४ जुलाई को सवेरे उनकी मृत्यु हो गई।

सर हेनरी की मृत्यु हो जाने से रेज़ीडेंसी के अँगरेज़ बड़े दुखी हुए। परंतु वह अपने मरने के पहले ही कर्नल इँगलिश और मेजर बैंक्स को अपना उत्तराधिकारी बना गए थे। इन दोनो अधिकारियों ने अपने कर्तव्य का पूर्ण रीति से पालन किया,

और आत्मरक्षा की व्यवस्था में किसी तरह की त्रुटि नहीं होने पाई। उधर विद्रोहियों की लगातार की गोली-वर्षा से घिरे हुए लोगों की अधिकाधिक मृत्यु हो रही थी। नित्य १५-२० आदमियों के मारे जाने का औसत पहुँच गया था। फलतः इस छिपी मार से व्याकुल होकर ७ जुलाई को गोरों का एक दल रेज़ीडेंसी के मोर्चों से बाहर निकला, और उसने जोहानेस के मकान पर धावा किया। इस मकान से विद्रोही लोग बड़ी भीषण मार कर रहे थे। गोरों के इस दल में ५० योरपियन और २० देशी थे। दोपहर के समय इस दल ने धावा कर उस मकान का दरवाज़ा बारूद से उड़ा दिया, और उसमें घुसकर विद्रोहियों को मारना शुरू किया। लगभग २० विद्रोही मारे गए। शेष भाग खड़े हुए। इसके बाद गोरे लौट गए। उनकी नाम-मात्र की हानि हुई।

गत दस दिन की गोला-बारी से जब रेज़ीडेंसी विद्रोही सिपाहियों के हाथ नहीं आई, तब उन्होंने उस पर फिर आक्रमण कर वहाँ के गोरों का क़त्ल कर डालने का निश्चय किया। इसकी ख़बर शाही महलों में पहुँची। बेगमें डर गईं कि इसका नतीजा अच्छा न होगा। फलतः अनेक बेगमें हज़रतमहल के पास गईं, और कहा कि अगर यहाँ गोरे मारे जायँगे, तो कलकत्ते में बादशाह वाजिदअली शाह और उनके साथ की बेगमों को फाँसी दे दी जायगी। तुमको क्या? तुम्हारा बेटा तो बादशाह हो गया न! हज़रतमहल ने भी इसका कड़ा

जवाब दिया। फिर उनमें खूब तू-तू मैं-मैं हुई। अंत में हज़रत-महल बिरजिसक़दर को लेकर उनके बीच से उठ गईं।

दूसरे दिन फ़ौज के अफ़सरों को महलों की इस लड़ाई का हाल मालूम हुआ। वे हज़रतमहल की ड्योढ़ी पर गए, और यह अर्ज़ की कि यहाँ के आदमी अँगरेज़ों से मिले हुए हैं, इससे हमारे काम में विघ्न पड़ रहा है। तो भी अब हम रेज़ीडेंसी पर धावा करेंगे, और जब तक उसे जीत न लेंगे, तनख्वाह न माँगेंगे; पर धावे के समय मोर्चों पर शरबत-पानी का प्रबंध रहे। बेगम साहब ने १६ जुलाई को फ़ौज के अफ़सरों के नाम धावा करने का हुक्म भेज दिया, और लिख दिया कि प्रत्येक मोर्चे पर मिठाई तथा मुरदे ढोने के लिये डोलियों का प्रबंध रहेगा।

१६वीं जुलाई को विद्रोहियों ने रेज़ीडेंसी पर भीषण आक्रमण किया। पहले उन्होंने एक सुरंग उड़ाई। यह सुरंग दस बजे उड़ी, परंतु इसका निशाना ठीक नहीं बैठा, और उससे रेज़ीडेंसी की क़िलेबंदी को कोई हानि नहीं हुई। इसके बाद गोला-बारी शुरू की गई, जिसकी आड़ में उन्होंने, अहमदुल्लाशाह के नेतृत्व में, धावा किया, और वे रेज़ीडेंसी की दीवार के नीचे ही नहीं पहुँच गए, बल्कि उनमें से कुछ सीढ़ी लगाकर खाई में मोर्चे के सामने जा कूदे। परंतु अँगरेज़ों ने ऐसी भयानक गोली-वर्षा की कि चार घंटे की लड़ाई में विद्रोहियों को भारी हानि उठाकर भाग जाना पड़ा। सैकड़ों जान से मारे गए।

उधर शाही महलों में यह ख़बर पहुँची कि रेज़ीडेंसी जीत ली गई, और वहाँ का सामान लुट रहा है। यह सुनकर महलों में प्रसन्नता छा गई, और राजकर्मचारी रेज़ीडेंसी जाने को तैयार हुए। इतने में ही यह ख़बर आई कि फ़ौज भाग आई है, और उसके बहुत-से आदमी मारे गए हैं। इसके सुनते ही क़ैसरबाग़ के फाटक बंद हो गए, और मोर्चों पर तोपें चढ़ा दी गईं। इस दिन शाम को चार बजे तक युद्ध होता रहा।

इधर भागकर आए हुए सिपाहियों ने यह शिकायत की कि यहाँ के लोग अँगरेज़ों के वसीक़ेदार हैं, और उन्होंने हमारे धावे की ख़बर उन्हें पहले से ही दे दी। वे बकते-झकते हुए 'ख़ास बाज़ार' को लूटने लगे, और कोतवाली के सिपाहियों को क़ैद कर लिया।

जब इस लूट की ख़बर बिरजिसक़दर को हुई, तब उन्होंने अफ़सरों और तिलंगों को बुलाया। घोड़े पर सवार होकर वह बाहर आए। ३३ तोप की सलामी दाग़ी गई। उन्होंने तिलंगों की प्रशंसा की। अंत में कहा, तुम लोग शहर को लूटते हो। यह दुख की बात है। यह लूट-पाट बंद होनी चाहिए। अफ़सरों ने कहा, आगे ऐसा न होगा। पर तिलंगों ने कहा कि हमारे पेट की सुध ली जाय। हम खायँ क्या? तनख़्वाह दो, वर्ना शहर इससे ज्यादा लुटेगा। उन्होंने नहीं सुना और छ महीने तक शहर रोज़ लुटता रहा।

हज़रतमहल बेगम के पास कुल २४ हज़ार रुपया था।

जब वह रुपया ख़र्च हो गया, तब मुफ़ताहुद्दौला से ख़ज़ाना माँगा गया। उन्होंने कहा, ख़ज़ाने में चाँदी-सोने के असबाब के सिवा नक़द कुछ नहीं। उनसे ख़ज़ाने की चाभियाँ लेकर सिक्का ढालने का विचार हुआ। इसके बाद नवाब माशूक़महल का माल-असबाब अफ़सरों और अहलकारों ने लूटा। इसके बाद वज़ीरख़ाँ मुहम्मदबख़्श और दारोग़ा हुज़ूरआलम पकड़ आए। उन पर सख़्ती की गई, पर उन्होंने कुछ भी बताने से इनकार किया। ये दोनों क़ैद किए गए। फिर भेदियों ने सात फ़ीसदी पाने के लोभ से नवाब के ख़ज़ाने का भेद मम्मूख़ाँ को बता दिया। रात में मम्मूख़ाँ, राजा जयलालसिंह, यूसुफ़ख़ाँ, हैदरख़ाँ आदि नवाब के घर गए। वहाँ एक सहनची खोदी गई, जिसमें ५ लाख रुपया निकला। उसे वे लोग हाथियों-छकड़ों पर लादकर उठा ले गए। इस आमदनी का हाल पाकर बेगम साहब बहुत ख़ुश हुई। उधर मम्मूख़ाँ और उनके भाई-बंधु मालामाल हो गए।

अब बाग़ी फ़ौज ने सरकार से गोली-बारूद की माँग की। तिलंगे गोल बनाकर शहर में घूमते-फिरते या बाज़ार में बैठकर, डफली बजाकर भजन गाते। एक दिन वे कहीं से तीस रुपए का माल उठा लाए। मम्मूख़ाँ ने उसे लेकर सरकार में जमा कर दिया, और तिलंगों को सौ रुपए इनाम दिए, और उनकी तारीफ़ की। उनका मन बढ़ गया। एक दिन वे नवाब मुमताज़ुद्दौला का ५० हज़ार रुपए का माल लूट लाए।

मम्मूख़ाँ ने उसे भी सरकार में जमा कर लिया, और पहले की तरह उन्हें इनाम दिया। इसके बाद नवाब अफ़सर बहू साहबा के घर का माल लाए। कई शाही बेगमों ने मम्मूख़ाँ से इस बात की शिकायत की, पर उन्होंने ध्यान नहीं दिया।

निदान बाग़ी फ़ौज शहर के रईसों को चुन-चुनकर लूटने तथा ज़लील करने में लगी हुई थी। सुलतान मरियम के भाई जोज़ेफ़ शार्ट और उनके दामाद जोज़ेफ़ जॉनसन को कोतवाल ने क़ैद से छोड़ दिया था। वह दौलतगंज में जाकर हसनअलीख़ाँ थानेदार के यहाँ ठहरे। वहाँ से मिर्ज़ा मुहम्मदतक़ीख़ाँ अपने यहाँ ले आए, और मंसूरनगर में अपने मकान के पास ठहराया। जो पास था, तिलंगे पहले ही ले-दे चुके थे। कुछ ज़ेवर रह गया था, उसे बेचकर गुज़र करते थे, और मुहम्मदतक़ीख़ाँ को भी कुछ दिया करते थे। एक बार उनके बेटे ने भी कुछ माँगा। जब न मिला, यूसुफ़अली से जाकर कह दिया कि हमारे मुहल्ले में अँगरेज़ आकर छिपे हैं। इन्होंने मम्मूख़ाँ से कहा। उन्होंने तिलंगे भेजकर क़ैद करवा मँगाया। उनके साथ मुहम्मदतक़ीख़ाँ भी क़ैद होकर आए। सब बेगम साहब के सामने पेश किए गए। तिलंगे सबको गोली मार देना चाहते थे। मुफ़्ताहुद्दौला ने जब कहा कि ये मुसलमान हैं, सारा शहर जानता है, तब उनकी रिहाई हुई, और वे मीर वाजिदअली की देख-रेख में रक्खे गए। इस प्रकार उनकी जान बची।

फ़ौज ने मुनौवरुद्दौला और दिलवरुद्दौला को भी लूटना चाहा। पर वे पहले से ही सावधान हो गए थे, और अपनी रक्षा का प्रबंध कर लिया था। उनका रंग-ढंग देखकर तिलंगों को उन पर हाथ डालने की हिम्मत न पड़ी। जब दरबार में जाने लगे, तब भी अपने रक्षकों के साथ जाते थे। उन्हें इलाहाबाद का सूबा दिया जा रहा था, परंतु अपनी वृद्धावस्था का बहाना कर वह काम लेने से इनकार किया। पिछले दिनों उन्हें नजीबी फ़ौज की जनरली की खिलत दी गई थी ; पर वे एक दिन के लिये भी मोर्चे पर नहीं गए।

इधर लखनऊ में विद्रोही दल में इस प्रकार विशृंखलता फैली हुई थी, उधर अँगरेज़ी सेना ने इलाहाबाद से आकर कानपुर पर अधिकार कर लिया, और नानाराव को बिठूर से मार भगाया।

रेज़ीडेंसी के उद्धार का प्रयत्न

गवर्नर जनरल लॉर्ड केनिंग को मेरठ के विद्रोह की सूचना १२ मई को मिल गई थी, और १४ मई को उन्हें मेरठ और दिल्ली के विद्रोह का ब्योरेवार हाल मालूम हो गया था। उसी दिन से वह विद्रोह के दमन करने का उपाय करने लगे। उन्होंने बंबई के गवर्नर को तार दिया कि ईरान के युद्ध से जो सेना लौट रही है, वह जल्द-से-जल्द कलकत्ते भेजी जाय। मदरास में ४३वीं और पहली मदरास-फ़ुसीलियर्स नाम की गोरी सेनाएँ थीं। उन्हें तुरंत कलकत्ते भेज देने की आज्ञा दी। पेगू से ३५वीं को ले आने के लिये जहाज़ भेजा। पश्चिमोत्तर-प्रांत के लेफ़्टिनेंट गवर्नर को १६ मई को तार दिया कि वह पंजाब के चीफ़ कमिश्नर जॉन लॉरेंस से कहें कि पंजाब की गोरी और सिक्ख-सेना को दिल्ली पर चढ़ाई करने के लिये जल्द-से-जल्द भेजें। १६ मई को सीलोन के गवर्नर को तार दिया कि जो गोरी सेना चीन को जा रही है, उसे मेरी ज़िम्मेदारी पर कलकत्ते भेज दो। यह सब उन्होंने किया, परंतु वह विद्रोह को तो किसी तरह न रोक सकते थे। वह तो दिल्ली से लखनऊ तक चारो ओर फैल गया था, और सेना के अभाव में लॉर्ड केनिंग कुछ भी कर-धर न सके।

प्रधान सेनापति उस समय शिमला में थे। जो फ़ौज एकत्र कर सके, उसे लेकर उन्होंने दिल्ली पर आक्रमण करने के लिये १४ मई को प्रयाण किया। परंतु मार्ग में ही, करनाल में, २७ मई को, हैज़े से, उनकी मृत्यु हो गई। उनके स्थान पर सर पेट्रिक ग्रांट प्रधान सेनापति बनाए गए। वह मद्रास से १७ जून को कलकत्ता पहुँचे, और तत्परता के साथ उन साधनों के जुटाने में लग गए, जिनसे गोरी सेना विद्रोहियों का दमन करने के लिये कलकत्ते से सुदूर स्थानों को भेजी जा सकती। यद्यपि वहाँ काफ़ी गोरी सेना एकत्र न हो सकी थी, तथापि उन्होंने २० जून को जनरल हेवलक को कानपुर और लखनऊ मदद पहुँचाने के लिये रवाना किया। वह ईरान के युद्ध से लौटे थे। कलकत्ते से चलकर १२ जुलाई को वह इलाहाबाद पहुँचे। यहाँ के १४०० गोरों का उन्होंने सेनापतित्व ग्रहण किया। उन्हें लेकर मार्ग में विद्रोहियों को हराते हुए वह कानपुर पहुँचे, और १७ जुलाई को उसे विद्रोहियों के हाथ से छीन लिया। अब उन्होंने लखनऊ में घिरे हुए अँगरेज़ों की मदद के लिये जाने का विचार किया। इसके लिये उन्होंने गंगा में पुल बनाने का हुक्म दिया, ताकि सेना और युद्ध-सामग्री उस पर से भेजी जाय।

कानपुर के घाट में जो लोग देख-भाल के लिये नियुक्त थे, उनका हरकारा लखनऊ आया, और यह ख़बर दी कि गोरे अग्नि-बोट पर चढ़कर आए और देख-भालकर लौट गए।

ऐसा जान पड़ता है कि वे इस पार आना चाहते हैं। यह ख़बर सुनते ही बेगमों और बाग़ी फ़ौज में घबराहट फैल गई। जनरल हिसामुद्दौला को आज्ञा दी गई कि फ़ौज लेकर घाट पर जायँ, और गोरी फ़ौज को इस पार न उतरने दें। जनरल साहब ने सब अफसरों से फ़ौज लेकर घाट पर जाने को कहा, पर सब टालमटूल करते रहे। इस प्रकार कई दिन बीत गए। बड़ी कोशिश करने के बाद दो तोपख़ाने और चार पल्टनें जाने को तैयार हुईं। पर ये भी रवाना होने के लिये आज-कल करने लगीं। इसी बीच में बशीरगंज में वहाँ के कुमेदान मुहम्मद मिर्ज़ा को ख़बर मिली कि अँगरेज़ी फ़ौज गंगा में पुल बनाकर इस पार उतरने की तदबीर कर रही है। कुमेदान ने शाही दरबार को सूचना दी कि गोरों का इस पार उतरना रोकने के लिये जल्द फ़ौज भेजी जाय। अब जनरल बहादुर ख़ुद जाने को तैयार हुए। परंतु प्रस्थान करते समय उन्होंने अपनी जगह अपने सहायक सेनापति को भेज दिया। वह उस समय कुछ बीमार थे, और इस यात्रा में कभी ख़ीमे से बाहर नहीं निकले। अपने भाई के कहने से गए थे। मीर फ़िदाहुसेन कप्तान और उनके भाई मुहम्मदहुसेन कलेक्टर तथा अब्दुल हादीख़ाँ क़ंधारी नवाब के ख़ास मित्र थे। ये लोग सेना के साथ बड़ा जोश दिखलाते हुए गए।

एक दिन घाट पर ख़ब पानी बरसा। फ़ौज और उसके

सामान की बुरी दशा हो गई। अँगरेज़ों ने इस अवसर पर राह बाँध ली। इस पार जो तोप लगी थी, उसकी मार से वे अब तक राह न बाँध पाए थे।

२१ जुलाई को ब्रेगेडियर जनरल हेवलक ने अँगरेज़ी सेना को कानपुर से नावों द्वारा गंगा पार उतारना शुरू किया, और २५वीं को ख़ुद भी पार उतर गए। उनके इस काम में विद्रोहियों की ओर से कुछ भी बाधा नहीं डाली गई। गंगा के किनारे से छ मील चलकर उन्होंने मगरवारा जाकर २६वीं की रात को पड़ाव डाल दिया। यहाँ वह दो दिन ठहरे रहे। उनके साथ कुल १५०० सिपाही थे। २९वीं को सबेरे सेना ने कूच किया, और तीन मील चलकर उन्नाव के समीप जा पहुँची। यहाँ विद्रोहियों की सेना उनका मार्ग रोकने को मौजूद थी। पहुँचते ही अँगरेज़ी सेना ने आक्रमण कर दिया। विद्रोहियों ने डटकर युद्ध किया। परंतु वे अँगरेज़ों की मार के आगे ठहर न सके, और उन्हें हारकर भागना पड़ा। उनकी १५ तोपें अँगरेज़ों के हाथ लगीं, तथा ३०० आदमी भी मारे गए।

उन्नाव के इस युद्ध में विद्रोहियों का कुछ दूर तक पीछा करने के बाद अँगरेज़ी सेना तीन घंटे के लिये ठहर गई, और उसने खाया-पिया। इसके बाद छ मील चलकर वह बशीरगंज पहुँची। यह गंज पक्की दीवार से घिरा हुआ था, और सड़क इसके बीच से गई थी। गंज के दोनो सिरों पर फाटक थे, जिन पर तोपें चढ़ी हुई थीं। यह एक सुदृढ़ स्थान

था। इसके भीतर से विद्रोही आक्रमणकारी सेना से रक्षित रहकर युद्ध कर सकते थे। परंतु जनरल हेवलक की बुद्धिमानी से यहाँ भी विद्रोही डटकर युद्ध न कर सके, और उन्हें अँगरेज़ी तोपों की मार खाकर बुरी तरह भागना पड़ा। अँगरेज़ी सेना ने रात को बशीरगंज में विश्राम किया। सवेरे हेवलक को मालूम हुआ कि नाना साहब उनके पीछे सेना लिए पड़े हैं। इसके सिवा उनके पास घायलों और रोगियों की संख्या अधिक हो गई थी, अतएव वह ३० को फिर मगरवारा लौट पड़े।

३० जुलाई, १८५७ को लखनऊ ख़बर आई कि कानपुर का रिसाला और फ़ौज भागी चली आ रही है। राजा जयलाल-सिंह ने बेगम से कहा कि शहर के नाकों में जो तिलंगे नियुक्त थे, वे गोरों के आने की बात सुनकर, डरकर भागे जा रहे हैं। हाँ, मेरे सिपाही जो जहाँ हैं, डटे हुए हैं। ऐसी दशा में यदि गोरे शहर में घुस आवें, तो कोई आश्चर्य नहीं। यह सुनकर सभी अहलकार डर गए। जनरल हिसामुद्दौला और शर्फ़ुद्दौला को बुलाया गया। सलाह-मशविरा होने लगा, पर डर के मारे कोई एक राय न ठहरी। फ़ौज के अफ़सर बुलाए गए। वे और भी डरे हुए थे, तो भी डींग मारने से नहीं चूके। कहने लगे, हम तो इसी दिन की राह देखते थे। मैदान में गोरे आवें तो, चिनहट की तरह फिर मार लेंगे। फिर वे थोड़े ही हैं। बेगम साहबा ने कहा, गोरे शहर के नज़दीक आ गए हैं। उन्हें रोकने के लिये किसी को भेजो। उन्होंने कहा, हम तो जायँगे ही, परंतु

इस बार निज़ामतवालों को भेजो। निज़ामतवाले कहने लगे कि यह काम तुम्हारा है। हम तो इसघराने के पुराने ख़ैरख़्वाह हैं। जब मौक़ा आवेगा, निछावर हो जायँगे। इसी तरह तकरार होती रही, और कोई आगे न आया। अंत में नसरतजंग राजा जयलालसिंह लाचार होकर, अपनी फ़ौज लेकर शहर के नाकों पर गए, और जगह-जगह पर अपने आदमी बिठा दिए, और रौंद होने लगी।

४ अगस्त की संध्या को हेवलक ने दूसरी बार लखनऊ की ओर कूच किया। उन्नाव के एक मील आगे जाकर पड़ाव डाल दिया, और रात-भर विश्राम किया। इधर बशीरगंज में विद्रोही सेना पड़ी थी। ५ अगस्त को विद्रोही सेना में एक जासूस आया। उसने कहा, अँगरेज़ी फ़ौज अभी बहुत दूर पड़ी हुई है, तब तक तुम लोग अपना खाना-पीना कर लो। उसके चकमे में आकर सिपाही रोटी बनाने लगे। इतने में अँगरेज़ी फ़ौज आती हुई दिखाई दी। उसके आगे कई सौ जानवर थे। फ़ौज के अफ़सरों ने अपनी तोपें सड़क से हटाकर उसके इधर-उधर लगाने का प्रयत्न किया, परंतु वे दलदल में फँस गईं। इतने में अँगरेज़ी फ़ौज सिर पर आ गई। यह देखकर फ़ौजी भागने लगे। उनसे पहले सवार भागे, और लखनऊ में चौपट के अस्तबल में जाकर दम लिया। कुछ फ़ौज ने एक ओर हटकर अपना मोर्चा लगाया, और अँगरेज़ों से लड़ने का रुख़ किया।

जनरल हेवलक ने अपने पहले के अनुभव से लाभ उठाकर इस बार और भी सावधानी से विद्रोहियों पर आक्रमण किया। विद्रोही अँगरेज़ों की तोपों की मार न सह सके, और वे भाग खड़े हुए। उनके २५० आदमी मारे गए। अँगरेज़ी सेना में २३ आदमी घायल हुए, और २ मारे गए। सवार-सेना के अभाव में अँगरेज़ी सेना उनका पीछा न कर सकी, और वे अपनी तोपों-सहित बचकर निकल गए। सहायक सेनापति नवाब साहब तो पीनस पर सवार होकर पहले ही लखनऊ आ गए। थोड़ी-सी बाग़ी फ़ौज रह गई थी। वह अपनी चाल से दम लेती हुई लखनऊ लौट आई। उधर नवाबगंज में मुहम्मदहुसेन कलेक्टर और ख़ान अलीख़ाँ दस हज़ार सेना लिए ठहर गए। ज़मींदारों की गुहार का सेना भागकर सबसे पहले लखनऊ पहुँची।

शत्रुओं को परास्त करने पर भी उपयुक्त सेना के अभाव में अँगरेज़ी सेना आगे न बढ़ सकी। वह फिर मगर-वारा-छावनी लौट आई।

अँगरेज़ी फ़ौज ने इस धावे में मगरवारा, उन्नाव, अजगैन तथा सड़क के पास के दूसरे गाँवों को लूटा-फूँका, और जिसे पाया, मार डाला।

अब बाग़ी फ़ौज के अफ़सरों के कान खड़े हुए। उन्होंने दरबार के अहलकारों से कहा कि अब कोई प्रबंध जल्दी करना चाहिए, नहीं तो गोरे आकर शहर पर अधिकार कर

लेंगे। मीर वाजिदअली ने उनसे कहा कि हम लोग इसका क्या प्रबंध करें। यह तुम लोगों का काम है। चाहे भागो, चाहे लड़ो। हम लोग लड़ना-भिड़ना क्या जानें। इस पर अफ़सर लोग बहुत बिगड़े, और अहलकारों को अंड-बंड कहने लगे।

इसके बाद ख़बर आई कि गोरे मगरवारा लौट गए हैं और वहाँ धुस बना रहे हैं। और, जब धुस बन जायगा, तब कुछ किया न होगा। हुक्म हुआ कि फ़ौज जाकर उन्हें धुस बनाने से रोके। फलतः शोभासिंह, ख़ाँ अलीख़ाँ, सहायक सेनापति नवाब साहब तोपख़ाना, मेगज़ीन, अख़्तरी-नादरी फ़ौज और नजीबी पल्टनें लेकर चले। शहर से आलमबाग़ तक फ़ौज का मेला लग गया। इसी बीच उधर से हज़ारों तिलंगे और नजीबी भागे चले आ रहे थे। वे सब आकर आलम-बाग़ में ठहरे। मम्मूख़ाँ ने गोरों की ख़बर लेने के लिये एक शुतुर-सवार भेजा, और इस फ़ौज को कहला भेजा कि जल्दी बशीरगंज पहुँच जाय, परंतु वह अभी आलमबाग़ में ही ठहरी थी। अफ़सरों ने कहा, जब तक हमारे पेट का प्रबंध न किया जायगा, हम आगे न जायँगे। मम्मूख़ाँ को यह भी मालूम हुआ कि अहमदुल्ला शाह ने फ़ौज को कहला भेजा है कि अगर तुम बेगम के हुक्म से लड़ने जाते हो, तो उन्हीं से तनख़्वाह भी लेना। लाचार होकर उन्होंने बीस हज़ार रुपया आलमबाग़ भेजा। मीर मुहम्मद-

हुसेन कलेक्टर ने फ़ौज का चिट्ठा बाँट दिया। दूसरे दिन हुक्म हुआ कि वशीरगंज से फ़ौज जल्दी रवाना हो। यहाँ से भी फ़ौज जल्दी जायगी।

जब जनरल हेवलक को ख़बर मिली कि विद्रोही फिर बशीरगंज लौट आए हैं, तब उन्होंने उन पर फिर एक वार आक्रमण करने का विचार किया। ११ अगस्त की दुपहर के बाद उन्होंने सेना कूच की। रात-भर उन्नाव में ठहरे रहे। दूसरे दिन बशीरगंज रवाना हुए। इस बार डेढ़ मील आगे बढ़कर विद्रोहियों ने बुढ़िया गाँव में अँगरेज़ी सेना का सामना किया। परंतु वे शीघ्र ही मार भगाए गए। उनके ३०० से ऊपर आदमी मारे गए। शोभासिंह की पल्टन ने बड़ी बहादुरी से युद्ध किया, और उसके बहुत-से आदमी मारे गए। अँगरेज़ी सेना को ३२ आदमियों की हानि उठानी पड़ी। अँगरेज़ी सेना फिर मगरवारा लौट आई।

विद्रोहियों की प्रबलता और रेज़ीडेंसी का संकट-काल

अब यह ख़बर आई कि जब इधर फ़ौज भाग आई, तब उधर गोरे भी कानपुर को भाग गए। कोई राजा आ पहुँचा था, और वे थोड़े ही थे। यह सुनकर बाग़ी फ़ौज मगरवारा जा पहुँची। गोरे जो सामान छोड़ गए थे, उसे लूट लिया, धुस की लकड़ी तोड़ डाली। और, जो छ तोपें गोरे तोड़कर छोड़ गए थे, उन्हें अपने साथ लखनऊ ले आए, और अपनी जीत की डींगें मारने लगे।

अब फ़ौज ने वेलीगारद पर फिर धावा करने का इरादा किया। परंतु आगे कौन जाय? इस्माइलगंज के मोर्चे में लछमिनिया नाम की एक बड़ी तोप पड़ी हुई थी। इस तोप की मार से वेलीगारद के गोरे बहुत हैरान थे। तिलंगों ने जाकर, धुस बनाकर इस तोप को लगाया। इस मोर्चे पर राजाओं और जमींदारों के सिपाही थे। यहीं मीर हस्सू के मकान में अमजदअलीख़ाँ वलोच और लुत्फ़अली दारोग़ा के मकान में नवावअलीख़ाँ का पड़ाव था। इस मोर्चे पर कम-से-कम पाँच-सौ सिपाही हमेशा मौजूद रहते थे। एक दिन कुछ गोरे वेलीगारद से निकल आए, और उक्त तोप की ओर बढ़े। गोरों को देखकर सिपाही भाग खड़े हुए। कुछ घबराकर नदी में डूब गए, कुछ हथियार छोड़कर पड़ोस के मकानों में जा छिपे। दस आदमी दारोग़ा साहब के मकान में मारे गए। तीस गोलंदाज़ मारे गए, और तोप को गोरों ने तोड़ डाला। संडीला के अमजदअलीख़ाँ ने वावू पूरनचंद के मकान से गोरों पर गोलियाँ चलाईं। गोरे गिर पड़े। जो बचे, वेलीगारद चले गए। एक की लाश रह गई थी, उसका सिर लेकर नवाब साहब के पास गए, और कहा कि हुज़ूर के इक़वाल से गोरे भाग गए। चार गोरों को मैंने मार गिराया, जिनमें से एक का सिर काट लाया हूँ। नवाब ने उनकी बहादुरी की तारीफ़ की। अमजदअलीख़ाँ ने निवेदन किया कि उनके नौकरों को हथियार दिए जायँ, जो तुरंत दिए गए।

उस दिन शहर में यह गप उड़ी कि गोरों ने वेलीगारद से निकलकर लछमिनिया तोप को तोड़ डाला है, और अब वे क़ैसरबाग़ पर धावा करने का इरादा कर रहे हैं। इस ख़बर के उड़ते ही क़ैसरबाग़ में भगदड़ मच गई। तिलंगे अपना माल-असबाब बाँध-बाँधकर भागने लगे। यह हाल देखकर बेगम साहबा ने सारे फाटक बंद करवा लिए। इस पर उन लोगों ने रोना-चिल्लाना शुरू किया, और कोई-कोई तलवार चमकाते हुए यह डींग मारने लगे कि गोरों के आने पर ख़ूब मार करेंगे।

वस्तुतः इसी तरह की लड़ाई हुआ करती थी, सुरंगें भी उड़ाई जाती थीं। गोरे भी सुरंग उड़ाते थे। कई महीने तक इसी तरह की लड़ाई का सिलसिला जारी रहा।

राजा मानसिंह को कई हुक्मनामे भेजे गए। उन्हें लिखा गया कि तुम अँगरेज़ों से मिले हुए हो, तुमने अपने यहाँ बहुत-से अँगरेज़ों को शरण दी है। यहाँ दरबार में हाज़िर हो, नहीं तो सरकारी सेना पहुँचकर तुम्हारी बुनियाद मिटा देगी। राजा ने अपने मुख्तार माताप्रसाद को भेजा। उसने कहा कि राजा आने को तैयार हैं, और वेलीगारद अकेले जीत लेंगे, परंतु तिलंगे अलग रहें, और किसी तरह की दस्तंदाज़ी न करें। इसके सिवा फ़ौज का ख़र्च दिया जाय। उसे हुक्म हुआ कि राजा के हाज़िर होने पर उनके इच्छानुसार ही काम होगा। जब राजा ने देखा कि जनरल

हेवलक वशीरगंज तक तीन वार आकर कानपुर लौट गए, तव विद्रोहियों का पक्ष प्रवल समझकर, वह सात हज़ार फ़ौज लेकर आए। जव फ़ौज ने राजा की शर्तें सुनीं, तव उसने नाराज़ी प्रकट की। उसने कहा, अगर राजा विना हमारी मर्ज़ी के आवेंगे, तो हम दिल्ली चले जायँगे, और वादशाह से कहेंगे कि विरजिसक़द्र के पास जो लोग हैं, सव अँगरेज़ों से मिले हुए हैं। राजा ने अपना वकील फ़ौजों के कप्तान—उमरावसिंह, जयपालसिंह, रघुनाथसिंह और घमंडीसिंह—के पास भेजा, और पाँच हज़ार रुपए फ़ौजों के जनरल सैयद वरक़तअली के पास भेज दिए।

अव अफ़सरों की सभा हुई। जो हुक्म हुआ, उसे राजा जयलालसिंह ने पढ़ा। यह हुक्म हुआ कि राजा को आने दो। सिवा अधीनता स्वीकार करने के क्या कर सकते हैं? यहाँ किसी मोर्चे पर भेज दिए जायँगे।

अंत में राजा धूमधाम के साथ शहर में आए, और दरवार में हाज़िर हुए। हज़रतमहल और विरजिसक़द्र को ११ मुहरें भेंट कीं। उन्हें दुशाला और रूमाल दिया गया। राजा ने अकेले में कुछ निवेदन करने को कहा। वेगम साहवा ने कहा कि मम्मूख़ाँ और वाजिदअली हमारे शुभ-चिंतक हैं। इनके सामने वातचीत करने में कोई हर्ज नहीं। राजा ने कहा, ये तिलंगे सिर्फ़ मैदान की लड़ाई जानते हैं, क़िले जीतना नहीं जानते। इधर हम सैकड़ों क़िले फ़तह कर चुके

हैं। बेलीगारद की क्या बिसात है? एक दिन में ख़ाली करवा लूँगा। लेकिन मुझे अकेले चढ़ाई करने दिया जाय, और फ़ैज़ाबाद का सारा इलाक़ा मिले। बेगम साहबा ने कहा, सलाह करके जवाब दूँगी। परंतु पहले अँगरेज़ों को मारकर बेलीगारद पर क़ब्ज़ा करो। इसके बाद जो कहोगे, करूँगी। इतने में वहाँ कई कप्तान आ गए। उन्होंने राजा को ख़ूब डाँटा, और कहा कि अगर यहाँ आए हो, तो अपना मोर्चा हमारे साथ लगाओ। राजा का मोर्चा शेरदरवाज़ा और अस्तबल में लगाया गया।

इसके बाद तीन परवाने भेजे गए। एक रुइया के नरपतसिंह ताल्लुक़ेदार को, दूसरा कटियारी के ताल्लुक़ेदार हरदेवबख़्शसिंह को और तीसरा राजपुर के ताल्लुक़ेदार दुनियासिंह को। इन्हें लिखा गया कि अँगरेज़ी फ़ौज तुम्हारे इलाक़े के किसी घाट से उतरने न पावे, उसका डटकर मुक़ावला किया जाय, तथा कुमक लेकर लखनऊ में हाज़िर हो। मल्लावाँ-ज़िले के इन तीनो ताल्लुक़ेदारों ने परवाने ले लिए, और सिपाही की ख़ातिरदारी की। नरपतसिंह ने लिखा कि मेरे ताल्लुक़े से अँगरेज़ी इलाक़ा नज़दीक है, इसलिये मेरा लखनऊ आना ठीक नहीं। अगर इधर अँगरेज़ गंगा-पार करेंगे, तो हुज़ूर के इक़बाल से मारे जायँगे।

बाँगरमऊ के ज़मींदार माखनसिंह, उसमानपुर के ज़मींदार मीर ग़ुलाम जाफ़र, इलाक़ा साँड़ी के बावन के ज़मींदार मीर

आलमअली, इलाक़ा सलोन के भोली के ज़मींदार भीखमख़ाँ आदि हुक्मनामे के अनुसार नहीं हाज़िर हुए।

कुछ राजे, जैसे कालाकाँकर के राजा हनुमानसिंह, सुलतानपुर-इलाक़ा के तरौल के ताल्लुक़ेदार बाबू गुलाबसिंह आदि चकले-दारों के साथ होकर अँगरेज़ी फ़ौज से ख़ूब लड़े।

कुछ राजे अपनी फ़ौज लेकर लखनऊ आए। अपना ख़र्च अपने पास से देते थे। कुछ को सरकार से ख़र्च मिलता था।

ज़मींदारों, ताल्लुक़ेदारों और राजाओं की जो सेनाएँ लखनऊ में एकत्र हुई थीं, संख्या में १,५०,५०० थीं।

विद्रोहियों की असफलता और उनका अत्याचार

लखनऊ में विद्रोहियों की धूम थी। रेज़ीडेंसी पर उनके गोले बरसते रहते थे। गोरे भी अपनी रक्षा करने में पूर्ण रूप से कटिबद्ध थे। मौक़ा पाने पर रेज़ीडेंसी से निकलकर धावा भी करते थे। ऐसा ही एक धावा उन्होंने ६ अगस्त को किया। विद्रोहियों के एक मोर्चे पर पहुँचकर वहाँ से उन्हें मार भगाया, और तोपें बेकार कर राज़ी-ख़ुशी लौट गए।

अब हरकारा यह ख़बर लाया कि कानपुर की पलटन, फ़िदा-हुसेन का तुर्क-सवारों का दूसरा रिसाला और तोपख़ाना भागकर शहदरे के पास आकर ठहरा है, और गोरे अभी तक गंगा-पार नहीं उतरे। यह सुनकर कहा गया कि अगर धावा करके कल बेलीगारद ले लिया जाय, तो ख़ैर है, नहीं तो गोरों के आ जाने पर फिर कुछ करते-धरते न बनेगा। फ़ौज के अफ़सर भी इस बात से सहमत हो गए और सबने क़सम ली कि कल बेलीगारद पर ज़रूर धावा करेंगे।

फलतः १० अगस्त को सब पलटनें और रिसाले अपनी-अपनी जगह धावे के लिये तैयार होने लगे। बाग़ी फ़ौज के जनरल सैयद बरकातअहमद अपना रिसाला और फ़ौज

लेकर वेलीगारद की ओर चले। तिलंगों ने जाकर वेलीगारद को हर तरफ़ से घेर लिया। शाहजी सवार होकर आए, और कहने लगे, धावा नाहक़ हो रहा है। जब तक मैं न कहूँगा, कुछ न होगा। यह कहकर चले गए। तिलंगे 'बम महादेव' कहते हुए वेलीगारद पर चढ़ दौड़े, पर रिसाला और तोपख़ाना ख़ास बाज़ार से आगे न बढ़ा। कह रक्खा गया था कि जब तोप दगे, धावा किया जाय। आख़िर तोप दगी, और तिलंगे वेलीगारद की दीवार के पास पहुँच गए। ११ बजे के लगभग एक सुरंग में आग दी गई, पर वह नहीं उड़ी। तिलंगे वेलीगारद की दीवार खोदने लगे। कुछ तिलंगे गिरजे की तरफ़ से और कुछ ख़ज़ाने की तरफ़ से आगे बढ़े। मम्मूख़ाँ के पास हरकारा यह ख़बर लाया कि धावा हो गया है, और गोरों से संगीनें चल रही हैं, ख़ज़ाने और मेगज़ीन पर तिलंगों का अधिकार हो गया है; गोरे विलायतीमहल के भाई अमीर मिर्ज़ा के मकान में जा छिपे हैं, मदद भेजो। हरकारे बार-बार ऐसी ही ख़बरें लाते, और कहते कि गोरे सब-के-सब मारे गए, और जो थोड़े-से रह गए हैं, गोलियाँ चला रहे हैं। मम्मूख़ाँ ख़ुश हो रहे थे, और बेगम साहबा से कह रहे थे कि आज वेलीगारद पहर रात तक ज़रूर अपने क़ब्ज़े में आ जायगा। बेगम साहबा को सारी रात नींद नहीं आई। सवेरे मीर वाजिदअली ने अपना विश्वासी जासूस भेजकर पता लगाया। उसने आकर कहा, न कोई तिलंगा ख़ज़ाने तक गया है, न कोई

अंदर फँसा है। तिलंगे केवल बेलीगारद की दीवार तक गए। उन्होंने जाकर यह सब बेगम साहबा से कहा। उस ख़बर को सुनकर बेगम साहबा को आश्चर्य हुआ। बाद को घायलों का पर्चा आया। २२० मारे गए, लाशें छूट गईं, १०५ घायल हो गए। अब तिलंगे यह कहने लगे कि जब तक जनरल मम्मूख़ाँ साथ न जायँगे, हम लोग धावा न करेंगे। शाहजी शुरू से ही रूठे हुए थे। लखनऊ में विद्रोही दल में कैसा सहयोग था, यह उपर्युक्त वर्णन से स्पष्ट हो जाता है।

एक आदमी ने बेगम साहबा को यह ख़बर दी कि जो फ़ौज कानपुर से भागकर आई है, वह कहती है, अगर हमें हुक्म दिया जाय, तो हम धावा कर बेलीगारद पर क़ब्ज़ा कर लेंगे, और अँगरेज़ों को मार डालेंगे। शहर की बाग़ी फ़ौज को जब यह हाल मालूम हुआ, तो उसके अफ़सर बेगम साहबा के पास पहुँचे, और कहा कि कानपुर की फ़ौज में अँगरेज़ों ने अपनी फ़ौज मिला दी है, और मौक़ा मिलने पर ये लोग दग़ा करेंगे, इससे हम इन्हें शहर में नहीं आने देंगे। बेगम साहबा यह सुनकर बड़ी चिंता में पड़ गईं, उन्होंने विरजिसक़दर का बाहर निकलना बंद कर दिया। इसके बाद १५वें रिसाले के रिसालदार क़ासिमख़ाँ कानपुरवाली फ़ौज में गए और कहा कि अगर तुम साफ़ हो, तो चलो, हमारे अफ़सरों से बातचीत कर लो। रिसाले के अफ़सर उनके साथ तारावाली कोठी में आए, और शपथ-पूर्वक कहा कि हम तुम्हारे साथ हैं। इसके

बाद हज़रतबाग़ में चाँदीवाली कोठी में तनख़्वाह के लिये सभा हुई। शहर की बाग़ी फ़ौज के अफ़सरों ने ५) मासिक वेतन देने को कहा। उन्होंने कहा, हम १२) मासिक लेंगे, और जीत के बाद लेंगे। अगर हमें नौकर न रक्खोगे, तो शहर लूट लेंगे। अंत में उनका पड़ाव हुसेनाबाद के शीशमहल और कलाँ दौलतख़ाना में हुआ।

इसके बाद एक दिन नानाराव का वकील ख़त लेकर आया। बिटूर के युद्ध में हारकर वह गंगा पार कर अवध में आ गए थे, और फ़तेहपुर चौरासी में ठहरे हुए थे। उन्हीं के भय से जनरल हैवलक ने बशीरगंज से आगे बढ़ने का साहस नहीं किया। उन्होंने अपने लखनऊ आने की आज्ञा बेगम साहबा से माँगी। बेगम साहबा ने आज्ञा दे दी, और राजा जयलालसिंह कलेक्टर को हुक्म हुआ कि २ ऊँट, २६ छकड़े, १० गाड़ियाँ, २०-२५ हाथी लेकर फ़तेहपुर चौरासी जाओ, और नानाराव को जस्सासिंह चौधरी की गढ़ी से लिवा लाओ। घोर वृष्टि में नानाराव लखनऊ को रवाना हुए। नसरतजंग ने दो सौ सवार, २ हाथी, २ शुतुर-सवारों को लेकर उनका स्वागत किया, और शहर में ले आए। ११ तोप की सलामी दाग़ी गई, और वह ५ ता० शहर ज़िल्हज: १२८४ हिजरी को शीशमहल के दौलतख़ाने में ठहराए गए। मीर वाजिदअली मिज़ाजपुर्सी के लिये गए। इन्हें दुशाला-रूमाल की ख़िलत दी गई। नानाराव ने कहा, २१ तोपों की सलामी होनी चाहिए।

मीर साहब ने कहा, २१ तोपों की सलामी तो बादशाह के लिये है। इसके बाद बेगम साहबा ने ख़िलत तजवीज़ की, जो तोशेख़ाने से निकाली गई। २५ हज़ार रुपए दावत के लिये दिए गए, तथा जड़ाऊ तलवार, भाला, जड़ाऊ कंठा, नौरतन, पहुँची, दुशाला, रूमाल, कमरबंद, घोड़ा और नुक़रा हाथी ख़िलत के रूप में भेजे गए।

इधर रेज़ीडेंसी पर गोला-बारी जारी थी, और विद्रोही सेना अब तक उस पर अधिकार न कर सकी थी। यही नहीं, जब-तब उसे रेज़ीडेंसी के भीतर घिरे हुए गोरों के धावे की मार खाकर, अपने मोर्चे छोड़कर भागना पड़ता था। १३ अगस्त को गोरों ने भी एक सुरंग उड़ाई। इसके उड़ने से कई मकान ढह गए, जिनके नीचे कितने ही विद्रोही दबकर मर गए। इस गोलमाल में गोरों के एक दल ने निकलकर धावा भी किया। उनका यह धावा गोइंदा लाइन पर हुआ। गोरों ने वहाँ की खाईं पूर दी, और उसकी कुछ दीवारें भी ढहा दीं। यह सब करके गोरे सही-सलामत रेज़ीडेंसी को लौट गए।

१८ अगस्त को विद्रहियों ने फिर धावा किया। इस अवसर पर उनकी सुरंग से दीवार का एक भाग टूट गया, साथ ही उसके पास का एक मकान भी उड़ गया। परंतु विद्रोही ताकते रह गए। उन्हें धावा करने का साहस न हुआ। इस पर उनका एक अफ़सर उन्हें उत्साहित करने को आगे बढ़ा,

परंतु वह मारा गया। दूसरा अफ़सर आगे बढ़ा, और वह भी मारा गया। अब विद्रोही सैनिकों की सारी हिम्मत जाती रही। धावा करना छोड़कर उनके एक दूसरे दल ने एक मकान से गोली की वृष्टि शुरू की। इधर अँगरेज़ों ने उस तोड़ को संदूक़ों और लट्ठों से बंद कर दिया, और एक तोप वहाँ लगा दी। संध्या होने के पहले ही उन्होंने उन मकानों को गिरा दिया, जिनसे विद्रोही गोलियाँ बरसा रहे थे।

इधर यह सब हो रहा था, उधर नवाब के दरबारियों और फ़ौज के नेताओं का दूसरा रंग था। उन्हें न तो परवा ही थी, न खबर ही थी कि शीघ्र ही उन्हें अँगरेज़ी सेना के आगे कैसी मुँह की खानी पड़ेगी। वे तो यह समझ बैठे थे कि उनका अवध पर अधिकार हो गया है, और अँगरेज़ अब कुछ कर-धर न सकेंगे। इसी बीच में एक दिन दिल्ली से सेना के नाम यह फ़रमान आया कि तुमने मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र को गद्दी पर बिठाकर अच्छा काम किया है। इस पर २१ तोपों की सलामी दाग़ी गई। इसी दिन सिपाहियों को अपने अफ़सरों की जान ली जाने का संदेह हुआ। अतएव उनमें से प्रत्येक के साथ सिपाही और सवार रहने लगे। उन्होंने सभा में यह निश्चय किया कि अफ़सरों और सिपाहियों के चार प्रतिनिधि सभा में बैठा करें, और एकमत से जो बात वे कहें, वह मानी जाया करे। उन्होंने यह भी कहा कि जब बेलीगारद ख़ाली करवाने का हुक्म दिया

जाय, तब हमें हज़ार-पाँच सौ बेलदार भी मिलें। और, जो कोई लड़ाई में मारा जाय, उसके वारिस को नौकरी दी जाय। नवाब साहब और जरनल साहब ने उनकी माँगें स्वीकार कीं।

प्रतिदिन वेलीगारद के गोइंदे अँगरेजों की चिट्ठियाँ लेकर वेलीगारद से बाहर निकलते थे। उनमें से नित्य कई एक पकड़े जाते थे। यही नहीं, शहर के लोगों पर भी कड़ी निगाह रहती थी। एक दिन मिर्ज़ा रज़ाबेग कोतवाल और मुईउद्दौला मियाँ अहमदअली की कोई पचास पीनसें, मियाने और डोलियाँ अलीगंज के बाग़ से रवाना हुईं। उनके साथ तिलंगे और कोतवाली के सिपाही थे। किसी ने इसकी ख़बर फ़ौज में कर दी। उन्हें पकड़ लाने के लिये पचास सवार भेजे गए। सवारों को देखते ही तिलंगे और सिपाही भाग गए। सारी सवारियाँ महल में लाई गईं, और कोतवाल तथा अहमदअली सभा में पेश किए गए। उनसे पूछा गया कि तुम बचाव का यह उपाय क्यों कर रहे हो? जान पड़ता है, तुम अँगरेज़ों से मिले हुए हो। उनके सामान की तलाशी ली गई। कोई वैसी चीज़ नहीं मिली, तो भी उनका माल रोक लिया गया। तीन दिन बाद वे दोनों अपने-अपने पद का फिर काम करने लगे, परंतु फ़ौज का उन पर विश्वास नहीं रहा।

दिल्ली के बादशाह के फ़रमान के आने के बाद फ़ौज के अफ़सरों और दरबार के अहलकारों ने यह निश्चय किया कि उसका उत्तर नज़र-भेंट के साथ यहाँ से भेजा जाय।

इसके लिये अब्बास मिर्ज़ा चुने गए। वह दरबार में बुलाए गए, और उन्हें दुशाला तथा रूमाल की ख़िलत दी गई, और उनसे कहा गया कि तुम विश्वासपात्र समझे जाकर राजदूत के रूप में दिल्ली भेजे जाओगे। शरफ़ुद्दौला ने बाबू पूरनचंद से अर्ज़दाश्त लिखवाई, तथा नज़र-भेंट के लिये बहुमूल्य ताज आदि वस्तुओं के सिवा १०१ अशर्फ़ियाँ एकत्र कर अब्बास मिर्ज़ा को सौंपी गईं। उन्हें मार्ग-व्यय के लिये दो हज़ार रुपया दिया गया। १२५ सिपाही, २५ सवार, २ चपरासी, २ चोबदार, ८ हरकारे, २ शुतुर-सवार, १६ कहार, ४ फ़र्राश तथा ख़ीमे उन्हें दिए गए। इस धूम-धाम के साथ राजदूत दिल्ली रवाना हुआ।

इन दिनों नवाब मुनौवरुद्दौला पर फ़ौज के अफ़सरों की टेढ़ी निगाह थी। वह बेचारे दर-दर छिपे-छिपे फिरते थे। बदमाशों ने उनका माल-असबाब लूट लिया था, तो भी उनका पिंड उन्होंने न छोड़ा था। अंत में मुंशी मीर बाक़रअली ने उनकी दुर्दशा का हाल मुफ़ताहुद्दौला से कहा। इन्होंने सैयद बरकातअहमद रिसालदार को कुछ देकर राज़ी किया, और नवाब को कहला दिया कि वह जाकर अपने घर में रहें। इसके दूसरे दिन वह रिसालदार को उनके घर ले गए। फिर नवाब को अपने साथ बेगम साहबा के पास लाए, और नज़र दिलवाई। दुशाला और रूमाल मिला। अब दरबार में रईस और उमरा आने-जाने लगे। मुनौवरुद्दौला को संदेह बना रहा कि तिलंगों की निगाह

हम पर है; अतएव वह अपने इंतज़ाम से रहते थे। इसी बीच में उनके साथी रिसालदार गोली से मारे गए। अब वह फिर चिंता में पड़ गए। उनका मोर्चा इस्माइलगंज में था। एक दिन फ़ौजवालों ने तकरार शुरू की, और उन पर यह आरोप किया कि तुम अपने मोर्चे से बेलीगारद में साहब लोगों को डालियाँ भेजते हो, तुम अँगरेज़ों से मिले हुए हो। यह इल्ज़ाम लगाकर उन्हें क़ैद कर लिया, और अपनी फ़ौज में ले चले। उनके सौभाग्य से इस घटना की ख़बर बेगम साहबा को लग गई। उन्होंने अपना चोबदार भेजकर उन्हें अपने यहाँ बुलवा लिया। महल में वह तिलंगों के पहरे में रक्खे गए, जहाँ उनके साथ एक दिन बड़ा दुर्व्यवहार किया गया। अंत में वह बड़ी मुश्किल से छूटे, और मिर्ज़ा अबूतराबख़ाँ के यहाँ जाकर रहने लगे। दूसरे-तीसरे दरबार में आकर सलाम कर जाते थे।

बाग़ी फ़ौज इसी तरह के अनाचार और अत्याचार कर रही थी। लोगों ने जान लिया कि वह बेलीगारद को न जीत सकेगी, क्योंकि कई महीने से शहर में १, ५०, ५०० फ़ौज पड़ी हुई थी, और वह अब तक बेलीगारद को जीत न सकी थी। हर मंगलवार को बाग़ी फ़ौज धावा करने का इरादा करती थी, हर जुमा की नमाज़ के बाद शाहजी जहाद की कमर बाँधकर रह जाते थे। पर हर बुध को बेलीगारद से बराबर धावा होता था, और हज़ारों बेगुनाह लोग मारे जाते थे। तिलंगे यही कहते थे कि हम क्या करें, यहाँ सब लोग अँगरेज़ों

से मिले हुए हैं। इस तरह बहाने बनाकर वे अपनी लूट-खसोट में लगे रहते थे।

फ़ौज ने चार लाख रुपया गद्दीनशीनी का नज़राना ठहराया था, परंतु वह रुपया नहीं मिला। उसका घाटा उसने दूसरी तरफ़ से पूरा किया। छतरमंज़िल के कोठों में सोने-चाँदी का शाही माल-असबाब भरा हुआ था। वह सब क़रीब डेढ़ करोड़ रुपए का रहा होगा। सिपाही उसे कई महीने तक लूटते रहे। सरकारी ख़ज़ाना, जो हर ज़िले से लाए थे, पहले ही आपस में बाँट लिया था। इस प्रकार लूट के माल से सब मालामाल हो गए। इसके सिवा तिलंगे १२), सवार ३०), कप्तान ५००), अजीटन रिसालदार १०००) मासिक लेते थे। कहने को तो बादशाह बिरजिसक़दर के नौकर थे, पर करते अपने मन की थे।

इसी समय निम्न-लिखित अँगरेज़ पकड़कर शहर में लाए गए—मिस जैक्सन, कैप्टन ग्रीन की पत्नी, मिस्टर कोल्डेराह, सर्जेंट मेजर राजर्स का पुत्र और रोज़ा फ़ैक्टरी के मिस्टर क्रू। कुल पाँच आदमी थे। इन्हें ख़ैराबाद के नाज़िम राजा हरप्रसाद ने भेजा था, और अपने भाई जयंतीप्रसाद को साथ कर दिया था। इनके साथ धौरहरा के राजा का वकील वंदेहसन भी था, जो मजबूर होकर आया था। ये अँगरेज़ डोलियों, बहलियों और मियानों में लाए गए थे। इनका आना सुनकर तिलंगे एकत्र हुए, और कहने लगे कि इन्हें मार डालना

चाहिए। मीर वाजिदअली दारोग़ा ने इन्हें ले जाकर एक मकान में उतारा, और बाग़ी फ़ौज के तिलंगों का पहरा लगा। इधर सभा बैठी। अवध मिलिटरी पुलिस की रेजीमेंट के कप्तान इम्दादहुसेन, अवध मिलिटरी पुलिस की २री रेजीमेंट के कप्तान रघुनाथसिंह, अवध इर्रेगुलर की छठी रेजीमेंट के कप्तान, उमरावसिंह नवाब मम्मूख़ाँ, मीर वाजिदअली दारोग़ा एक ओर बैठे। नवाब शहंशाहमहल और नवाब ख़ुर्दमहल ने कहा कि वाजिदअली शाह कलकत्ते में हैं, और अँगरेज़ उन्हें आराम के साथ रख रहे हैं। यहाँ तुम इन अँगरेज़ अफ़सरों और उनके स्त्री-बच्चों को मार डालना चाहते हो। इसका मतलब यह है कि तुम चाहते हो कि वाजिदअली शाह मार डाले जायँ। उनके कहने का असर पड़ा। नवाब मम्मूख़ाँ ने कहा कि अभी इन्हें न मारो, और आराम से रक्खो। अफ़सर भी सहमत हो गए। फलतः उनकी बेड़ियाँ काट दी गईं, और वे नगीना-वाली कोठी में आराम के साथ रक्खे गए। पहरा तिलंगों का ही रहा। तीसरे दिन कप्तान मख़दूमबख़्श ने (कप्तान बैनबरी की सेना के सूबेदार) इन्हें ले जाकर ताराकोठी के पास नाले पर मार डाला। इस दिन २० आदमी मारे गए, जिनमें ५ मुसलमान थे, शेष ईसाई और योरपीय।

५ सितंबर को विद्रोहियों ने आख़िरी आक्रमण किया, और इस बार उन्होंने आक्रमण करने में काफ़ी दृढ़ता का परिचय दिया, परंतु कुछ कर-धर न सके, उलटा मार खा गए।

इसके बाद यह ख़बर आई कि गोरों ने दूसरी बार गंगा पर पुल बाँधा है, और अग्नि-बोट पर सवार होकर इस पार आते-जाते हैं। इस पार उन्होंने अपना 'विकट' भी बैठा दिया है; और कोई आने-जाने नहीं पाता। हमारी जो तोप इस पार लगी है, उसका गोला उस पार नहीं पहुँचता। हड़हा के आमिल काशीप्रसाद, जिन्हें हुक्म हुआ था कि वह वहाँ जाकर गोरों को पुल बनाने से रोकें, अभी तक नहीं आए, और टाल-मटूल कर रहे हैं। इस पार हमारी फ़ौज कम है। इससे जल्दी फ़ौज भेजी जाय। परंतु इस सूचना के मिलने पर भी कई दिन तक अफ़सर और अहलकारों की सभा होती रही; और कौन फ़ौज जाय, इसका निर्णय न हुआ।

हैवलक की चढ़ाई और विद्रोहियों की हार

जनरल हैवलक ने लखनऊ पहुँचने का तीन वार यत्न किया, परंतु काफ़ी सेना न होने के कारण उन्हें लखनऊ पर आक्रमण करने का साहस न हुआ। अतएव लाचार होकर वह १३ अगस्त को अपनी सेना-सहित मगरवारा से कानपुर चले आए। यहाँ आकर उन्होंने विठूर के युद्ध में नानाराव और ताँतिया टोपी को दूसरी वार परास्त किया। इस युद्ध में ४२वीं विद्रोही सेना ने वड़ी वहादुरी दिखलाई।

कानपुर में जनरल हैवलक एक महीना तक सहायता की प्रतीक्षा करते रहे। २१ अगस्त को उनके भेजे हुए स्टीमर के सैनिकों ने डलमऊ के आस-पास सारी नावें पकड़ लीं। इस प्रकार अवध के विद्रोहियों को दुआव में नहीं आने दिया। उनके आ जाने से कानपुर और इलाहावाद का मार्ग संकट में पड़ जाता।

लॉर्ड कैनिंग को इस अवस्था का परिचय था, अतएव उन्होंने ६ अगस्त को ही सर जेम्स आउटराम को कलकत्ते से रवाना किया। वह अवध के चीफ़ कमिश्नर और कानपुर

तथा दानापुर की सेनाओं के प्रधान सेनापति बनाकर भेजे गए थे। जो सैनिक उन्हें मिल सके, उनको लेकर वे १५ सितंबर की रात में कानपुर पहुँच गए। परंतु कानपुर पहुँचकर उन्होंने प्रधान सेनापति के पद का भार नहीं ग्रहण किया, और यही हुक्म दिया कि लखनऊ के उद्धार का कार्य जनरल हैवलक के नेतृत्व में हो, और वह तब तक स्वयंसेवक के रूप में उनकी अधीनता में काम करेंगे।

१६ सितंबर को अँगरेज़ी सेना ने नावों के पुल द्वारा गंगा पार की। विद्रोहियों ने एक तोप से गोले छोड़कर उनके मार्ग में बाधा डालने की चेष्टा की। लखनऊ की नई नवाबी सरकार को इस बात की सूचना ठीक समय पर मिल गई थी कि अँगरेज़ लोग नावों का पुल बनाकर इस पार फिर उतरना चाहते हैं। फलतः मीर मुहम्मदहुसेनख़ाँ और अलीख़ाँ दल-बल के साथ आए, और मगरवारा में पहुँचकर अपना मोर्चा लगाया। परंतु ज्यों ही अँगरेज़ी तोपख़ाने ने आगे बढ़कर गोले छोड़े, विद्रोही अपनी तोप के साथ भाग गए। २० सितंबर तक बड़ी तोपें और दूसरा सामान भी उतर आया। सेना की संख्या ३,१७६ थी, जिसमें २,३८८ गोरे पैदल, १०६ गोरे स्वयंसेवक सवार, २८२ तोपख़ाने के गोरे सैनिक, ३४१ सिक्ख पैदल और ५६ देशी सवार थे। यह सेना दो ब्रिगेडों में विभक्त की गई। एक का नेतृत्व जनरल नील को दिया गया, और दूसरे का कर्नल हमिल्टन को।

२१ सितंबर को सवेरे सेना ने मार्च शुरू किया। मगरवारा में उसका विद्रोहियों से सामना हो गया। अँगरेज़ी सेना के आक्रमण करने पर विद्रोही सेना भाग खड़ी हुई, जिसका सर जेम्स आउटराम के नेतृत्व में रिसाले ने पीछा किया। १२० विद्रोही मारे गए, और उनकी दो तोपें छिन गईं। उन्नाव में कुछ विश्राम करने के बाद अँगरेज़ी सेना आगे बढ़ी। बशीरगंज पहुँचकर अपना पड़ाव डाल दिया। दूसरे दिन उसने फिर कूच किया, यद्यपि घोर वृष्टि हो रही थी। सई नदी का पुल पार करके वह बनी पहुँची, और वहीं रात व्यतीत की। २३ को सवेरे वह फिर रवाना हुई।

मगरवारा से जो विद्रोही सेना हारकर भागी थी, उसने फिर पीछे की ओर नहीं देखा। जब वह भागकर लखनऊ पहुँची, सारे शहर में घबराहट फैल गई। इस पर मुनादी की गई कि अँगरेज़ों के आने पर सब लोग ईसाई बनाए जायँगे। इसलिये सब लोग आलमबाग़ में एकत्र हों, और अँगरेज़ों को मार भगावें। पर शहर का कोई भी आदमी वहाँ नहीं गया। इसके बाद शहर में जगह-जगह इश्तिहार चिपकाए गए। उनमें लिखा था कि जब अँगरेज़ क़ाफ़िरों ने दिल्ली जीती, तब वहाँ किसी को जीता नहीं छोड़ा। मेरठ, दिल्ली, कानपुर आदि में इनके स्त्री-बच्चे मारे गए हैं। वैसे ही तुम्हारे भी बाल-बच्चे मार डाले जायँगे। फिर ये गोरे पाँच सौ

से ज्यादा नहीं हैं। इन्हें मार लो, फिर चैन-ही-चैन है। परंतु इसका भी लोगों पर कोई प्रभाव न पड़ा।

जब गोरे नवाबगंज के क़रीब आ गए, तब ६ पल्टनें बाग़ियों की, कई पल्टनें नजीबियों की और १२वाँ, १३वाँ तथा ४था रिसाला रवाना हुआ। घोर वृष्टि हो रही थी। मम्मूख़ाँ, जनरल हिसामुद्दौला और यूसुफ़ख़ाँ भी एक गाड़ी पर सवार होकर गए। उनकी अर्दली में पाँच सौ सवार थे। उन्होंने मीर वाजिदअली से भी साथ चलने को कहा। इन्होंने कहा कि हम तिलंगों की गालियाँ सुनने नहीं जायँगे। अगर लड़ने को चलते हो, तो चलूँगा। भागने को जाते हो, तो नहीं जाऊँगा। वही हुआ। तिलंगे मम्मूख़ाँ और जनरल को गालियाँ देते चले जा रहे थे। अतएव उनसे छिपकर ये मस्जिद में जा बैठे। इतने में बनी में अँगरेज़ों की तोपें चलने लगीं। जो तिलंगे उधर जा रहे थे, लौटकर भागे। अब मम्मूख़ाँ उन्हें गालियाँ देने लगे, पर उनका कोई प्रभाव नहीं पड़ा।

आख़िर विद्रोहियों ने आलमबाग़ के आगे मैदान में अपना मोर्चा लगाया। चारबाग़ के नाके से लेकर लड़ाई के मैदान तक पैदल-सेना, घुड़सवार और तोपख़ाने मौक़े-मौक़े पर लगे हुए थे। क़रीब दो मील की लंबाई में उनका मोर्चा लगा हुआ था।

जब अँगरेज़ी सेना आ गई, तब विद्रोहियों की तोपों से गोले बरसने लगे। अँगरेज़ी तोपों ने भी बढ़कर गोलाबारी शुरू

की। जब आउटराम नज़दीक पहुँचे, तब उन्होंने धावा किया। बागियों की तोपें हटकर चलने लगीं। संध्या के पाँच बजे तक बाग़ी हटते हुए आलमबाग़ के पास आ गए। इस समय आसमान मेघों से घिर गया, और बड़े ज़ोर का पानी बरसने लगा; परंतु तोपें दोनो ओर से बराबर चलती रहीं। अंत में यहाँ आकर तिलंगे भाग खड़े हुए। नवाब साहब, मम्मूख़ाँ और दूसरे अफ़सर लोग भी वहाँ से हटकर आलमबाग़ के नाके पर आ गए, और राजा मानसिंह को बुलाया। वह आठ या नौ हज़ार सेना लेकर आए, और अँगरेज़ी सेना से सामना किया। ख़ूब मुँहमेल तलवार चली। राजा के लगभग दो हज़ार आदमी मारे गए। गोरे भी बहुत मारे गए। शाम हो आई थी। पानी बरस रहा था, अतएव बिगुल बजाकर अँगरेज़ी सेना ने लड़ाई बंद कर दी, और विकट बैठाकर आलमबाग़ के सामने मैदान में कनौसी, जलालपुर और अलमासअलीख़ाँ की करबला तक अपना पड़ाव डाला। परंतु शाम होते ही उसने आलमबाग़ पर धावा कर उस पर भी अपना अधिकार कर लिया। जो फ़ौज वहाँ थी, भाग खड़ी हुई। चारबाग़ के नाके पर तोप लगा दी गई थी कि जो कोई आलमबाग़ से भागकर आवे, वह उड़ा दिया जाय। परंतु भगोड़े घूमकर दूसरे मार्ग से अपनी छावनियों को भाग गए।

इस दिन राजा मानसिंह ने बड़ी बहादुरी दिखाई।

बेगम साहबा ने उन्हें बुलाकर उनकी प्रशंसा की। दुशाला, रूमाल और अपना ख़ास दुपट्टा ख़िलत में दिया तथा 'फ़र्ज़ंद' की पदवी दी। राजा साहब ने इसके लिये समुचित कृतज्ञता प्रकट की, और अपने को शाही घराने का नमकख़्वार बतलाया।

अँगरेज़ों का आलमबाग़ पर अधिकार हो जाने की ख़बर से शहर में तहलक़ा मच गया। तिलंगे भागने लगे। रियाया भी भागने लगी। बेगम साहबा ने रात में अफ़सरों को बुलाया, और सभा बैठी। सवेरे शाहज़ी, १२वाँ रिसाला, नजीबी और ज़मींदारों की फ़ौजें लड़ने चलीं। दोनो ओर से तोपें चलने लगीं। पहर-भर दिन चढ़े तक बराबर का मुक़ाबला रहा। शाहज़ी और १२वें रिसाले ने धावा किया। एक जगह अँगरेज़ों की कई किराचियाँ खड़ी थीं। वे उन पर जा टूटे। जो लोग उनके पास थे, भाग खड़े हुए। सवारों ने लूट शुरू की। कुछ गोरे आड़ में खड़े थे। गोलियाँ मारने लगे। दो-तीन सवार गिरे कि सब भाग खड़े हुए। शाहज़ी एक नाले में खड़े थे। वह वहीं गिर पड़े। सवार भागे। गोरों ने पीछा किया, लेकिन ज़मींदारों और तिलंगों ने रोका। बोल की सेना के तिलंगे ख़ूब लड़े। लगभग पाँच सौ तिलंगे और सवार मारे गए।

नहर के पुल के पास से घने वृक्षों की आड़ में विद्रोही प्रायः सारे दिन दो तोपों से गोला-बारी करते रहे। अँगरेज़ी

सेना की छ तोपें बराबर उनका जवाब देती रहीं, परंतु वे विद्रोहियों की तोपें बंद करने में समर्थ न हुईं।

२४ सितंबर को यह विचार होता रहा कि किस मार्ग से रेज़ीडेंसी की ओर बढ़ा जाय। चारबाग़ के पुल से शहर के बीच से होकर रेज़ीडेंसी का मार्ग था। चारबाग़ के पुल से रेज़ीडेंसी का फाटक डेढ़ मील था। परंतु इस मार्ग में जगह-जगह गहरी खाइयाँ खोद दी गई थीं, तथा इसके दोनो ओर के मकानों में विद्रोहियों ने मोर्चे लगा दिए थे। अतएव यह सड़क छोड़ दी गई, और पुल पार कर नहर के किनारे-किनारे टेढ़े-मेढ़े रास्ते से होते हुए रेज़ीडेंसी के पूर्व की मोर्चेबंदी की शाही इमारतों के सामने से होकर जाने का विचार किया गया। यह भी तय हुआ कि सामान, रोगी और घायल आलमबाग़ के अस्पताल में, ३०० योरपीय सैनिकों की संरक्षा में, छोड़ दिए जायँ।

उधर अँगरेज़ी सेना इस प्रकार रेज़ीडेंसी के उद्धार के लिये तैयार हो रही थी, इधर शाही दरबार में अँगरेज़ क़ैदियों के मार डालने का विचार हो रहा था। फलतः २४ को शाही महल में २२ या २३ क़ैदी मारे गए। इनमें मिसेज़ ग्रीन, मिस जैक्सन, मिसेज़ राजर्स, मिस्टर बैप्टिस्ट जोन्स, मिस्टर ग्र्यू, मिस्टर जे० सुलीवन, मिसेज़ फ़ीलो आदि थे। इनके साथ मुहम्मदअली कोतवाल भी मारे गए।

वे सब रस्सी से बाँधकर जेलखाने लाए गए। पहले उन

पर गोलियों की एक बाढ़ मारी गई, फिर तलवार से सब मार डाले गए। इनमें मुहम्मदअली कोतवाल को ४ सितंबर को नादिरहुसैन ने पकड़ा था। यह अँगरेज़ी शासन-काल में लखनऊ के कोतवाल थे। अपने समय में इन्होंने बड़ा ज़ुल्म किया था, और शहरवालों को खूब लूटा था। यह अँगरेज़ों से मिले हुए थे। कहा जाता है, उपर्युक्त कार्य में राजा जयलालसिंह का विशेष हाथ था।

२५ सितंबर को अँगरेज़ी सेना सवेरे आठ बजे हाज़िरी खाकर धावा करने को तैयार हुई। वह दो भागों में विभक्त हो गई। एक भाग जनरल आउटराम की अधीनता में साँखू के जंगल की ओर चला। दूसरे ने सीधे चारबाग़ के नाके की राह ली। उसने अपने आगे कई सौ मवेशी कर लिए थे। नहर के पुल पर जनरल हिसामुद्दौला अपने साथियों और बाग़ी फ़ौज के अफ़सरों के साथ डटे हुए थे। मोर्चे पर जो सिपाही थे, वे कई दिन के भूखे थे। नहर के दोनो तरफ़ गन्ने के जो खेत थे, उन्होंने उन सबको साफ़ कर डाला। खेतवालों ने जनरल साहब से फ़रियाद की। उन्होंने उन्हें तीन सौ रुपए देकर विदा किया। जनरल साहब के साथ काफ़ी अधिक सेना थी। वह समझते थे कि इधर से अँगरेज़ जीतकर नहीं जा सकेंगे। इसके सिवा नाके से अमीनाबाद तक सड़क के दोनो ओर के मकानों में फ़ौज के सिपाही और अफ़सर बैठे हुए थे। वे इस मतलब से बैठे थे कि जब गोरी सेना सड़क से

होकर निकलेगी, तब दोनो ओर से गोली चलाकर भून डालेंगे। परंतु वह सब नहीं हुआ। अँगरेज़ी सेना दूसरे मार्ग से निकल गई।

पहला ब्रिग्रेड सर जेम्स आउटराम के नेतृत्व में चला था। इस पर सड़क पर के मकानों तथा दीवारों से घिरे हुए अहातों से भीषण रूप से गोलियाँ चलाई गईं। परंतु गोरी सेना ने भारी हानि उठाकर उन स्थानों से विद्रोहियों को मार भगाया। आगे जाने पर साँखू के जंगल में इस सेना का राजा मानसिंह की सेना से डटकर युद्ध हुआ। उधर दूसरा ब्रिग्रेड धीरे-धीरे नहर के पुल की ओर बढ़ रहा था। ज्यों ही विद्रोहियों ने अँगरेज़ी फ़ौज को आते देखा, पुल पर की छ तोपों से गोले बरसने लगे। अँगरेज़ी तोपों ने भी गोले छोड़े, पर विद्रोहियों की तोपों के दारोग़ा मीर बख़्तअली और सूबेदार मिर्ज़ा इमामअली अपनी-अपनी तोप पर जमे रहे। जब अँगरेज़ों ने देखा कि उनके कई गोलंदाज़ मारे गए, तब उन्होंने पैदल सेना को धावा करने का हुक्म दिया। यह देखकर विद्रोही गोलंदाज़ों ने अपनी तोपें दाग दीं। इधर गोरे ज़मीन पर लेट गए, और गोले उनके ऊपर से निकल गए। इस प्रकार वे बढ़ते गए, और तीसरे हल्ले में विद्रोहियों की तोपों पर जा टूटे।

सब गोलंदाज़ भाग खड़े हुए, परंतु उक्त अफ़सर अपनी जगह से नहीं हिले, और वे वहीं मारे गए। गोरों ने तोपों को खींचकर नहर में गिरा दिया, और विद्रोहियों के उस

सुदृढ़ मोर्चे पर क़ब्ज़ा कर लिया। विद्रोही सेना भाग खड़ी हुई।

अँगरेज़ी सेना के दोनो दल यहाँ मिल गए। अब चारबाग़ के नाके पर हाइलेंडरों का दल नियुक्त कर दिया गया, ताकि अँगरेज़ी सेना अपने पूर्व-निश्चित मार्ग से. रेज़ीडेंसी की ओर बढ़ सके। कुछ देर तक विद्रोहियों ने किसी तरह की छेड़-छाड़ न की, और अँगरेज़ी सेना बिना किसी विघ्न-बाधा के अपने मार्ग पर बढ़ती चली गई। परंतु सामान अभी निकल ही रहा था कि विद्रोहियों की एक सेना ने कानपुर की सड़क से दो तोपें लेकर उस पर आक्रमण किया। तीन घंटे के युद्ध के बाद हाइलेंडरों ने उसे मार भगाया, और उसकी दोनो तोपें छीनकर बेकार कर दीं, और उनमें से एक नहर में गिरा दी।

सर जेम्स आउटराम सेना को साथ लिए, नहर को अपने दाहने ओर रख, चक्कर काटते हुए आगे बढ़ गए। दिलकुशा की सड़क से होते हुए वह ३२वीं के अस्पताल के पास जा पहुँचे। ३२वीं की बारकों को अपने बाएँ छोड़कर अँगरेज़ी सेना ने सिकंदर बाग़ की सड़क पकड़ी। वहाँ से सड़क-ही-सड़क वह मोती-मंज़िल के सामने की दीवार से घिरे मार्ग में घुसी। यहाँ तक पहुँचने में इस सेना का विद्रोहियों से बेसा सामना नहीं हुआ। मार्ग में एक जगह उसका उनके एक दल से अवश्य सामना हो गया था। मम्मूख़ाँ एक ओर से कुछ सवारों के साथ चले आ रहे

थे। गोरी सेना को देखकर उनके बहुत-से आदमी भाग गए, तो भी उन्होंने उसका पीछा करने की चेष्टा की। उनके सवारों को देखकर गोरी सेना तोपख़ाने की ओर बढ़ी चली गई। मार्ग में इस सेना ने 'बर्फ़ख़ाना' फूँक दिया, और जो मिला, उसे मार डाला। फ़िदाहुसैन की मसजिद में पहुँचने पर गोरों ने खाना खाया। कुछ गोरे शाही जंतुशाला में घुस गए, और वहाँ के शेरों तथा दूसरे जानवरों को मार गिराया, और दारोग़ा को भी मार डाला।

५० गोरे हज़रतगंज के पूरब के फाटक की ओर से आए। नवाब मलकाअहद के ख़ा-सबरदार दराबअलीख़ाँ नवाब नाज़िर के हुक्म से उनके आदमी दोनो ओर की कोठियों पर चढ़ गए, और गोरों पर गोलियों की वर्षा करने लगे। उन्होंने पश्चिम का फाटक भी बंद कर लिया था। यह सब देखकर गोरे लौट पड़े। वहाँ से हज़रत जिन्नतमकान के इमामबाड़े में आए। उन्होंने उसका बड़ा फाटक देखकर उसे शाही महल समझा। फाटक पर एक तोप भी थी। गोरों को देखकर गोलंदाज़ भाग गए। मुक़ताहुद्दौला ने अपने अर्दलियों को हुक्म दिया कि तोप में कील ठोंक दो, और उसकी पेटी खींच लाओ। जब गोरे वहाँ आए, तब कहा गया कि यह क़ब्रिस्तान है, शाही महल आगे है। यह सुनकर वे चले गए, तोप की ओर ध्यान न दिया। वहाँ से वे मोतीमहल गए। कुछ गोरे छतर-मंजिल भी जा पहुँचे। वहाँ एक नजीबी फ़ौज थी। गोरों को देखकर भाग खड़ी हुई। कुछ

दरिया में डूब मरे, कुछ वहीं छिप गए, लगभग दो सौ के मारे भी गए।

परंतु अब गोरी सेना विद्रोहियों की मार के भीतर आ गई थी। क़ैसरबाग़ की चार तोपों से उस पर गोले छूट रहे थे, और ख़ुरशेद-मंज़िल से गोलियों की वृष्टि हो रही थी। अँगरेज़ी तोपों ने अपनी मार से क़ैसरबाग़ की तोपों का मुँह दो बार बंद कर दिया, परंतु वे तोपें पूरे बचाव में थीं, अतएव विद्रोही बराबर गोले चलाते रहे।

इस बीच में यहाँ गोरी सेना को हाइलेंडर सेना का यह संवाद मिला कि उस पर विद्रोहियों का बड़ा दबाव पड़ रहा है। यह ख़बर पाकर उसकी मदद के लिये ६०वीं रेजीमेंट दो बड़ी तोपों के साथ वहाँ छोड़ दी गई। कुछ देर तक रुकी रहने के बाद गोरी सेना आगे बढ़ी। शत्रु की मार से बचने के लिये उसने फेर का मार्ग पकड़ा। वह मार्टीन के मकान के बाग़ से हिरनख़ाना की दीवार के नीचे होकर एक तंग मार्ग में जा घुसी, जो छतर-मंज़िल और फ़रहत-बख़्श नाम के महलों को गया था। उस पर चारो ओर से गोलियों की वृष्टि हो रही थी, परंतु वह उन महलों में पहुँच गई, जहाँ विद्रोहियों की गोला-बारी से उसकी रक्षा हुई।

जब सेना और उसके साथ का सामान सही-सलामत चारबाग़ के नाके से निकल गया, तब हाइलेंडरों की सेना भी

वहाँ से चली। परंतु भूल से उसने ऐशबाग़ की सड़क पकड़ ली। आगे जाने पर उसका एक विद्रोही-दल से सामना हो गया। ग़ुलामहसन की मसजिद में भटवामऊ के ज़मींदार हादी हसनख़ाँ के भाई नबीबख़्शख़ाँ अपने आदमियों के साथ ठहरे हुए थे। यहाँ इनसे उन गोरों का सामना हो गया। ख़ूब तलवार चली। सब-के-सब मारे गए। इनके भाई तजम्मुलहुसैनख़ाँ घायल होकर बचे। इनकी ओर के पाँच सौ आदमी मारे गए। सौ गोरे भी मारे गए।

अब गोरे घबराकर ऐशबाग़ से अमीनाबाद की सड़क पर आए। यहाँ तेलियों को मारा। तिलंगे उन पर दोनो ओर के मकानों से गोलियाँ चलाने लगे।

अब हाइलेंडर उस मार्ग पर आ गये, जिससे होकर पहले की गोरी सेना गई थी। कुछ दूर जाने पर उनसे बेरो के स्वयंसेवक सवारों की टुकड़ी आ मिली। ये सवार उनकी रक्षा के लिये उसके पृष्ठ-भाग में हो गए। ३२वीं के अस्पताल के पास उस गोरी सेना ने भूल से बाईं ओर की राह पकड़ ली, और वह उस मार्ग से क़ैसरबाग़ के फाटक पर जा पहुँची। यहाँ उसने धावा कर, उन तोपों पर क़ब्ज़ा कर लिया, जो अभी तक गोरी सेना पर गोले छोड़ रही थीं। गोरों ने बड़ी तोप कील ठोंक-कर बेकार कर दी, और वहाँ से आगे बढ़ते हुए अपनी सेना में जा मिले।

इधर क़ैसरबाग़ में तहलक़ा मचा हुआ था। वह एक-

दम अरक्षित था। साठ आदमी से ज्यादा वहाँ नहीं थे। बेगमें भागने की चिंता में थीं। कुछ भाग भी निकलीं। खुद बेगम साहबा घबरा गई थीं। अंत में मुक़ताहुद्दौला ने मल्लापुर के राव को बुलाया, और उसके सिपाहियों का क़ैसरबाग़ में जगह-जगह पहरा लगा दिया। तब किसी तरह बेगमें कुछ निश्चित हुईं।

उधर अँगरेज़ी सेना का मुख्य भाग फ़रीदबख़्श-महल के समीप पहुँच गया। यहाँ से रेज़ीडेंसी लगभग ५०० गज़ दूर थी, और दिन डूब रहा था। सर जेम्स की इच्छा थी कि रात यहीं बिताई जाय, और घायल तथा तोपें एकत्र कर ली जायँ। परंतु जनरल हैवलक उसी दिन रेज़ीडेंसी पहुँच जाना चाहते थे। उनकी बात मानी गई। जनरल हैवलक और सर जेम्स आउटराम अपने-अपने घोड़े पर सेना के आगे-आगे चले। उनके पीछे हाइलेंडर और सिक्ख सैनिक हो गए। घायलों को मुंशी रामदयाल के मकान में छोड़ दिया, और वे शेर-दरवाज़े होकर आगे बढ़े। दोनो ओर के मकानों से उन पर गोलियों की वृष्टि होने लगी। जब इस टुकड़ी का पृष्ठ-भाग ख़ास बाज़ार की महराब के नीचे से निकल रहा था, तब वहाँ छिपे हुए विद्रोहियों ने उस पर गोलियाँ चलाईं। अतएव जनरल नील इस अवसर पर गोली लगने से मर गए।

उस भीषण आक्रमण की परवा न कर गोरी सेना की

टुकड़ी आगे बढ़ती गई। यहाँ मार्ग में उसका बरलोवाली विद्रोही सेना से मुक़ाबला हो गया। खूब युद्ध हुआ। अंत में तिलंगे भाग खड़े हुए। उनके कोई २०० आदमी मारे गए। ५० गोरे भी मारे गए। इसके बाद अँधेरा फैलने के साथ-साथ गोरी सेना बेलीगारद के फाटक पर पहुँच गई।

जिस मार्ग से उक्त सैन्य-दल गया था, उसमें जगह-जगह अनेक गड्ढे खोद दिए गए थे, अतएव उसका जो भाग पीछे रह गया था, वह तोपख़ाने को लेकर छतर-मंज़िल और फ़रहतबख़्श-महलों की गली की आड़ लेकर पईनबाग़ से रेज़ीडेंसी की ओर गया। घंटाघर के पास विद्रोहियों की जो तोपें लगी हुई थीं, उन्हें इस गोरी सेना ने अपने अधिकार में करके सही-सलामत रेज़ीडेंसी में प्रवेश किया। जब सेना का यह भाग रेज़ीडेंसी की ओर आ रहा था, तब लेफ़्टिनेंट एटिकन १३वीं देशी पल्टन के १२ आदमी लेकर उसकी मदद के लिये बेलीगारद से निकलकर घंटाघर की ओर बढ़े। इन्होंने जाकर टेढ़ीकोठी के एक भाग पर अधिकार कर लिया, जहाँ इन्होंने कुछ आदमियों को क़ैद भी किया। इनके इस कार्य से रेज़ीडेंसी का छतर-मंज़िल और फ़रहतबख़्श-महल से संबंध स्थापित हो गया। इस प्रकार अँगरेज़ी सेना ने विद्रोहियों के घेरे को तोड़कर रेज़ीडेंसी में प्रवेश किया, और उनका सारा सैन्य-दल देखता-का-देखता रह गया। इसमें संदेह नहीं कि उसने अँगरेज़ी सेना के मार्ग में बड़ी बाधाएँ

डालीं, यहाँ तक कि आलमबाग़ से रेज़ीडेंसी तक पहुँचने में सारा दिन लग गया, तथापि अँगरेज़ी सेना वीरता के साथ सारी बाधाओं को पार कर गई, और अपने प्रयत्न में सफल हो गई।

२६ को विद्रोहियों को मालूम हुआ कि मोती-मंज़िल में गोरी सेना अभी पड़ी हुई है। नौ बजे शरफ़ुद्दौला ने क़ैसरबाग़ की तोपों से मोती-मंज़िल पर गोला-बारी करने का हुक्म दिया। उधर मोती-मंज़िल से गोरों के तोपख़ाने से भी गोले बरसने लगे। एक बम का गोला क़ैसरबाग़ की तोप पर आ गिरा। गोलंदाज़ ज़ख़्मी हो गए। जो बचे, वे भाग गए। गोली लग जाने से शरफ़ुद्दौला भी घायल हो गए। इससे विद्रोही सेना में उदासी छा गई, तो भी विद्रोही सारे दिन मोती-मंज़िल पर गोलियों की वृष्टि करते रहे।

उधर रेज़ीडेंसी से सर जेम्स आउटराम ने, जिन्होंने अब सेनापति के पद का भार ग्रहण कर लिया था, मोती-मंज़िल की ९०वीं सेना की मदद के लिये कुछ सेना रेज़ीडेंसी से भेजी, और मोती-मंज़िल के घायलों को रेज़ीडेंसी में ले आने का हुक्म दिया। सेना का वह दल सही-सलामत मोती-मंज़िल पहुँच गया। सर जेम्स के आदेशानुसार कुछ रक्षक घायलों की डोलियाँ पूर्व-निश्चित, नदी-किनारे के, मार्ग से लेकर चले। परंतु उनका पथ-प्रदर्शक मार्ग भूल गया, और वे सब शेर-दरवाज़े होकर चौक में जा पहुँचे। यहाँ विद्रोही सेना

का मोर्चा था। उसने उन डोलियों पर आक्रमण कर दिया। यह देखकर डोलियों के साथ का रक्षक दल पीछे भागा। इस पर कहारों ने डोलियाँ जहाँ-की-तहाँ रख दीं, और वे भी भाग खड़े हुए। जो डोलियाँ चौक में नहीं पहुँचीं, वे पीछे लौटा दी गईं, और जो दो डोलियाँ रक्षकों के साथ आगे थीं, वे सही-सलामत वेलीगारद पहुँच गईं। परंतु जो डोलियाँ मैदान में रख दी गई थीं, उनमें के ३०-४० घायल सैनिक सब-के-सब मार डाले गए।

विद्रोही सेना की भयंकर मार के कारण मोती-मंज़िल की गोरी सेना रेज़ीडेंसी की ओर क़दम नहीं उठा सकी, और उसका विद्रोही सेना से सारे दिन युद्ध होता रहा। अंत में रात को दो बजे वह अपनी तोपों और सामान के साथ चुपचाप शत्रुओं की मार को पार कर सही-सलामत रेज़ीडेंसी पहुँच गई।

इधर मोती-मंज़िल को सहायता के लिये सैनिक भेजने के बाद सर जेम्स २६ को सवेरे ही ३२वीं के १५० गोरों को कप्तान बाज़ार पर धावा करने को भेजा। इस सेनादल ने वहाँ की तोप के मोर्चे को तोड़ डाला, और उस क्षेत्र से विद्रोहियों को मार भगाया। वहाँ का काम समाप्त कर यह दल टेढ़ीकोठी में आया, और उस क्षेत्र के भी मकानों से इसने विद्रोहियों को मार भगाया।

टेढ़ीकोठी और फ़रहतबख़्श-महल के बीच में वाजिदअली

शाह के भाई जनरल मिर्ज़ा सिकंदरहशमत साहब का मकान था। इस मकान पर भी धावा किया गया। गोरों ने जनरल साहब के दो लड़कों, उनकी बीबियों और बाँदियों को क़ैद कर लिया। कुल २४ आदमी क़ैद हो गए। ख्वाजासरा हबशी मुहम्मद मुर्तज़ाख़ाँ, मीर सफ़दरअली, मीर नवाब मख़दूम-बख़्श तुमनदार तथा दूसरे सब लोग मारे गए। कुल तीन आदमी वहाँ से बचकर निकले।

नवाब नाज़िर याक़ूतअलीख़ाँ रोते हुए बेगम साहबा के पास पहुँचे, और शाहज़ादों आदि के गिरफ़्तार हो जाने की बात कही। उन्होंने मीर वाजिदअली को बुलाकर कहा कि राजा मानसिंह से कहो कि शाहज़ादों के छुड़ाने का प्रबंध करें। मीर वाजिदअली ने कहा कि राजा ने शेर-दरवाज़े से धावा किया था, उनके सौ आदमी मारे गए हैं, इस समय वह बहुत दुखी हैं। बेगम साहबा ने कहा कि हमारा हुक्म उनके पास पहुँचा दो। जब राजा से उन्होंने कहा, तब जवाब मिला कि मुझसे क्या हो सकता है। फिर यह भी मालूम नहीं कि वे क़ैद में हैं या मार डाले गए। इस प्रकार अँगरेज़ी सेना विद्रोहियों को बार-बार परास्त कर रेज़ीडेंसी में निश्चिंत होकर बैठ गई।

लखनऊ की चढ़ाई में अँगरेज़ी सेना की पूरी विजय हुई, और बहुसंख्या में होते हुए भी विद्रोही उनका कुछ बना-बिगाड़ न सके।

सर जेम्स आउटराम का घिर जाना

रेज़ीडेंसी पहुँचने के बाद दूसरे दिन अर्थात् २६ सितंबर को सर जेम्स आउटराम ने अपने पद का भार ले लिया। उन्होंने अब तक जनरल हैवलक को इसलिये सेनापति बने रहने दिया था कि लखनऊ की जीत की कीर्ति उन्हीं को मिले। पद-भार ग्रहण कर उन्होंने सेना का नया संगठन किया। उन्होंने उसके दो भाग कर दिए। एक कर्नल इँगिलश के अधीन कर दिया गया, दूसरा जनरल हैवलक के। हैवलक को रेज़ीडेंसी के पूर्व की इमारतों तथा बाग़ों की निगरानी दी गई। यहाँ से उन्हें विद्रोहियों को मार भगाना था। यह काम उन्होंने दो या तीन दिन के भीतर पूरा कर डाला। अपने क्षेत्र की इमारतों तथा बाग़ों को उन्होंने विद्रोहियों से खाली करवा लिया। मिर्ज़ावाली कोठी, मोतीमहल, नसरतबाग़, छतर-मंज़िल, फ़रहतबख़्श-महल, बड़ा इमामबाड़ा, नवाब क़ुदिसिया-महल, कोठी मंगलसेन, इमामबाड़ा मुज़फ़्फ़रुद्दौला हसन-अलीख़ाँ, कोठी अज़ीमुल्लाख़ाँ आदि इमारतों में गोरे फैल गए। इधर जब दूसरी रात कुशल से बीत गई, और विद्रोहियों

ने दूसरे दिन देखा कि क़ैसरबाग़ बचा हुआ है, तब वे राजा मानसिंह और राजा गुरुबख़्शसिंह के पास पहुँचे, और पहले की तरह बातें बनाने लगे। बेगम साहबा ने मौक़ा देखकर तरह दी। इसके बाद वे पहले की भाँति अपने-अपने मोर्चों पर फिर जा बैठे, परंतु उन्होंने आलमबाग़ के नाके की ओर ध्यान नहीं दिया, जो अँगरेज़ों के क़ब्ज़े में हो गया था, और जहाँ से वे अपना संबंध कानपुर से क़ायम किए हुए थे।

अब शाहजी को ख़बर हुई कि अँगरेज़ी फ़ौज बेलीगारद में पहुँच गई। वह उठ खड़े हुए, और अकेले ही धावा करने का निश्चय किया। उन्होंने कहा कि आज मैं अपनी करामात दिखाऊँगा, और अकेला ही अँगरेज़ों को बेलीगारद से मार भगाऊँगा। यह कहकर मोतीमहल गए। वहाँ एक गोरे की लाश पड़ी हुई थी। उन्होंने उसका सिर काट लिया। जब तिलंगों ने सुना कि शाहजी अकेले ही धावा करने गए हैं, तब वे भी उनके पीछे पहुँचे। उन्हें देख शाहजी कटा सिर दिखाकर कहने लगे कि देखो, जब इरादा करूँगा, इसी तरह बेलीगारद ख़ाली करा लूँगा। फ़ौज में उनकी करामात की चर्चा होने लगी। तिलंगे उनको दंडवत् करने लगे। सवारों ने उन्हें अपना ख़लीफ़ा माना। कप्तानों और रिसालदारों ने उनके पैरों पर सिर रक्खे और नज़रें दीं। शाह साहब डींगें मारने लगे। यही नहीं, उन्होंने चोबदार भेजकर मम्मूख़ाँ को कहलाया कि अब भी आँखें खोलो।

आज तुम्हारी फ़ौज और जमींदारों से कुछ न हो सका। चार आदमियों से मोतीमहल ले लिया। अगर तुम चाहते हो कि बेलीगारद हाथ आ जाय, तो चार तोपें और फ़क़ीर की दावत के लिये पाँच हज़ार रुपया भेज दो। बिरजिसक़द्र मेरी अधीनता स्वीकार करे, और बेगम आज रात को मेरी दीक्षा ले ले। अगर ऐसा न होगा, तो कुछ गोरों को क़ैसरबाग़ में बुलाऊँगा, और उस लौंडे को रियासत से उठा दूँगा।

चोबदार ने जाकर मम्मूख़ाँ से उनकी बातें ज्यों-की-त्यों कह दीं। उनकी ख़बर बेगम साहबा को हुई। मुफ़ताहुद्दौला, शरफ़ुद्दौला, मम्मूख़ाँ और मीर वाजिदअली बुलाए गए। इन्होंने कहा कि शाहजी कोई इमाम नहीं, वह बेहूदा बकते और अपना रोब जमाते हैं। इसके बाद महाराज मानसिंह और फ़ौज के कप्तानों से सलाह ली गई। किसी ने कहा कि वह वली है; जो कहता है, करना चाहिए। किसी ने कहा कि वह कुछ नहीं, हमारा बनाया हुआ है। कल हम छतर-मंज़िल और बेलीगारद खाली करा लेंगे। अंत में धावा करने का हुक्म जारी हुआ। एक तरफ़ गोहार की फ़ौजें, दूसरी तरफ़ सवार, तीसरी तरफ़ तिलंगे और चौथी तरफ़ शोहदे धावा करें, इसकी व्यवस्था हुई।

दो घड़ी रात रहे अफ़सर सिपाहियों के साथ अपने-अपने मोर्चे पर गए, और यह शोर कर दिया कि छतर-मंज़िल और बेलीगारद घेर लिया है। परंतु जब

उधर से मार पड़ने लगी, तब भाग खड़े हुए। गोरे बेगम के महल से ख़ास बाज़ार की ओर गोलियाँ चला रहे थे। सफ़रमैना के सिपाहियों ने उसके नीचे रात-भर में एक सुरंग खोद ली थी, और वे उसमें बारूद भी रख चुके थे। आग देते ही वह कमरा गोरों को साथ लिए उड़ गया। उसकी एक धज्जी सैयद मीर कुमेदान के लगी और वह मर गए। बिरजिसक़दर के नौकर मुहम्मद मर्इदख़ाँ तथा दूसरे बहुत-से आदमी मारे गए। गोरे भागे। तिलंगों ने पीछा किया, इस पर दो गोरों ने बंदूक़ चलाई। तिलंगे भाग खड़े हुए, और गोरों ने जाकर सुरंग पर अपना मोर्चा लगाया।

जब लाल बारादरी की तरफ़ नजीबियों ने धावा किया, लालजी मुहम्मद अमीन कुमेदान ने बढ़कर बारादरी ले ली; और गोरे भागे। दूसरा धावा करने पर लालजी मारे गए, और उनकी लाश पड़ी रह गई। गोरों ने बारादरी फिर ले ली, और नजीबी भाग खड़े हुए। कुछ सिपाही रह गए थे। उनमें से बहुतेरे मारे गए। अफ़सर जलीलुलक़द्र भी मारे गए। इस दिन ५० गोरे और ५०० नजीबी मारे गए।

तीसरे दिन बहुत-से लोग अँगरेज़ी फ़ौज से भागकर आए। तिलंगे उन्हें गोइंदे कहकर पकड़ लाए। उन्होंने कहा कि आलमबाग़ में रसद नहीं, इसलिये भाग आए हैं। उनमें से एक के पास एक चिट्ठी मिली, जो अँगरेज़ी में थी। मम्मूख़ाँ ने वह चिट्ठी वाजिदअली को दी, और चोबदार

से कहा कि इस गोइंदे की नाक कटवाकर, मुँह काला कर, गधे पर चढ़ा शहर में घुमाओ। जनरल आउटराम का मुंशी वलायतहुसेन रसद का प्रबंध करने के लिये आलमबाग़ से निकला था। उसे पासी पकड़ लाए। उससे मम्मूख़ाँ ने हाल पूछा। उसने कहा कि जनरल आउटराम दो हज़ार गोरे इलाहाबाद से लाए हैं। मम्मूख़ाँ ने कहा कि यह असल गोइंदा है। कुल ५०० गोरे थे। यह हमें डराने के लिये ऐसा कहता है। इसका मुँह काला कर, गधे पर चढ़ाकर इसे शहर में घुमाओ। मीर वाजिदअली ने कहा कि मुझे इनका बयान ले लेने दो, फिर चाहे जो करना। उन्होंने मुंशी से कहा कि इतने गोरे न बताओ। उसने कहा कि मुझे न मालूम था, नहीं तो पाँच सौ ही बताता। उसका बयान लेकर मीर वाजिदअली ने उसे हिकमत से ज़िल्लत उठाने से बचा दिया।

जनरल हिसामुद्दौला आलमबाग़ के मोर्चे से चले आए थे। फ़ौज के अफ़सरों ने बेगम साहबा से उनकी शिकायत की। बेगम साहबा ने उन्हें बहुत सख़्त बातें कहीं। वह उठकर अपने घर चले गए। इस पर बेगम साहबा ने मुईनुद्दौला मीर इनायत-अली को बुलाया। मम्मूख़ाँ ने कहा कि सरकार का हुक्म है कि आप फ़ौज के जनरल हो जायँ। पहले तो इनकार किया, पर जब मम्मूख़ाँ ने कहा कि आप सरकार के ख़ैरख़्वाह नहीं जान पड़ते, तब लाचार होकर स्वीकार किया, और जनरली

की मुहर उन्हें दी गई। परंतु शरफ़ुद्दौला से उनका पहले से मनमुटाव था। उन्होंने बेगम साहबा से कहा कि कोई योग्य जनरल बनाया जाय, यह इस पद के योग्य नहीं। षड्यंत्र करके अपने भांजे मुज़फ़्फ़रअलीख़ाँ को जनरल की ख़िलत दिलवा दी, और यह जनरल का काम करने लगे। इनकी अधीनता में काम करने से मुईनुद्दौला ने इनकार कर दिया।

उधर सर जेम्स आउटराम रेज़ीडेंसी के पास के शत्रुओं के मोर्चे तोड़ने में लगे हुए थे। उन्होंने उनके उत्तर की ओर के नदी के किनारे तक के तथा पूर्व की ओर के सब मोर्चों को तोड़ डाला, और उन दोनो दिशाओं की ओर से वह निश्चिंत हो गए। शत्रुओं के हाथ में उनके पूर्व-दक्षिण, और दक्षिण-पश्चिम की ओर के मोर्चे रह गए। इन मोर्चों से वे रेज़ीडेंसी पर बराबर गोले बरसाते रहे। २७ की दोपहर के बाद १२० गोरों के दल ने पूर्व-दक्षिण के मोर्चे पर धावा किया, परंतु वे उस मोर्चे को ध्वंस नहीं कर सके। केवल दो तोपें बेकार कर लौट आए।

२६ को सबेरे तीन दल भिन्न-भिन्न मोर्चों पर धावा करने को भेजे गए। इन दलों को अपने धावे में बहुत कुछ सफलता प्राप्त हुई। इस आक्रमण के फल-स्वरूप शत्रुओं के तीन मोर्चों की तीन बड़ी तोपें तोड़ डाली गईं, उनके बहुत-से गोलंदाज़ भी मारे गए, और वे सब मकान भी ढहा

दिए गए, जिनकी आड़ लेकर विद्रोही रेज़ीडेंसी पर गोलियों की वृष्टि करते रहते थे।

अँगरेज़-सरकार की और सर जेम्स की भी यह इच्छा थी कि रेज़ीडेंसी छोड़कर वहाँ की सेना, घायल, बीमार, स्त्री-बच्चे, सब-के-सब कानपुर आ जायँ। इसीलिये आलमबाग़ में सेना अपना सब सामान छोड़ आई थी। वह तीन दिन का सामान अपने साथ लेकर गई थी। परंतु रेज़ीडेंसी से सबका निकल चलना संभव न था, क्योंकि वहाँ ७०० स्त्री-बच्चे और ५०० घायल थे। ये सब बिना गाड़ियों के हटाए नहीं जा सकते थे। गाड़ियाँ मिल नहीं सकती थीं। रेज़ीडेंसी का संबंध बाहर से पहले से ही नहीं था। विद्रोहियों ने उसका ऐसा ही विकट घेरा डाल लिया था। सर जेम्स ने शहर के लोगों से पत्र-व्यवहार करने का प्रयत्न किया, परंतु कृतकार्य न हुए। जब उन्होंने देखा कि न तो वह सवारियों का प्रबंध कर सकते हैं, न ऐसी परिस्थिति में रेज़ीडेंसी खाली करना ही संभव है, तब उन्होंने वहीं रुक जाने का निश्चय किया। दूसरा कोई उपाय भी तो न था।

३० सितंबर को सर जेम्स आउटराम ने इस विचार से विद्रोहियों के मोर्चे पर धावा किया कि आलमबाग़ का मार्ग खुल जाय। कानपुर की सड़क पर दोनो ओर जो मकान थे, उनमें से कुछ पर गोरों ने अधिकार कर लिया। उन्हें प्रत्येक मकान के लिये विद्रोहियों से युद्ध करना पड़ा। ३ दिन लगातार युद्ध के बाद

वे ६ ऑक्टोबर को एक बड़ी मसजिद के सामने पहुँचे। इस पर क़ब्ज़ा करने के लिये भारी प्रयत्न की ज़रूरत थी। अतएव कानपुर-रोड से आलमबाग़ जाने का विचार छोड़ दिया गया। हाँ, उस पर के वे मकान ढहा दिए गए, जिनसे विद्रोही अँगरेज़ी सेना पर गोलियाँ बरसाते थे। अब सर जेम्स ने रेज़ीडेंसी में ही रहकर प्रधान सेनापति सर कालिन कैंपबेल के आने की प्रतीक्षा करने का निश्चय किया। यह प्रतीक्षा-काल छ हफ़्ते का हुआ। इस बीच में विद्रोही रेज़ीडेंसी की मार की जगहों पर बराबर गोलियाँ बरसाते रहे, तथा दूर से तोपों के गोले भी चलाते रहे। परंतु उनका ध्यान उस भू-भाग की ओर अधिक रहा, जो जनरल हैवलक के अधिकार में था। इस स्थान के मकानों के पास के मकानों से विद्रोही मार-काट मचाए रहते थे। उन्होंने सुरंगें भी खोदी थीं, जिनमें से तीन ही उड़ा पाए। पर उनसे अँगरेज़ी सेना की कोई हानि न हुई।

पहली ऑक्टोबर को छ सौ के लगभग सैनिकों का एक दल धावा करने को भेजा गया। कानपुर की सड़क पर विद्रोहियों का जो तोपख़ाना लगा हुआ था, उसे ले लेने के विचार से उस दल ने दोपहर बाद तीन बजे धावा किया। रात होने तक गोरों का कुछ ऐसी इमारतों पर अधिकार हो गया, जिनसे वे उक्त तोपख़ाने पर अपना पूरा प्रभाव डाल सकते थे। रात-भर उन मकानों में रहे। दूसरे दिन सवेरे निकलकर उन्होंने तोपों पर आक्रमण किया, और

तीन तोपों पर अधिकार कर लिया। इसके बाद वह रेज़ीडेंसी लौट आए। इस दिन अर्थात् दूसरी तारीख़ को लोहे के पुल के पास के मकानों पर गोला-वारी की गई, क्योंकि उधर से विद्रोहियों के आक्रमण करने की आशंका थी।

तीसरी, चौथी और पाँचवीं को गोरी सेना का एक दल कानपुर की सड़क पर के मकानों पर अधिकार करने और उन मकानों के विद्रोहियों को मार भगाने के काम में लगा रहा। इस क्षेत्र में प्रत्येक मकान के लेने में गोरों का विद्रोहियों ने डटकर सामना किया, जिसमें गोरी सेना को भारी हानि उठानी पड़ी; अतएव छ तारीख़ को जल्दी ही उक्त सेना वापस बुला ली गई, और उस क्षेत्र का युद्ध बंद कर दिया गया। इस पर विद्रोही ख़ुद बढ़ आए, और समीप के मकानों में आकर वहाँ से बराबर गोलियाँ चलाते रहे। उनके जवाब में रेज़ीडेंसी से भी गोलियाँ चलती रहीं। इस दिन विद्रोहियों ने फ़रहतबख़्श-महल पर भी आक्रमण किया, और वे उसमें घुस भी आए। परंतु पीछे से सिक्खों और गोरों ने पहुँचकर उन्हें वहाँ से मार भगाया। लगभग १५० विद्रोही मारे गए।

९ ऑक्टोबर की रात को रेज़ीडेंसी में इस बात की ख़बर पहुँच गई कि दिल्ली पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया, और बादशाह क़ैद हो गए।

१६ ऑक्टोबर की रात को विद्रोहियों ने बड़ी तीव्र गोला-बारी की, परंतु आक्रमण करने का साहस उन्हें नहीं

हुआ। १७ को उन्होंने दो सुरंगें उड़ाई। छतर-मंज़िल के आगे जो अँगरेज़ी तोपख़ाना लगा हुआ था, एक सुरंग से उसके मोर्चे के घेरे की दीवार का एक भाग उड़ गया। विद्रोहियों ने उस टूटे हुए भाग से भीतर घुसने का यत्न किया, परंतु वे वहाँ से तत्काल मार भगाए गए। उनके १२ आदमी मारे गए। दूसरी सुरंग फ़रहतबख़्श-महल के पास उड़ी, जिससे वहाँ की आगे की चौकी उड़ गई, और तीन आदमी मारे गए।

२२ ऑक्टोबर को विद्रोहियों ने आलमबाग़ पर आक्रमण किया, पर दूर से ही गोले चलाते रहे। अंत में वे मार भगाए गए।

३० ऑक्टोबर को रेज़ीडेंसी में इस बात की ख़बर पहुँच गई कि स्वयं प्रधान सेनापति रेज़ीडेंसी के उद्धार के लिये आ रहे हैं। फलतः एक नक़्शा बनाकर आलमबाग़ को भेज दिया गया कि वह रेज़ीडेंसी पहुँचने के लिये कौन-सा मार्ग ग्रहण करें। आलमबाग़ में झंडा ऊँचा करके सूचित किया गया कि उक्त नक़्शा पहुँच गया है।

दूसरी और तीसरी नवंबर को विद्रोहियों ने दक्षिण की ओर से ख़ूब गोलियाँ चलाईं।

छ नवंबर को रेज़ीडेंसी में इस बात की सूचना पहुँच गई कि सर होप ग्रांट दिल्ली की फ़ौज के साथ बनी आ गए हैं, और प्रधान सेनापति कानपुर पहुँच गए हैं, जहाँ से १० नवंबर को उनके आलमबाग़ पहुँचने की आशा है।

प्रधान सेनापति की चढ़ाई और रेज़ीडेंसी का उद्धार

सर जेम्स आउटराम और जनरल हैवलक इस आशा से लखनऊ पर चढ़ दौड़े थे कि विद्रोहियों को परास्त कर रेज़ीडेंसी में घिरे हुए अँगरेज़ों का उद्धार करेंगे, और उन्हें सही-सलामत कानपुर लिवा लाएँगे। विद्रोहियों को परास्त कर वे रेज़ीडेंसी में पहुँच तो गए, परंतु वहाँ से अँगरेज़ों को निकाल ले चलने का उन्हें साहस न हुआ, और उन्होंने ख़ुद भी घिर जाना मुनासिब समझा। उनके आ जाने से पहले के घिरे हुए लोगों को काफ़ी धीरज हो गया।

इस परिस्थिति की ख़बर अँगरेज़ी सरकार को थी, परंतु प्रधान सेनापति सर कालिन कैंपवेल लाचार थे। वह १३ अगस्त को कलकत्ता पहुँच गए, और प्रधान सेनापति का पद ग्रहण कर लिया। परंतु वहाँ कोई तैयारी न थी। मदद पहुँचाने के साधनों का भी अभाव था। किंतु जब दक्षिणी आफ़्रिका और इँगलैंड से कुछ फ़ौज आ गई, तब उन्होंने उसे तत्काल रवाना किया। मार्ग यद्यपि संकट-पूर्ण था, तथापि उन्होंने उसे निर्विघ्न पार करने की व्यवस्था कर दी। आख़िर

२७ ऑक्टोबर को वह भी कलकत्ते से चले, और ३ नवंबर को कानपुर पहुँच गए। इस समय यहाँ कालपी में ताँतिया टोपी एक बड़ी सेना लिए पड़े थे। अतएव उन्होंने ताँतिया को रोक रखने के लिये कानपुर में कुछ सेना छोड़ दी, और शेष सेना के साथ लखनऊ चल पड़े।

दिल्ली से कुछ फ़ौज लेकर सर होप ग्रांट ३० ऑक्टोबर को ही कानपुर आ गए थे, और उसी दिन गंगा पार कर लखनऊ को चले भी गए थे। मार्ग में उनका किसी ने विरोध नहीं किया, और बनी पहुँचकर उन्होंने अपना पड़ाव डाल दिया था। कानपुर पहुँचकर प्रधान सेनापति ने उन्हें तार दिया कि उनके आने तक ठहरे रहें। ३१ को सर होप ग्रांट ने बनी से आगे बढ़कर किसी मैदान में पड़ाव डालने का निश्चय किया। २ मील जाने के बाद बनथरा में उनकी विद्रोहियों से मुठभेड़ हो गई। उन्होंने उनकी दो तोपें ले लीं, और उन्हें मार भगाया। आगे जाकर, एक मैदान में पड़ाव डालकर प्रधान सेनापति के आने की राह देखने लगे।

६ नवंबर को प्रधान सेनापति दल-बल के साथ कानपुर से गंगा पार उतरे। उन्नाव, बशीरगंज और नवाबगंज में अपने थाने बैठाते और तार का सिलसिला ठीक करते हुए बनी पहुँचे। १० को सारी अँगरेज़ी सेना का पड़ाव आलमबाग़ से ५ मील दूर पड़ा। कुल सेना ४,५५५ थी। इसके साथ ३२ तोपें थीं। इनके सिवा कई हज़ार ऊँट, किराँचियाँ और

छकड़े तथा कई सौ हाथी थे। रेज़ीडेंसी पहुँचने का सुरक्षित मार्ग बताने के लिये कनवाघ-नामक एक अँगरेज़ रेज़ीडेंसी से छिपकर उनके पास राज़ी-ख़ुशी पहुँच गया।

जब सर कालिन के आ पहुँचने की ख़बर लखनऊ पहुँची, तब हुक्म हुआ कि फ़ौज जाकर उन्हें रोके, और वह आगे न बढ़ने पावें। यह सुनते ही गढ़ अमेठी के राजा माधोसिंह बहादुर अपनी दो हज़ार फ़ौज लेकर जा पहुँचे, और बनी तथा फ़िरोज़गंज के मैदान में ११ नवंबर को अँगरेज़ी फ़ौज से उनका सामना हुआ। यहाँ लखनऊ में ख़बर उड़ी कि राजा ने अँगरेज़ी फ़ौज को काट डाला है, और जो बची है, वह मैदान से हट गई है। इस ख़बर से ख़ुशियाँ मनाई जाने लगीं। फिर ख़बर आई कि राजा हारकर अपने घर भाग गया। अंत में महाराज मानसिंह ने मित्रता के कारण सच्ची ख़बर लेने के लिये अपने हरकारे भेजे। राह में उनको राजा से भेंट हुई। वह चार-पाँच आदमियों के साथ भागे चले आते थे। बात यह हुई कि राजा ने एक गाँव की आड़ पकड़कर अँगरेज़ों से लड़ना शुरू किया, परंतु अँगरेज़ी फ़ौज ने उन्हें चारो ओर से घेर लिया। उनके अधिकांश सिपाही मारे गए, और राजा कुछ आदमियों के साथ बड़ी कठिनाई से निकलकर भाग आए।

जो तिलंगे लड़ने गए थे, उनकी तोपें छिन गईं, और वे भी भाग खड़े हुए।

इसके बाद अँगरेज़ी सेना बिना किसी विरोध के आलमबाग़ पहुँच गई। १२ नवंबर को आलमबाग़ से सेमाफोर द्वारा रेज़ीडेंसी ख़बर भेज दी गई कि प्रधान सेनापति आ गए हैं; और १४ को सबेरे वह शहर पर चढ़ाई करेंगे। १४ नवंबर को अँगरेज़ी सेना ने आलमबाग़ से तैयार होकर दिलकुशा की ओर कूच किया। उस ओर जो मोर्चे लगे थे, वहाँ के फ़ौजवाले गोरों को आते देख मोर्चा छोड़कर भाग खड़े हुए। यह ख़बर सुनकर राजा मानसिंह ने उसकी सचाई जानने के लिये अपना आदमी भेजा। उसने आकर कहा कि अँगरेज़ी फ़ौज बढ़ती और इधर की फ़ौज भागती हुई चली आ रही है। यह सुनकर उन्होंने अपने चले जाने की तैयारी की। मम्मूख़ाँ ने दूसरे अफ़सरों को फ़ौज के साथ अँगरेज़ी फ़ौज के मुक़ाबले में भेजा। तिलंगों ने तोपें लगाईं, और वे कुछ देर मोर्चे पर जमे रहे, पर गोरों को देखते ही भाग खड़े हुए। मम्मूख़ाँ ने सुजाउद्दौला अहमदअलीख़ाँ (छोटे मियाँ) को दिल्ली से आई हुई फ़ौज का अफ़सर बनाया, और फ़ौज को चार हज़ार रुपए चबेने के लिये देकर लड़ने को भेजा। शाह साहब से भी कहलाया। उन्होंने भी फ़ौज के लिये दो हज़ार रुपए माँगे, जो उन्हें दिए गए, और उनसे चलने को कहा गया। इस समय तक गोरी सेना दिलकुशा के मैदान में पहुँच गई थी, जहाँ मुक़ाबला हुआ। अहमदअलीख़ाँ ने धावा किया, और

मुँहमेल तलवार-संगीन चली। सब मारे गए। शाह साहब ने भी धावा किया, पर ये भी ठहर न सके। अब तिलंगों ने यह कहा कि हमारे कारतूसों में भूसी भरी है, और गुरांब के बदले कंज भरे हैं। इसी से हमारा वार खाली जाता है, और अँगरेज़ों की मार से हमारे आदमी मारे जाते हैं। उन्होंने आकर मीर वाजिदअली को घेरा। इन्होंने टाल दिया। तब मम्मूख़ाँ के पास गए और कहा कि गुरांबों में भूसी किसने भरी है। उन्होंने मेगज़ीन के मीर मुहम्मद-अली कारिंदा और क़ाज़िमअली दारोग़ा का नाम बताया, और गुरांब बनानेवाले मुहम्मदअली का सामना करा दिया। उसने कहा कि गुरांब बनाने में भूसी तो पड़ती ही है। तिलंगों ने कहा कि झूठ कहते हो, तुम सब अँगरेज़ों से मिले हुए हो। वे मम्मूख़ाँ को लेकर बेगम साहबा के पास गए। उन्होंने गालियाँ देते हुए कहा कि मम्मूख़ाँ अँगरेज़ों से मिला हुआ है। उन्होंने कारतूसों के भूसी भरे होने की बात कही। बेगम साहबा ने सबकी बातें सुनीं। मम्मूख़ाँ को तो बचाया, और कहा कि जिस पर तुम्हारा संदेह हो, उसे मार डालो। तिलंगों ने मीर मुहम्मदअली और गुरांब बनवानेवाले एक मुत्सद्दी को बाँध लिया, और सड़क पर ले जाकर मार डाला। तिलंगों का संदेह ठीक था। यह इसलिये किया जा रहा था कि अँगरेज़ी अमलदारी होने पर इस बात से वे ख़ैरख़्वाह मान लिए जायँगे।

इस बात को लेकर शाहजी ने कहा कि ये गोली और गोले ओर साहब के बनवाए हुए हैं, जिन्हें मितौली के राजा लोने-सिंह ने दो साहबों, दो मेमों और एक मिस के साथ क़ैद करके यहाँ भेजा है। ओर साहब हमारी हार चाहते हैं, और बिरजिस-क़दर के अहलकार उनसे मिलकर षड्यंत्र कर रहे हैं, इसी से उन्हें मारा नहीं, उलटा आराम से रक्खा है। यह सुनकर तिलंगे बिगड़े, और वे साहबों की खोज में क़ैसरबाग़ पहुँचे। उन्हें खबर मिली कि साहबों को वहाँ से हटाने का प्रबंध हो रहा है। तिलंगों ने मम्मूख़ाँ और शरफ़ुद्दौला पर बंदूकें रख दीं, और कहा कि ओर साहब कहाँ हैं। बेगम साहबा ने भी बहुत समझाया, पर शाहजी न माने, और कहा कि ऐसी ही रियायतों से जीत होने में देर हो रही है। शाहजी तिलंगे लेकर ओर साहब के मकान पर गए। तिलंगों का आना जानकर ओर साहब घर से बाहर निकल आए। शाहजी ने उनका उपहास किया, और तिलंगे उन्हें पकड़कर ले चले। वे ओर साहब से पूछने लगे कि तुम्हें यहाँ किसने रक्खा। उन्होंने कहा कि नाम नहीं जानता, वह दारोग़ा कहलाता है। फिर तिलंगों ने उन्हें क़ैसरबाग़ के फाटक के बाहर ले जाकर मार डाला।

ओर साहब के निकाल ले जाने का प्रयत्न उनके मित्र दीवान अनंतराम ने किया था। अनंतराम राजा मानसिंह के वकील थे। इन्होंने मीर वाजिदअली और मम्मूख़ाँ से मिलकर सब

मामला ठीक कर लिया था, और इसकी तैयारी पूरी हो गई थी कि ओर साहब लखनऊ से हटाकर शाहगंज पहुँचा दिए जायँ। जिस दिन वह गुप्त रीति से हटाए जाने को थे, एक सिपाही ने इस बात का भेद तिलंगों को बता दिया। फलतः वे आए और ओर साहब को ले जाकर मार डाला। दीवान अनंत-राम अपनी जान मुश्किल से बचा पाए। अँगरेज़ी अमलदारी होने पर इस खैरख्वाही के लिये उन्हें १० गाँव माफ़ी दिए गए। मीर वाजिदअली कुछ दिनों तक छिपे रहे। अंत में पाँच सौ अशर्फ़ियों के साथ एक अर्ज़ी शाहजी के पास भेजी। शाहजी ने उनको परवाना लिख दिया, और वह फिर आकर अपना काम करने लगे। तिलंगों ने कभी कुछ नहीं कहा।

इधर तिलंगे इस शग़ल में लगे हुए थे, उधर गोरी सेना दिलकुशा की दीवारों के नीचे जा पहुँची, और दीवार तोड़कर उसमें घुसने के लिये मार्ग बनाने लगी। उसके मार्ग में बाधा डालने के लिये तिलंगों को आगे आने का साहस न हुआ। दीवार तोड़कर आधी रेजीमेंट अभी भीतर घुसी होगी कि दिलकुशा-महल के पीछे से विद्रोहियों की छ तोपों ने गोले छोड़ने शुरू किए। परंतु अँगरेज़ी तोप-ख़ाने ने आगे आकर उन तोपों का मुँह बंद कर दिया, और विद्रोही भाग खड़े हुए। इस संघर्ष में अँगरेज़ी सेना के १० आदमी मारे गए तथा घायल हुए। दिलकुशा पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया। रात में पूरन दारोग़ा

के मकान में गोरे ठहरे। यहाँ के महल की छत पर सेमाफोर खड़ा किया गया, और कनवाघ के संकेतों से रेज़ीडेंसी को खबर भेजी गई।

दोपहर बाद दो बजे के लगभग अँगरेज़ी सेना मार्टीनेर की ओर बढ़ी, और विद्रोहियों को वहाँ से मार भगाया, और उस पर अधिकार कर लिया। सेमाफोर दिलकुशा से हटाकर मार्टीनेर में लगा दिया गया। इधर विद्रोही रात में रेज़ीडेंसी पर बराबर गोलियों की वृष्टि करते रहे।

१५ को रविवार था। दोपहर तक पृष्ठ-रक्षक-दल, खाद्य सामग्री और गोला-बारूद भी आ गया। गोरे नहर पर पुल बाँधकर नवाब मुबारिज़ुद्दौला के मकान में पहुँचे, और जो कुछ वहाँ रह गया था, उसे लूट लिया। नहर के पास जो बस्तियाँ थीं, उनमें आग लगा दी। १५ को आधी रात के बाद २ बजे अँगरेज़ी सेना शहर होकर रेज़ीडेंसी को रवाना हुई। कई राकेट दाग़कर इसकी सूचना रेज़ीडेंसी को दे दी गई। सेना धीरे-धीरे रवाना हुई। कनवाघ और एक देशी मार्गदर्शक आगे-आगे चल रहे थे। सेना नहर पार कर ठीक सवेरे सिकंदरबाग़ के पास पूर्व-ओर एक गाँव के बाहर पहुँच गई। बड़ी तोपें आगे लाने के लिये यहाँ सेना ठहर गई। कुछ अधिक तोपों के साथ सेना का दल पुरानी बारकों पर आक्रमण करने को भेजा गया। शेष सेना गाँव होकर बाग़ की ओर बढ़ी। अँगरेज़ी सेना को आती देखकर बाग़ के

भीतर की दोमंजिली इमारत से उस पर विद्रोहियों ने गोली-वर्षा शुरू कर दी। साथ ही शाहनजफ और मोतीमहल से उन पर गोले बरसने लगे। इधर अँगरेज़ी सेना की तोपों ने अपना काम शुरू किया। कोई पौन घंटे की गोला-बारी के बाद बाग़ की दीवार ध्वस्त हुई। पहले पंजाबियों को बढ़ने की आज्ञा दी गई, पर उनके अँगरेज़ अफ़सरों के मारे जाने से वे आगे बढ़ने से हिचकने लगे। इस पर सर कालिन ने ६३वीं हाइलेंडर्स को आगे बढ़ने की आज्ञा दी। ये लोग बिजली की तरह तड़पकर बाग़ में घुस गए। विद्रोही सैनिकों ने भागकर बाग़ की दोमंजिली इमारत में आश्रय लिया। यहाँ मुँहमेल लड़ाई हुई, जिसमें विद्रोही बुरी तरह मारे गए। कितने ही हौज़ में गिर-गिरकर मर गए, और जिन्होंने दीवार फाँदकर भागने का प्रयत्न किया, वे मारे गए। उनका एक भी सैनिक बाग़ से निकलकर बाहर नहीं जाने पाया। उनके दो हज़ार से ऊपर आदमी मारे गए। दो हज़ार सैनिक तो बाग़ की इमारत के भीतर कमरों में ही मारे गए। ये सैनिक ७१वीं देशी पैदल और ११वीं अवध इर्रेगुलर पैदल सेनाओं के थे। अँगरेज़ी सेना के १०८ आदमी मारे गए तथा घायल हुए।

सिकंदरबाग़ के भीतर विद्रोही दल का संहार करके जब अँगरेज़ी सेना बाग़ के बाहर आई, तब विद्रोहियों ने समझ लिया कि बाग़ पर अँगरेज़ी सेना का क़ब्ज़ा हो गया, अतएव

वे उस पर दाहने-बाएँ तथा सामने शाहनजफ़ से भीषण अग्नि-वर्षा करने लगे।

अब शाहनजफ़ पर आक्रमण करने का आदेश हुआ। तोपख़ाने की संरक्षा में अँगरेज़ी सेना आगे बढ़ने लगी। उधर शाहनजफ़ से विद्रोही गोलियाँ बरसा ही रहे थे। यही नहीं; उनका एक दल तीरों की भी वर्षा कर रहा था। विद्रोहियों की भीषण मार के आगे अँगरेज़ी सेना संकट में पड़ गई, फिर भी वह बढ़ती हुई दीवारों तक पहुँच गई। यद्यपि बाहरी दीवार बहुत कुछ भग्न हो गई थी, तथापि भीतरी ज्यों-की-त्यों खड़ी थी, और विद्रोही उसकी आड़ से भीषण मार कर रहे थे। फलतः आक्रमणकारी मार भगाए गए। यह देखकर प्रधान सेनापति ने आदेश किया कि अँधियारा हो जाने के पहले शाहनजफ़ पर क़ब्ज़ा करना होगा। फलतः उस पर अति भीषण गोला-बारी शुरू हुई।

दूसरा आक्रमण करने को सेना तैयार हो ही रही थी कि शाहनजफ़ के उत्तर-पूर्वी कोने की दीवार के टूटने की ख़बर मिली। फलतः सेना का एक दल उस ओर आक्रमण करने को भेजा गया, और यह दल बिना किसी बाधा के उस ओर से शाहनजफ़ में प्रवेश करने लगा। जब विद्रोहियों को इसका पता लगा कि अँगरेज़ी सेना उस ओर से आ रही है, तब वे पीछे के दरवाज़ों से गोमती तथा मोती-मस्जिद की ओर भाग निकले। इस भगदड़ में कुछ ही विद्रोही मारे जा सके, और

शाहनजफ़ पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया। अँगरेज़ी सेना ने १६ नवंबर की रात शाहनजफ़ में ही व्यतीत की।

उधर रेज़ीडेंसी की सेना ने भी, जनरल हैवलक के नेतृत्व में, सर कालिन की सेना से मिलने के लिये, अपनी ओर युद्ध शुरू कर दिया। जब अँगरेज़ी सेना शाहनजफ़ पर अधिकार करने में लगी थी, हैवलक की तोपें एक बाग़ के वृक्षों की आड़ से हिरनख़ाना और इंजिन-घर पर गोले बरसा रही थीं। जब उनकी दीवारें काफ़ी भग्न हो गईं, तब अँगरेज़ी सेना ने ३½ बजे धावा किया। क़ैसरबाग़ से उस पर गोलियों की बाढ़-पर-बाढ़ दागी गई। परंतु अँगरेज़ी सैनिक बढ़े चले गए, और इंजिन-घर विद्रोहियों से ख़ाली करा लिया। इसके बाद हिरनख़ाना तथा दूसरे घरों पर आक्रमण किए गए, और उनसे भी विद्रोही मार भगाए गए। अब इस सेना और सर कालिन की सेना के बीच में मेसहाउस और मोतीमहल, ये ही दो इमारतें थीं। रात हो आई थी, अतएव सेनाएँ जहाँ-की-तहाँ ठहरी रहीं।

१७ नवंबर को सवेरे शाहनजफ़ में स्थित अँगरेज़ी सेना के सैनिकों ने अपनी बंदूक़ें साफ़ कीं। पिछले ४ दिन के घमासान युद्ध के कारण उन्हें यह काम करने का अवसर ही न मिला था। इसके बाद उनमें से कुछ चुने हुए निशानेबाज़

अपनी बंदूक़ें लेकर खड़े हो गए। गोमती-पार बादशाहबाग़ से विद्रोही लोग शाहनजफ पर गोला-बारी कर रहे थे, और अब उन्होंने बाग़ से बाहर अपनी तोपें खड़ी कर दी थीं। अतएव इन्हीं को लक्ष्य कर बीस बंदूक़ों की एक बाढ़ दाग़ी गई, जिससे छ विद्रोही धराशायी हो गए। फलतः वे अपनी तोपें लेकर फिर बाग़ के भीतर हो रहे, और किसी तरह की छेड़-छाड़ नहीं की। इसके बाद सवेरे ६½ बजे प्रधान सेनापति के तोपख़ाने से गोले बरसने शुरू हुए, और उसकी आड़ में गोरी सेना आगे बढ़ने लगी। अब मेसहाउस पर दो ओर से तोपों की भारी मार पड़ने लगी। अंत में अँगरेज़ी फ़ौज ने बढ़कर उस पर अधिकार कर लिया, और ख़ुरशेद-मंज़िल की मीनार पर अपना झंडा गाड़ दिया। इस झंडे को विद्रोहियों ने दो बार गिराया। उस समय वे क़ैसरबाग़ से मेसहाउस पर ज़ोरों की गोली-वृष्टि कर रहे थे। यही नहीं, वे टेढ़ीकोठी में आ गए, और वहाँ से भी गोली-वर्षा करने लगे। परंतु टेढ़ी-कोठी में आग लगा दी गई, और अँगरेज़ी सेना बढ़कर मोती-मंज़िल के फाटक के सामने जा पहुँची। उन दोनो के बीच एक चौड़ी सड़क थी, जहाँ क़ैसरबाग़ से गोलियों की भयानक वृष्टि हो रही थी। क़ैसरबाग़ वहाँ से ४५० गज़ के अंतर पर था। परंतु सैनिक गोलियों की परवा न कर दो-दो, तीन-तीन करके उस मार्ग को दौड़कर पार करने लगे। गोरे सैनिकों के पहुँचते ही जो विद्रोही मोती-मंज़िल में थे, दूसरी ओर से गोमती

की ओर भाग निकले, और तैरकर गोमती-पार निकल गए। वे ७० के लगभग थे। गोरों ने गोलियाँ चलाकर उन्हें मार डालने का प्रयत्न किया, परंतु वे बचकर निकल गए। इधर मोती-मंज़िल पर गोरों का अधिकार हो गया, और रेज़ीडेंसी का मार्ग खुल गया। यह देखकर इंजिन-घर से लेफ़्टिनेंट मारिसन मोती-मंज़िल की ओर बढ़े। इन दोनो इमारतों के बीच में जो जगह थी, वहाँ एक ओर क़ैसरबाग़ से गोलियाँ बरस रही थीं, और इस तरफ़ बादशाहबाग़ से गोले आ रहे थे। परंतु मारिसन बचते हुए मोती-मंज़िल पहुँच गए, और इस प्रकार दोनो सेनाओं में संबंध स्थापित हो गया।

उधर जनरल आउटराम ने बेलीगारद से धावा किया, और मोतीमहल तक सारा मार्ग साफ़ कर दिया। अब गोरे छतर-मंज़िल पहुँच गए। दोनो जनरलों ने जाकर सर कालिन से भेंट की। दिलकुशा से लेकर छतर-मंज़िल तक गोरी सेना का पड़ाव पड़ गया। गोरों ने नसरतबाग़ को खोद डाला, और नदी के किनारे एक नई सड़क तैयार कर दी। फिर झाँकी बाँधकर मोतीमहल में तीन तोपें लगाई, और क़ैसरबाग़ की ओर गोले चलाने लगे। जो बाग़ी फ़ौज चारो ओर फैली हुई थी, तितर-बितर हो रक्षा की जगहों में जा छिपी। गोरे हिम्मत कर क़ैसरबाग़ के फाटक तक जा पहुँचे, और कहा कि फाटक खोल दो, हम आ गए हैं। दरवाज़े

पर तोप लगी हुई थी। गोलंदाज़ भाग गए थे। बशीरुद्दौला की दूकानों में एक भठियारा बैठा था। संयोग से एक राही भी आ गया। दोनो ने तोप में महताब लगा दी। तोप पहले से भरी हुई थी। चल गई। कई गोरे गिर गए। उन्होंने दूसरी बार तोप चलाई। तीसरी बार दागने से गोरे हट गए। इतने में हज़रतगंज से दिल्लीवाली फ़ौज आ पहुँची। उसके गोली दागने पर गोरे भाग गए।

जब नवाब ने बाग़ी फ़ौज की हार-पर-हार होती देखी, तब वह अपने आदमियों से मुहम्मदी झंडा उठवाकर क़ैसरबाग़ से बाहर निकले। उन्होंने हिंदुओं और मुसल-मानों को बहुत धिक्कारा, पर कोई भी आगे न आया। और, जितने थे, खिड़की से निकलकर सिर झुकाए बाहर चले गए।

यह हाल देखकर महल की बेगमें घबरा गईं, और कहने लगीं कि अगर गोरे आएँगे, तो हम लोग किधर से, कहाँ जायँगी। बेगम साहबा भी बहुत उदास हुईं। उनसे कहा गया कि शहर की किसी सुरक्षित जगह में उठ चलो। पर वह नहीं राज़ी हुईं। उन्होंने फाटक में ताला डलवा दिया। बेगम जानती थीं कि जिस वक़्त क़ैसरबाग़ ख़ाली किया जायगा, तिलंगे उसे लूट लेंगे।

तिलंगे और सवार भागकर ऐशबाग़, आग़ामीर की सराय, मलीहाबाद, गुसाईंगंज चले गए। अहमदउल्लाशाह गऊ-

घाट पर नवाब अलीनक़ीख़ाँ के मकान में चले गए। बाक़ी तिलंगे शहर से १०-१५ कोस दूर भाग गए। शाहजी ने नवाब की बारादरी पर क़ब्ज़ा किया, और बढ़-बढ़कर बातें बघारने लगे।

जब अँगरेज़ी फ़ौज ने तारावाली कोठी पर क़ब्ज़ा किया, तब क़ैसरबाग़ की भी फ़ौज भाग निकली। यह देखकर बेगम साहबा ने मर मिटने का इरादा किया, और इसके लिये महल की स्त्रियों को तैयार करने लगीं। यह सब सुनकर नवाब साहब अलम लेकर निकले। उस समय क़ैसरबाग़ में पाँच सौ के लगभग आदमी थे। उनमें से दो सौ उनके साथ चलने को तैयार हुए। मीर सफ़दरअली ने कहा कि अलम किसी सैयद के हाथ में होना चाहिए। अतएव मीर फ़िदाअली को अलम दिया गया। वह पचीस-तीस क़दम आगे-आगे जा रहा था। बशीरुद्दौला के मकान की तरफ़ से धावा करने का विचार किया गया। परंतु जब उधर तोप चलने लगी, तब सब-के-सब भाग आए।

अब बेगम साहबा और बिरजिसक़दर भागने की तैयारी करने लगे। मम्मूख़ाँ और अफ़सरों ने समझाया कि हम थोड़ी देर में अँगरेज़ों को मार भगाएँगे। आपके भागने से सब काम बिगड़ जायगा।

अँगरेज़ी फ़ौज ने चीनी बाज़ार के पास एक झंडा खड़ा किया। तिलंगों ने उसे ले लिया। कुछ नजीबी जिन्नत-

आरामगाह के मक़बरे में रह गए थे। अँगरेज़ी तोपें बराबर गोले बरसाती रहीं। रात को ख़बर मिली कि मक़बरे के नीचे सुरंग आ रही है। यह सुनते ही वहाँ के मोर्चे के सिपाही भाग खड़े हुए। जब सुरंग का पता मिल गया, तब इधर से वह काट दी गई। रात-भर महल पर बंम के गोले बरसते रहे। इधर से भी तोपें चलती थीं।

सवेरे ख़बर आई कि गोरों ने तारावाली कोठी ले ली। मुहम्मद क़ासिमख़ाँ और यूसुफ़ख़ाँ को हुक्म हुआ कि यह कोठी गोरों से छीन ली जाय। फिर डटकर लड़ाई छिड़ गई। आख़िर गोरे कोठी छोड़कर चले गए, और तिलंगों ने उस पर अधिकार कर लिया। परंतु तुरंत ही गोरों ने फिर धावा किया, और तिलंगों को कोठी में घेर लिया। लगभग सौ तिलंगे मारे गए। जो बचे, वे भागकर शाह-मंज़िल पहुँचे। अब सबको विश्वास हो गया कि गोरे क़ैसरबाग़ भी ले लेंगे। सब फ़ौज भाग खड़ी हुई। राजा मानसिंह और राजा माधोसिंह ऐशबाग़ भाग गए।

१८ नवंबर को प्रधान सेनापति की बड़ी तोपों ने और इधर रेज़ीडेंसी की तोपों ने क़ैसरबाग़ पर गोले बरसाना शुरू किया, और उसके फाटक को छिन्न-भिन्न कर डाला। आज दोनो जनरल प्रधान सेनापति से फिर मिले, और उनसे प्रार्थना की कि वह २४ घंटे के भीतर रेज़ीडेंसी ख़ाली करने के अपने आदेश पर फिर विचार करें। परंतु प्रधान सेनापति

अपने निश्चय पर अटल रहे। वह सिकंदरबाग़ लौट गए, और उसे अपना सदर बनाया।

क़ैसरबाग़ में विद्रोहियों का प्रधान अड्डा था। अतएव तीन दिन तक उस पर दो तोपख़ानों से गोला-बारी की गई। सर जेम्स और जनरल हैवलक क़ैसरबाग़ पर आक्रमण करना चाहते थे, परंतु सर कालिन ने उनकी बात न मानी। तार से वाइसराय ने भी सर कालिन का ही समर्थन किया। अब अँगरेज़ रेज़ीडेंसी ख़ाली करने की तैयारी करने लगे। उन्होंने छतर-मंजिल में एक विज्ञापन चिपकाया। उसमें लिखा था कि हम बाग़ी फ़ौज या वर्तमान शासकों के डर से रेज़ीडेंसी ख़ाली करके नहीं जा रहे हैं, बल्कि अपनी ख़ुशी से जा रहे हैं। जिस किसी को हिम्मत हो, आकर हमारी राह रोके, और लड़ाई का तमाशा देखे।

कुछ अहलकारों ने बेगम साहबा को समझाया, और मना किया कि अँगरेज़ों का पीछा करना ठीक नहीं; क्योंकि वे ख़ुद ही यहाँ से भागे जा रहे हैं। इन लोगों ने यह कार-रवाई अँगरेज़ों की ख़ैरख़्वाही करने के विचार से की थी।

१६ नवंबर की दोपहर को रेज़ीडेंसी से स्त्रियाँ निकलीं। उनमें अधिकांश गाड़ियों पर सवार की गईं। बहुतेरी पैदल भी थीं। वे फ़रहतबख़्श-महल, छतर-मंजिल और मोती-मंज़िल के मार्ग से सिकंदरबाग़ गईं। रात होने पर वहाँ से डोलियों पर बिठाकर दिलकुशा भेज दी गईं; जहाँ सबेरा होने तक

वे सही-सलामत पहुँच गईं। १६ की ही संध्या को घायल और बीमार भी रेजीडेंसी से हटाकर दिलकुशा पहुँचाए गए।

अँगरेज़ों ने रेजीडेंसी और मोतीमहल ख़ाली कर दिए, परंतु तोपों के मोरचे लगे रहे। आधी रात के समय उनसे फिर गोले बरसने शुरू हुए। पहरे पर के सब सिपाही भाग खड़े हुए। मीर वाजिदअली सोते से उठकर भागे, और जहाँ बीवियाँ क़ैद थीं, वहाँ जा पहुँचे। उन्होंने समझा कि गोरे आ पहुँचे, अतएव उन बीवियों की बदौलत वह मारे जाने से बच जायँगे। ख़ज़ाने के पहरेदार ख़ज़ाना लूटकर भाग खड़े हुए। जो लोग क़ैसरबाग़ में थे, वे भागकर महल में जा छिपे। हज़ारों बाग़ से बाहर भाग गए। अली मुहम्मदख़ाँ भागकर बेगम साहबा के पास जा बैठे। परंतु एकाएक गोले चलने बंद हो गए, और लोगों की जान में जान आई। २० से २२ नवंबर तक इसी प्रकार क़ैसरबाग़ पर गोले बरसते रहे। २२ को उसकी दीवार तीन जगह टूट गई, जिससे तीन चौड़े-चौड़े मार्ग हो गए। विद्रोही तीनो जगह एकत्र थे। वे समझते थे, अँगरेज़ी फ़ौज आक्रमण करना चाहती है।

२०, २१ और २२ को भी रेजीडेंसी ख़ाली करने का काम होता रहा। २२ की संध्या तक सारी तोपें क्रमशः हटा ली गईं। २३ लाख रुपया, जो रेजीडेंसी में गड़ा था, खोदकर दिलकुशा पहुँचा दिया गया। उसके साथ भूतपूर्व बादशाह के जवाहरात भी थे। परंतु लोग अपना

निजी सामान नहीं ले जा सके। वे केवल आवश्यक सामान ही ले जाने पाए। जो तोपें तथा वैसे ही दूसरे सामान हटाए नहीं जा सके, वे बेकार करके वहीं पड़े रहने दिए गए। २२ की आधी रात को रेज़ीडेंसी खाली करके सेना को चले आने का हुक्म था, अतएव ठीक समय पर सेना रेज़ीडेंसी खाली कर रवाना हुई। मार्ग में जो मोर्चे मिले, वहाँ के भी सैनिक रेज़ीडेंसी की सेना में मिलते गए, और सारी सेना दिलकुशा पहुँच गई। जनरल आउटराम अपनी सेना के साथ दिलकुशा-छावनी के मोर्चों पर जम गए। २३ को दिन में विद्रोही बीच-बीच में गोले छोड़ते रहे। उन्हें पता न था कि रेज़ीडेंसी खाली कर दी गई है।

२४ नवंबर को दिलकुशा में जनरल हैवलक की मृत्यु हो गई। उन्हें अतीसार हो गया था। इस दिन ११ बजे के लगभग जनरल होप ग्रांट अपनी सेना के साथ स्त्रियों और घायलों को लेकर आलमबाग़ रवाना हुए, जहाँ वह सारा क़ाफ़िला ३ बजे के लगभग पहुँच गया। जनरल आउटराम अपने सेना-दल के साथ दिलकुशा में रुके रहे। इस क़ाफ़िले ने आलमबाग़ के आगे मैदान में अपना पड़ाव डाला।

२५ नवंबर की दोपहर तक जनरल आउटराम भी अपने सैन्य-दल के साथ आलमबाग़ आ गए। २६

नवंबर को सारे क़ाफ़िले ने आलमबाग़ में विश्राम किया।
इस अवकाश में कानपुर जाने की तैयारी की गई।

२७ को सर कालिन ने कानपुर भाग चलने का हुक्म दिया। सैनिकों को तीन दिन का रैशन और दूना गोला-बारूद दिया गया। और, जो भी सवारियाँ प्राप्त थीं, उन पर स्त्री, बच्चे, बीमार और घायल सभी सवार कराए गए। दोपहर बाद दो बजे सारा लश्कर कानपुर भाग चला। जनरल आउटराम चार हज़ार सैनिकों के साथ आलमबाग़ में रख दिए गए, ताकि वह विद्रोहियों को रोके रहें, और यह भी प्रकट हो कि अँगरेज लखनऊ छोड़कर भाग नहीं गए। सर कालिन तीन हज़ार योद्धाओं की रक्षा में दो हज़ार से ऊपर स्त्री, बच्चे और घायल अपने साथ लेकर कानपुर रवाना हो गए। यह लश्कर १५ मील चलने के बाद बनी के पुल पर ११ बजे रात को पहुँचा। यहाँ कानपुर की ओर से भारी गोला-बारी होने की आवाज़ सुनाई दी। यहाँ सवेरा होने तक पृष्ठ-भाग की सेना ठहरी रही। आगे का दल दो बजे रात से ही चल पड़ा। २८ को सवेरे ५ मील चलने के बाद सर कालिन ने विश्राम के लिये ठहरने का हुकम दिया। यहाँ उन्हें कानपुर का चिंताजनक समाचार प्राप्त हुआ। फलतः उन्होंने ९३वीं सेना को पंक्तिबद्ध कर, अफ़-सरों को आगे बुलाकर कहा कि कानपुर में जनरल विंढम पर नाना साहब और गवालियर की सेना ने आक्रमण किया है,

और उन्हें क़िले में भागकर आश्रय लेना पड़ा है। हमें आज ही रात को कानपुर पहुँचना है। यदि हमारे पहुँचने के पहले नावों का पुल विद्रोहियों के हाथों में चला जायगा, तो हम अवध में ही रह जायँगे। हमारे आगे कानपुर में ४० हज़ार विद्रोही सेना होगी, जिसके पास ४० से ऊपर तोपें हैं। इधर लखनऊ में हमारे पीछे ६० हज़ार विद्रोही हैं। साथ ही हमें अपने दो हज़ार स्त्री-बच्चों और घायलों की भी रक्षा करनी होगी। सेना ने एक स्वर से उसी रात को कानपुर पहुँचने का इरादा प्रकट किया। उन्नाव पहुँचने पर सेना ने दो घंटे तक विश्राम किया, और २८ की संध्या के बाद अँधेरा होने तक वह अपने पड़ाव पर पहुँच गई, जहाँ से गंगा-तट केवल तीन मील था। २९ की दोपहर को प्रधान सेनापति गंगा पार कर कानपुर पहुँच गए। पुल पर विद्रोही अधिकार नहीं कर सके, अतएव २९ की रात को स्त्री, घायल तथा बीमार गंगा पार कर सही-सलामत कानपुर पहुँच गए।

विद्रोहियों की दुरवस्था और आलमबाग़ का मोर्चा

रेज़ीडेंसी खाली करके अँगरेज़ लोग चुपचाप चले गए, पर विद्रोहियों को इसकी खबर तक न हुई। सवेरे रोज़ की तरह बेलीगारद की ओर के मोर्चे के सिपाहियों ने गोलियाँ चलाईं, पर बेलीगारद से उसका कोई जवाब न मिला। सब लोग आश्चर्य में थे। उन्हें नहीं मालूम था कि रेज़ीडेंसी खाली हो गई है। आगे बढ़ने की किसी को हिम्मत न हुई। अंत में तुरही बजानेवाला एक पासी साहस करके भीतर कूद गया। जब रेज़ीडेंसी को खाली पाया, तब उसने तुरही बजाई। अब क्या था। सब बहादुर बन गए, और रेज़ीडेंसी में जा घुसे। जो रद्दी सामान अँगरेज़ न ले जा सके थे, उसे लूटने लगे। एक सुरंग के उड़ने से १५ सिपाही उड़ गए। कुछ तोपें बेकार करके गोरे छोड़ गए थे। वे सब सिपाही उठा ले गए। जो कुछ भी सामान टूटा-फूटा रह गया था, सड़ा-गला गल्ला, मेज़ें-कुर्सियाँ आदि, सब-का-सब सिपाहियों और नगरवासियों ने लूट लिया। यही नहीं, सिपाहियों ने छतर-मंज़िल, फ़रहतबख़्श-महल आदि में जो शाही माल-असबाब रक्खा था, वह भी सब लूट लिया। मना करने पर गोली मारने को तैयार हो गए।

अब लोग बेगम साहबा तथा मम्मूख़ाँ के पास आ-आकर तरह-तरह की ख़ुशामद-भरी बातें कहते थे। वे कहते थे कि अब अँगरेज़ इधर फिर आने का नाम न लेंगे।

तीसरे दिन यह ख़बर आई कि जनरल मार्टीन की बीवियों के पास लाखों का जवाहरात है, जिसे वह लिए जा रही हैं। प्रयत्न करके वह सब-का-सब छीना जा सकता है। मम्मूख़ाँ ने हुक्म दिया कि जो कोई छीन लावेगा, उसे चौथाई माल दिया जायगा। नादरी फ़ौज के अजीटन सीतलसिंह के मुंशी गुलाबराय ने कहा कि अगर सीतलसिंह को हुक्म दिया जाय, तो वह छीन ला सकता है। उसे हुक्म दिया गया। वह कुछ फ़ौज और एक तोप लेकर गया। दो ऊँटिनें, ५० गाएँ और कुछ भेड़ें अपने साथ लेकर लौटा, और कहा कि अँगरेज़ों को मार भगाया. यह सामान लूट लाया, और अब फिर लड़ने जाता हूँ। उसे दुशाला, रूमाल और ५००) इनाम दिया गया। सच बात यह थी कि वह रियाया का माल लूट लाया था।

अब यह ख़बर उड़ी कि नानाराव ने कानपुर ले लिया है, और वह लखनऊ आना चाहते हैं। आलमबाग़ से कुछ गोरे चले गए हैं, और अब वहाँ कुछ घायल और बीमार ही रह गए हैं। यह सलाह ठहरी कि आलमबाग़ ले लिया जाय, फिर. क़ानपुर लेने का प्रयत्न किया जाय। ज़मींदारों और ताल्लुक़ेदारों को फ़र्मान भेजे गए कि बेलीगारद जीत लिया गया है। गोरे

जवाहरात लेकर भागे हैं। जो उन्हें ज़िंदा या उनका सिर लाएगा, इनाम और ख़िलत पाएगा।

नानाराव दौलतख़ाना में उतरे थे। उनके साथ दो हज़ार फ़ौज थी। इसमें दिल्ली और मुरार (ग्वालियर) के सिपाही थे। लखनऊ में उन्होंने अपने जवाहरात रेहन रख और बेचकर एक लाख रुपया इकट्ठा किया था। उन्होंने बेगम की सरकार से दो बड़ी तोपें और कुछ फ़ौज माँगी थी, जो नहीं मिली। इससे नाराज़ हो गए। उनकी फ़ौज भी शहर लूटने लगी। जब उनसे कहा गया, तो उन्होंने जवाब दिया, दोनो की लूटती हैं। इस पर कोरट हुआ, जिसमें कहा गया कि आज इस तरह कहते हैं, कल कुछ और झगड़ा न खड़ा करें। अफ़सरों ने कहा कि वह क्या कर सकते हैं, निकाल दिए जायँगे, पर इस समय सरकार के मेहमान हैं। अतएव कोई वैसी काररवाई करना ठीक न होगा। इससे यह प्रश्न स्थगित हो गया।

उधर जब नानाराव ने सुना कि कानपुर पर ताँतियाराव ने चढ़ाई की है, तब वह लखनऊ से फ़तेहपुर चौरासी पहुँचे, और फ़ौज लेकर शिवराजपुर के घाट से गंगा पार उतर गए। पर जब सुना कि ताँतियाराव भाग गए हैं, तब वह अपनी ५ हज़ार फ़ौज के साथ सोभासिंह चौधरी की गढ़ी में चले गए, और फ़तेहपुर में पड़ाव डाले पड़े रहे। मुरार की फ़ौज का सेनापति बख़्तख़ाँ फ़ौज और तीन तोपें लेकर लखनऊ आया। नानाराव ने लिखा कि हमारी फ़ौज तीन तोपें लेकर लखनऊ

भाग गई है. उससे तोपें लेकर हमारे पास भेज दो। यहाँ यह सलाह हुई कि तोपें देना ठीक नहीं, उसका बल बढ़ जायगा। यहाँ से लिखा गया कि लखनऊ आकर आलमबाग़ फ़तह करो, उसके बाद कानपुर पर तुम्हारा क़ब्ज़ा करा दिया जायगा। नानाराव नाराज़ होकर शिवपुरी चले गए, और ५ हज़ार फ़ौज नौकर रक्खी।

१५वें रिसाले के रिसालदार क़ासिमख़ाँ फ़र्रुख़ाबाद गए थे, ताकि मुरार की फ़ौज लिवा लाएँ। वह उसे लिए लखनऊ आ रहे थे। नानाराव ने मार्ग में उसकी तोपें ले लेने का इरादा किया। जब रिसालदार ने मुक़ाबला करने का इरादा किया, तो नानाराव तरह दे गए। मुरार की फ़ौज लखनऊ आई और पारवाली कोठी में ठहराई गई। जलालपुर के क़िले का मोर्चा उसे सौंपा गया। अब्दुलहादी क़ंधारी को यह फ़ौज सौंपी गई। इसमें १२ हज़ार तिलंगे थे, और इसके साथ ५० तोपें थीं।

अब शहर में फिर लूट शुरू हुई। मम्मूख़ाँ ने महाजनों से कहा कि तुम दस रुपया सैकड़े नोट ख़रीद रहे हो, बड़ा फ़ायदा उठा रहे हो, तुम्हें सरकार को रुपया देना चाहिए, नहीं तो लूट लिए जाओगे। लाचार होकर महाजनों ने मिलकर एक लाख रुपए के लगभग दिया। परंतु इतने पर भी लूट बराबर जारी रही। इधर बेगम साहबा ने सारे महलों और कोठों को खोज-खोजकर वहाँ की सारी चाँदी उठवाकर टकसाल में भेजवा दी। जब शहर के महाजन इस लूट से बहुत

पीड़ित हुए, तब गोमती-किनारे शाहजी के पास फ़रियाद करने गए। उन्होंने शाहजी से कहा कि पहले तिलंगों ने लूटा, अब सरकार लूट रही है। नवाब साहब कहते हैं कि हम मम्मूख़ाँ के मामले में नहीं बोलेंगे। शाहजी ने कहा कि अब जब मम्मूख़ाँ या यूसुफ़ख़ाँ की दौड़ किसी के यहाँ जाय, तब हमें ख़बर देना, हमारे आदमी उन लोगों को क़ैद करेंगे। शाहजी ने इसके लिये ५० जासूस नौकर रक्खे। बीस या तीस दिन तक शाहजी के तिलंगे दौड़वालों को पकड़ने में लगे रहे। यूसुफ़ख़ाँ शाहजी के तिलंगों को देखकर भाग जाते। मम्मूख़ाँ ने फ़ौज से शाहजी की शिकायत की, और कहा कि शाहजी राजकाज के कामों में हाथ डालने लगे हैं। उन्होंने अपने मुंशी इलाही-बख़्श को बहरामघाट पर लट्ठों का महसूल वसूल करने को भेजा है। यह सब अनुचित है। उन्हें क़ैद करने को फ़ौज जानी चाहिए। हुसैनाबाद के दारोग़ा अहमदअली फ़ौज और तोपें अपने साथ लेकर गए। शाहजी ने भी तोपें लगवा दीं। पाँच घंटे तक दोनो तरफ़ से गोली-गोले चलते रहे, पर धावा करने की किसी अफ़सर को हिम्मत न हुई। ग्यारह दिन तक सरकारी फ़ौज शाहजी को घेरे रही। इसके बाद तिलंगे अपने अफ़सरों की आज्ञा के विरुद्ध रात के समय शाहजी को शीशमहल में लिवा ले गए, और घेरा उठा दिया। दो दिन बाद उन्हें कोंड़ह और कोंसी लिवा गए। मम्मूख़ाँ ने नाराज़ होकर कहा कि फ़ौज बहुत बुरा कर रही है। हम उसकी तनख़्वाह न

देंगे। कुछ तिलंगों और सवारों ने नौकरी छोड़ दी। अब तिलंग शाहजी को चक्करवाली कोठी में लाए। उनका इरादा फ़ैज़ाबाद जाने का हुआ।

एक दिन अहलकार जमा होकर कहने लगे कि बादशाह तो बिरजिसक़दर हैं, फ़र्रुखाबाद के नवाब तफ़ज़्ज़ुलहुसैन और कानपुर के नानाराव कौन होते हैं। वहाँ की भी तहसील-वसूल सरकार को करनी चाहिए। अतएव ख़ाँ अलीख़ाँ वहाँ के तहसीलदार नियुक्त किए गए। उन्हें १४ पर्चे की ख़िलत मिली। वह एक फ़ौज और ५ तोपें लेकर चले। उनके साथ १० हाथी, २० ऊँट, १० छकड़े, १ ख़ीमा, २ चोबदार और १० चपरासी किए गए। साँड़ी पहुँचने पर उन्होंने कटियारी के राजा हरदेवबख़्श की शिकायत लिख भेजी। लिखा कि यह ताल्लुक़ेदार अँगरेज़ों से मिला हुआ है। इसने अँगरेज़ों को, उनके बाल-बच्चों को और उनके माल-असबाब को अपने यहाँ छिपा रक्खा है। इसके चाचा शिवसिंह और लालताबख़्श गोरों की रक्षा में रहते हैं। यह अपने वकील से हाल-चाल लेता रहता है। अतएव इसे मार डालना उचित होगा। और, इसका इंतज़ाम करके ही आगे बढ़ना होगा। लखनऊ से हुक्म आ गया। फ़ौज भेजी गई। पर राजा ने लड़ना मुनासिब न समझा, और ख़ाँ अलीख़ाँ तथा साँड़ी के चकलेदार मुहम्मद मिर्ज़ा को काफ़ी नज़राना भेंट कर बला दूर की।

विद्रोही तथा उनका नवाबी दरबार इसी प्रकार की बातों

में फँसे हुए थे। वे कदाचित् यह समझ बैठे थे कि अँगरेज़ भाग गए हैं, और जो थोड़े-से आलमबाग़ में रह गए हैं, उन्हें जब चाहेंगे, मार लेंगे।

२७ नवंबर, १९५७ को सर कालिन सर जेम्स आउटराम को आलमबाग़ में छोड़कर कानपुर चले गए। पर २ दिसंबर तक विद्रोहियों ने उनसे ज़रा भी छेड़-छाड़ नहीं की। इन पाँच दिनों में सर जेम्स अपनी सेना की रक्षा की समुचित व्यवस्था कर ली। उन्होंने जलालाबाद के क़िले में अपनी सेना की एक टुकड़ी कुछ तोपों के साथ ठहरा दी, और उसके एक मील पीछे मैदान में खाइयाँ खोद और तोपें आदि लगाकर ज़म गए।

परंतु २ दिसंबर से विद्रोहियों ने आक्रमण करना शुरू किया। उनका यह आक्रमण प्रतिदिन २२ दिसंबर तक होता रहा, और प्रत्येक दिन अँगरेज़ी सेना की तोपों की मार खाकर उन्हें हट जाना पड़ा। २२ दिसंबर को विद्रोहियों ने बनी के पुल पर अधिकार करने के लिये सेना भेजी, ताकि पुल पर अधिकार करके अँगरेज़ी सेना का कानपुर से संबंध तोड़ दिया जाय। जासूसों से सर जेम्स को उनके इस विचार की ख़बर लग गई। अतएव उन्होंने यह प्रयत्न किया कि ख़ुद उस सेना का ही लखनऊ से संबंध टूट जाय। इसके लिये उन्होंने उस सेना पर आक्रमण कर दिया। पर वे अपने आक्रमण में सफल-मनोरथ नहीं हुए। विद्रोही सेना दिलकुशा से अपना

संबंध अविच्छिन्न बनाए रही। इस युद्ध में ५० से ऊपर विद्रोही मारे गए। उनकी ४ तोपें छिन गईं, साथ ही एक हाथी भी। अँगरेज़ी सेना का एक सैनिक मारा गया, और १० घायल हुए। इस हार से नवाब की सेना की हिम्मत जाती रही, और वह १२ जनवरी तक चुप बैठी रही। बीच में एक दिन तोपों से दिन-भर गोले ज़रूर बरसाए।

१२ जनवरी को सर जेम्स आउटराम ने कानपुर को कुछ ख़ाली गाड़ियाँ, एक सैनिक टुकड़ी की संरक्षा में, माल लाने को भेजीं। इसकी ख़बर जब नवाब की सेना को जासूसों से मिली, तब लगभग तीस हज़ार सेना उस क़ाफ़िले पर आक्रमण करने को शहर से बाहर निकली, परंतु कैप्टेन ओल्फ़र्ट्स ने चार तोपों की मार तथा घुड़सवारों की टुकड़ी के धावे से उस सेना को मार भगाया।

१६ जनवरी को कानपुर से एक अँगरेज़ी क़ाफ़िला आ रहा था। शाहजी ने सेना का एक दल लेकर उसे रोकना चाहा। उन्होंने धूल के तूफ़ान की आड़ लेकर उस पर आक्रमण कर दिया। कैप्टेन ओल्फ़र्ट्स ने इस बार फिर आक्रमणकारियों का मुक़ाबला किया, और उन्हें मार भगाया। शाहजी इस संघर्ष में क़ैद होते-होते बचे। वह घायल हो गए थे। इसके बाद नौ बजे सवेरे शहर की सेना ने, एक ब्राह्मण सेनापति के नेतृत्व में, सर जेम्स आउटराम की सेना पर आक्रमण किया और अँधेरा होने तक युद्ध होता रहा। अंत में शाही सेना

भाग खड़ी हुई, और ब्राह्मण सेनापति क़ैद हो गया। इस लड़ाई में एक अँगरेज़ सैनिक मारा गया, और ७ घायल हुए। नवाब की सेना के बहुत-से आदमी मारे गए।

२२ जनवरी को आउटराम की सहायता के लिये १० तोपें और ७५वीं पैदल सेना आ गई।

१५ फ़रवरी को नवाब की सेना ने फिर आक्रमण किया, परंतु ओल्फ़र्ट्स ने अपनी तोपों से फिर उन्हें मार भगाया। अँगरेज़ी सेना का एक आदमी मारा गया, और एक घायल हुआ। १६ को विद्रोहियों ने फिर आक्रमण करना चाहा, परंतु दूर-ही-दूर चिल्लाते रहे। तो भी उनके ६० आदमियों के लगभग मारे गए या घायल हुए होंगे।

२१ फ़रवरी को तड़के विद्रोहियों ने भीषण आक्रमण किया, और अँगरेज़ी मोर्चों के ४ सौ गज़ की दूरी तक आ गए। उन्हें अपने जासूसों से ख़बर मिली थी कि उस समय अधिकांश अफ़सर और सैनिक रविवार होने से चर्च-परेड में होंगे। सारी सेना को अपने मोर्चों में पहुँचते-पहुँचते नवाब की सेना अँगरेज़ी सेना के मोर्चों के बहुत निकट आ गई, परंतु सवा दस के होते ही वह भाग खड़ी हुई। उनके लगभग ३४० आदमी मरे या घायल हुए। अँगरेज़ी सेना के ६ आदमी घायल हुए।

२५ फ़रवरी को नवाब की सेना ने फिर सवेरे से ही आक्रमण शुरू किया। सात बजे से आलमबाग़ पर गोला-बारी

शुरू हुई। अपनी सेना के रिज़र्व के साथ हाथियों पर ख़ुद बेगम, उनके प्रधान मंत्री तथा दरबारी भी मौजूद थे। सर जेम्स आउटराम आक्रमणकारी सेना के भागने का मार्ग रोकने के लिये जब इस ओर आए, तब उनके दल ने बेगम की रिज़र्व सेना पर गोला-बारी शुरू कर दी। इस पर बेगम साहबा तथा उनके सरदार भाग खड़े हुए। परंतु आक्रमणकारी दिन-भर और रात को भी लड़ते रहे। और जब वह कुछ भी कर-धर न सके, तब २६ फ़रवरी को सवेर उसने युद्ध बंद कर दिया।

अब फिर सभा हुई, जिसमें तय हुआ कि आलमबाग़ पर फिर धावा किया जाय। दूसरे दिन सबेरे नवाब मियाँ अहमद-अली अपने खैरख्वाहों और ख़ुशामदियों के साथ हाथी पर सवार होकर करबला के नाके से जलालपुर गए। वहाँ तामजाम पर सवार होकर तोप के मोर्चे पर पहुँचे। ख़ुशामदी बढ़-बढ़कर बातें बघारते जा रहे थे। जब इधर की फ़ौज तैयार होकर धावे के लिये खड़ी हुई, तब उधर से एक कंपनी, दो तोपें और कुछ सवार बाहर निकले। दोनो ओर से गोला-बारी होने लगी। जब इधर के सवारों ने धावा किया, तब कई गिर पड़े। जब उधर के सवार बढ़े, तब इधर के भाग निकले। तोप भी बंद हो गई। नवाब साहब पीनस पर सवार होकर करबला के दरवाज़े तक आए। वहाँ से हाथी पर सवार होकर महल पहुँच गए। तिलंगे और

सवार अहलकारों को गालियाँ बकते अपने पड़ाव को भाग गए। नवाब मुईनुद्दौला करबला की सबील में बैठे रहे। जब तिलंगे भाग खड़े हुए, तब नवाब को अपनी हाज़िरी देकर वह भी घर चले गए।

ख़ुदायारख़ाँ अँगरेज़ों के ख़ैरख़्वाह थे। मीर वाजिदअली ने इन्हीं को मेमों और साहबों की ख़ातिरदारी में नियुक्त किया था। इन्होंने भागती हुई फ़ौज के ३३ जोड़े जूते इकट्ठे करके नीलाम किए। जब दूसरे धावे के समय फ़ौज भागी, तब भगोड़ों को इन्होंने करबला की अपनी सबील पर ख़ूब शरबत पिलाया। भगोड़े जब इनकी तारीफ़ करने लगते, तब यह कहते, यह सब तुम्हारी जूतियों का प्रताप है।

आलमबाग़ में अँगरेज़ों का मोर्चा लगा देखकर अहलकारों को डर हुआ कि ऐसा न हो कि अँगरेज़ लोग शहर पर आक्रमण करें, अतएव शहर की रक्षा के लिये नई मोर्चेबंदी की गई। छतर-मंज़िल से तहौवरबख़्श की कोठी तक एक, चौलक्खी से रोशनअलीख़ाँ के मकान तक दूसरी, बग्घीख़ाने से जहूर-बख़्श तक तीसरी और क़ैसरबाग़ के पूर्व से ख़ास बाज़ार की सड़क तक चौथी। ख़ंदक खोदकर धुस बनाए गए। जगह-जगह लगभग ११ सुरंगें खोदी गईं, एवं कूचाबंदियाँ की गईं। दरवाज़ों पर बुर्ज और सड़क पर के मकानों में गोली मारने के लिये छेद बनाए गए। इसके लिये मम्मूख़ाँ के उस्ताद के लड़के मीर आबिद नियुक्त किए गए। उन्होंने यह सब

काम सफ़रमैना फ़ौज के कप्तान दुर्गासिंह की सलाह से किया। फिर यह हुक्म हुआ कि जहाँ जिसका मोर्चा है, खंदक, धुस तथा बुर्ज आदि तैयार कराए, रुपया सरकार से मिलेगा। फलतः सभी फ़ौजों के कप्तानों ने इस हुक्म के अनुसार अपने-अपने मोर्चे तैयार कराए। इस सारी तैयारी में मीर आबिदअली के हाथ से एक लाख सत्तर हज़ार और कप्तानों तथा रिसालदारों के हाथ से चालीस हज़ार रुपया खर्च हुआ।

एक दिन बोल की पल्टन के एक सिपाही ने यह कहना शुरू किया कि मैं हनुमानजी हूँ, और आलमबाग़ को जीतूँगा। उसने अपना नाम बजरंगबली रक्खा। उसने कहा कि बिरजिस-क़दर जहाँ रहते हैं, वहाँ पेड़ पर झंडी लगा दो, गोरे वहाँ कभी न जा सकेंगे। वह द्वारकादास के बाग़ में ठहरा। उसकी सवारी बड़ी धूम से निकाली गई। एक दिन उसने हर पल्टन से एक-एक कंपनी लेकर धावा किया, और आलमबाग़ के दर-वाजे पर पहुँचने पर घायल हुआ। तिलंगे रोते हुए लौट आए। उसकी टोपी उसी झंडी पर टाँग दी गई। बाद को मालूम हुआ कि वह अँगरेज़ों का जासूस था; क्योंकि अँगरेज़ों के गोले अब उस झंडी के आस-पास अधिक ज़ोरों से बरसने लगे। इसी तरह काशी के पंडितों से पूजा कराई गई थी। ये क़ैसर-बाग़ के एक मकान में ठहराए गए थे। इन्होंने भी एक झंडी लगाई थी, जिसके आस-पास अँगरेज़ी तोपों के गोले आ-

आकर गिरने लगे। आख़िर यह झंडी उतार दी गई। ये लोग भी अँगरेज़ों के जासूस ही थे।

इसी बीच फ़र्रुख़ाबाद से हारकर वख़्तख़ाँ रिसालदार फ़तहअली के तालाव पर आकर ठहरा। मम्मूख़ाँ और बेगम साहवा ने अफ़सरों से सलाह की। यह निश्चय हुआ कि वह वहीं ठहरे, शहर में न आए। इसकी उसे सूचना दी गई। पर वह शहर में चला आया। उसके साथ ५ हज़ार तिलंगे, ५ तोपें, २४ पनी मेगज़ीन, ५० हाथी और दिल्ली तथा फ़र्रुख़ाबाद के भले घरों की तीन सौ स्त्रियाँ थीं, जिनमें से वहुतेरी उसने वेच डाली थीं। तीन दिन वाद वेगम साहवा ने उसे वुलाया और उससे वफ़ादारी की क़सम ली। जव तनख़्वाह की वात न पटी, तव उसने कहा कि हम शहर को लूट लेंगे। तीन दिन तक इसका झगड़ा रहा। अंत में दुशाला और रूमाल की ख़िलत दी गई, और पाँच हज़ार दावत के लिये दिए गए। वह जलालावाद के क़िले में नियुक्त किया गया।

एक दिन जनरल आउटराम ने आलमवाग़ से निकलकर कप्तान उमरावसिंह और वोल की पल्टन के मोर्चों पर धावा किया। इनके मोर्चे जलालावाद के क़िले के पास के भदरक गाँव में थे। गोरे उनकी तोपें छीन ले गए। तिलंगे भागकर शहर आए। तव और तिलंगों को ले मुज़फ़्फ़रअलीख़ाँ हाथी पर सवार होकर वहाँ गए, पर तव तक गोरे तोपें

आलमबाग़ के भीतर कर चुके थे। जो तिलंगे भाग आए थे, वे निकाल दिए गए।

फिर गोरे भदरक की मस्जिद के पास दिखाई दिए। इधर पाँच हजार फ़ौज जमा थी। गोरों को देखते ही भाग खड़ी हुई। जनरल साहब ने भागकर मुहम्मदबाग़ में साँस ली।

इसके चौथे दिन सभा हुई, क़सम ली गई। मम्मूख़ाँ भी धावे में जाने को तैयार हुए। तीन तरफ़ से धावा किया गया। जाफ़री पल्टन के कुमेदान मुहम्मदहसन का भेजा गोले से उड़ गया। यह देखकर तिलंगे बंदूकें और जूते छोड़कर भाग खड़े हुए। गोलों की मार के आगे वे न ठहर सके। दो सौ तिलंगे मारे गए, और इनसे कहीं ज्यादा घायल हुए।

एक दिन यह ख़बर मिली कि आलमबाग़ के आस-पास और कानपुर के नज़दीक के ताल्लुक़ेदार तथा ज़मींदार अँगरेज़ों से मिल गए हैं। यह राय ठहरी कि अँगरेज़ों के जो जासूस क़ैद हैं, वे छोड़ दिए जायँ। उन्हें देखकर अँगरेज़ों और ज़मींदारों में का लगाव अपने आप टूट जायगा। इसके साथ ही ज़मींदारों और ताल्लुक़ेदारों के नाम फिर फ़रमान जारी किए गए, जिनमें अँगरेज़ों के क़त्ल करनेवाले को इनाम देने की घोषणा की गई।

इस बीच दिल्ली के शाहज़ादे फ़ीरोज़बख़्श बख़्तख़ाँ के साथ लखनऊ आए। उनके साथ दो सौ सवार और पाँच सौ तिलंगे थे। वह आदर के साथ ठहराए गए, और

पाँच हज़ार रुपए दावत के भेजे गए। कई दिन बाद वह दिल्ली के बादशाह के दामाद मिर्ज़ा बुलाक़ी और बहादुरशाह के पुत्र मिर्ज़ा कोचक सुलतान से मिलने उनके घर गए। उनके स्वागत के लिये मौलवी मीर मेहँदी अतालीक़, नवाब सिराजुद्दौला, और नवाब मुम्ताज़ुद्दौला बहादुर गए। पाँच अशर्फ़ियों की नज़र दी। मौलवी ने दो की दी। फिर उन्हें क़ैसरबाग़ लाए। ५००) दावत के लिये और कई किश्तियाँ पोशाक सफ़ेद बेगम साहबा ने भेंट कीं। छतर-मंज़िल रहने को दिया गया। यह समझकर कि उनका लखनऊ में रहना ठीक नहीं, उनकी रक्षा के बहाने तिलंगों की चार कंपनियाँ उनके पास रक्खी गईं। इस प्रकार वह नज़रबंद किए गए, और उनके साथ के सवार तथा तिलंगे सरकार में नौकर रख लिए गए।

जब बाग़ी फ़ौज पहलेपहल शहर में आई थी, निज़ामत की सरकारी पल्टनों ने शहर में लूट शुरू की थी। उन्हें मालूम भी था कि शहर में कौन-कौन रईस और महाजन हैं। लुटने-वाले रईसों में एक ग़ुलाम रज़ा थे। एक दिन तिलंगों ने इनका घर घेर लिया, और कहने लगे कि तुम्हारे घर में अँगरेज़ छिपे हैं। उन्होंने एक हज़ार रुपया सैयद बरकातअहमद रिसालदार को तथा एक ताज शाहजी को नज़र किया, और अपनी रक्षा की प्रार्थना की। उन्होंने तिलंगों को मना कर दिया। अब यह किसी तरह मम्मूख़ाँ

और वाजिदअली से मिले। एक हज़ार वाजिदअली को और पाँच हज़ार मम्मूख़ाँ को दिए। फिर मम्मूख़ाँ से उनकी गहरी मित्रता हो गई, और उन्हें सेना के लिये रसद जुटाने का काम दिया गया। यह काम उन्होंने अपने कारिंदा उमराव मिर्ज़ा को सौंप दिया। इन्होंने गहरे हाथ मारे। जब आउटराम ने आख़िरी धावा किया, तब रसद के मिलने में कठिनाई हुई। सबने इनकार कर दिया। ग़ुलाम रज़ा ने रसद जुटाई। मुसलमानों के लिये ख़मीरी रोटी और हिंदुओं के लिये पूरी-मिठाई का प्रबंध किया। इसके सिवा १५ हज़ार रुपए का अन्न अपने पास से ख़रीदकर क़ैसरबाग़ में रखवा दिया, जो बाद को अँगरेज़ों के हाथ लगा।

महाराज बालकृष्ण अँगरेज़ों के ख़ैरख़्वाह थे। उनके हित को दृष्टि में रखकर एक दिन उन्होंने यह सलाह दी कि सारे ज़मींदार और ताल्लुक़ेदार यहाँ शहर में बेकार पड़े हैं। इनको अपने-अपने इलाक़ों में चले जाने का हुक्म होना चाहिए, ताकि ये रुपया वसूल कर अपनी-अपनी मालगुज़ारी शाही ख़ज़ाने में जमा करने को भेजें। फलतः उन सबको चले जाने का हुक्म हो गया।

जो अँगरेज़ क़ैद करके राजा लोनेसिंह ने भेजे थे, उनमें से ओर साहब के मारे जाने का हाल यथा स्थान दिया जा चुका है। पर उनके साथ के दूसरे अँगरेज़ बच गए थे। उन्हें तिलंगे नहीं जान पाए थे, वे अब तक मीर वाजिदअली

की संरक्षा में थे। एक दिन उनके एक मित्र ने उनसे कहा कि यदि तुम इनकी जान बचा लोगे, तो आनेवाली आफ़त से ही न बच जाओगे, वल्कि अँगरेज़ी क़ायम होने पर तुम्हें इनाम भी मिलेगा। उनकी समझ में वात आ गई, और वह उस दिन से इस प्रयत्न में रहने लगे कि अँगरेज़ों के ख़ैरख़्वाह हो जायँ। उन्होंने अलीमुहम्मदख़ाँ और वेगम साहवा को यह चकमा दिया कि अगर इन अँगरेज़ों की जान वचा दी जायगी, तो इसका वड़ा असर होगा, और कलकत्ते में वादशाह वाजिद-अली शाह भी क़ैद से छोड़ दिए जायँगे। उनकी वातों का असर पड़ा, और यह सलाह ठहरी कि एक दिन वेगम साहवा और शाहंशाहमहल में लड़ाई हो, और इस वहाने वे क़ैसरवाग़ छोड़कर शहर के किसी मकान में उठ जायँ, उनके साथ साहवों की स्त्रियाँ भी चली जायँ। और, जव वे क़ैसरवाग़ से निकल जायँगी, तो उनकी रक्षा भी की जा सकेगी। फलतः एक दिन उन वेगमों में वड़ी लड़ाई हुई, और उस लड़ाई की खवर सारी सेना को हो गई। पूर्व-निश्चय के अनुसार शाहंशाहमहल, सुलतानमहल, खुर्दमहल, दिलदारमहल और दिलरुवामहल आदि दूसरे दिन सवेरे क़ैसरवाग़ से निकल-कर अकवरी दरवाज़े के पास आग़ा मिर्ज़ा आलम के मकान में जाकर रहीं। वे मेमें भी उनके साथ छिपकर पर्दे में निकल गईं। उनको मंसूरनगर में अकवरअलीख़ाँ के मकान में ले जाकर रक्खा। यहाँ से उन्होंने आउटराम साहव को जासूस

के हाथ चिट्ठी भेजी। दूसरा जासूस उसका जवाब लेकर आया। इसी दिन से मीर वाजिदअली अँगरेज़ों की तरफ़ खिंचते गए। दीवान अनंतराम द्वारा मीर वाजिदअली ने आउटराम साहब के पास अर्ज़ी भेजी, अपने तथा अपने साथ के लोगों के प्राणों की भीख माँगी, और यह वादा किया कि मेमें आप तक राज़ी-ख़ुशी पहुँचा दी जायँगी। इसके जवाब में जो परवाना उन्हें मिला, उसमें एक लाख रुपए का इनाम देने की बात लिखी थी।

ओर साहब के क़त्ल के बाद उनकी स्त्री, उनकी बेटी और मिस जक्सन उसी मकान में, बिना दाना-पानी, पड़ी रहीं। तीसरे दिन इसकी ख़बर एक सिपाही ने ऐशबाग़ जाकर अनंतराम को दी। उन्होंने उस सिपाही को कुछ रुपया इनाम दिया, और उसके हाथ मेमों के लिये रुपया, मेवा और मिसरी भेजी। साथ ही यह भी कहा कि हम उनके उद्धार का प्रयत्न करेंगे। फलतः उन्होंने मीर वाजिदअली को मिलाया, और ओर साहब की बेटी को बड़ी हिकमत से निकालकर ख़ुद ले भागे। पहले बीमार बताई गई, इसके बाद उसके मरने और दफ़न कर देने की ख़बर मम्मूख़ाँ को दी गई। इधर अनंतराम ने उसके झूठे जनाज़े से उसे उड़ा लिया, और हाथी पर बिठाकर ले चले। चिनहट में ५० सिपाहियों ने उन्हें आ घेरा और पूछ-ताछ की। उन्होंने उस लड़की को लिहाफ़ में लपेटकर अपने नौकर को सौंपा दिया, जो उसे

बड़ी सावधानी से लोंककर, विस्तर के साथ बग़ल में लेकर अपनी राह लगा। इधर उन्होंने हाथी से उतरकर सिपाहियों से बातें कीं, और उन्हें ५० मोहरें देकर अपना पिंड छुड़ाया। वहाँ से वह अपने इलाक़े हैदरगढ़ गए, जहाँ उनका वह नौकर उनसे जा मिला। वह लड़की को एक सुरक्षित स्थान में रख गया था। मुंशीजी जाकर लड़की को ले आए। बाद को उसे आउटराम साहब के पास पहुँचा दिया। ख़ैराबाद के कमिश्नर क्रिश्चियन साहब की ४ बरस की लड़की क़ैसरबाग़ में हैज़े से मर गई थी।

आलमबाग़ के मोर्चे पर पूर्ववत् लड़ाई जारी थी, नित्य धावे होते रहते थे, साथ ही शहर में मोर्चे-पर-मोर्चे लग रहे थे। इतने में बिरजिसक़दर की वर्ष-गाँठ का दिन आ गया, और उसके मनाए जाने की धूम मच गई। बेगम साहबा अपने पुराने चौलक्खी मकान से उठकर बशीरुद्दौला के मकान में आ गईं, और उसके सजाने तथा बेगमों और शाहज़ादों के बुलाने का हुक्म दिया। सब लोग आए, बड़ी रोशनी की गई। बेगम साहबा ने हज़रत अब्बास की दरगाह जाने की इच्छा प्रकट की, पर अफ़सरों और अहलकारों ने कहा कि आपका यहाँ से जाना ठीक न होगा। फलतः वहीं ग्यारहवीं वर्ष-गाँठ की गिरह दी गई। बेगम साहबा ने कहा कि नज़र पहले मुझे दी जानी चाहिए। इस पर बेगमों ने व्यंग्य किया, और बिरजिसक़दर को दो-दो, तीन-तीन अशर्फ़ियाँ देकर गले

लगाया। वे मेम-बच्चे भी इस जलसे में, हिंदोस्तानी पोशाक में, खुर्दमहल के साथ आए थे।

अब बिरजिसक़दर बाहर आए। पहले शरफ़ुद्दौला ने नज़र दी, इसके बाद अन्य कुटुंबियों, सरदारों और फ़ौज के अफ़सरों ने नज़रें दीं। ख़िलतें बाँटी गईं, परंतु बेतरतीबी से। बेगमों को खाना नहीं मिला। उन्होंने अपने घरों या बाज़ार से खाना मँगाकर खाया। दोपहर तक ख़ूब नाच-रंग रहा। तीसरे पहर जल्सा ख़त्म हुआ, और बेगम साहबा चौलक्खी को चली गईं।

अब ख़बर आई कि सिंगरामऊ से नैपाल के जंगबहादुर और गोरी फ़ौज ने आकर सुलतानपुर के नाज़िम मीर मेहँदी-हसनख़ाँ पर आक्रमण कर उसे हरा दिया, और उसके बाद हसनपुर पर धावा किया। हसनपुर के राजा हसनअलीख़ाँ ख़ूब लड़े और घायल हुए। इस पर मम्मूख़ाँ ने अमेठी के राजा माधोसिंह को हुक्मनामा भेजा कि तुम अँगरेज़ी सेना को रोको। साथ ही उन्होंने दूसरे राजाओं को भी हाज़िर होने के लिये लिखा। राजा माधोसिंह ने जवाब दिया कि मैं अपने राज्य से होकर अँगरेज़ी सेना को न आने दूँगा। मम्मूख़ाँ के बुलाने पर रामनगर के राजा गुरुबख़्शसिंह और संडीले के आमिल हशमतअली भी नहीं आए। अँगरेज़ी फ़ौज कंदा के नाले तक लड़ती चली आई। फिर अमेठी और उसके बाद गुसाईंगंज पहुँची। धौरहरा में मुसाहबअली ज़मींदार से लड़ाई हुई। दूसरे दिन वह मम्मूख़ाँ

के पास पहुँचा। उसने कहा कि सलीमपुर के चौधरी एहसानअली, हैदरगढ़ के आमिल मीर सफ़दरअली, गुसाईंगंज के आमिल कमीरुद्दीन हसन अँगरेज़ों से मिले हुए हैं, वे अँगरेज़ों को देखते ही भाग खड़े हुए। परंतु तोपों के न होने पर भी मैंने डटकर युद्ध किया। हैदरगढ़ की लड़ाई में मीर अकबरअली आदि बड़ी वीरता से युद्ध करते हुए मारे गए। यह सब सुनकर मम्मूख़ाँ ने मुसाहबअली को दो तोपें, दो नजीबी पल्टनें और चकले गुसाईंगंज तथा हैदरगढ़ की चकलेदारी की ख़िलत दी और कहा कि जाकर गोरों का सामना करो।

कहते हैं कि अमानी साहब ने सुलतानपुर के मेहँदीहसनख़ाँ नाज़िम को लिखा था कि तुम मार्ग में बाधा न डालोगे, तो तुम्हें २५,००० रुपया मासिक की पेंशन पुश्त-दर-पुश्त मिलती रहेगी। अँगरेज़ी अमलदारी होने पर उन्हें दो सौ रुपया मासिक पेंशन दी भी गई।

जो फ़ौज सुल्तानपुर की ओर से लड़ती चली आ रही थी, उसके आने के पहले आलमबाग़ से एक अँगरेज़ी फ़ौज ने निकलकर दिलकुशा की कोठी और मुहम्मदबाग़ के पास अपने मोर्चे क़ायम किए। इस तरफ़ से फ़ौज गई, और लड़ाई शुरू हुई। गोरों ने बाग़ को चारो ओर से घेर लिया, और वहाँ के नजीबी तिलंगों को मार भगाया। उनमें से कितने ही कुओं में गिरकर मर गए।

एक दिन अँगरेज़ी फ़ौज जलालाबाद के क़िले से निकल-

कर बिजनौर पहुँची, जो वहाँ से दो मील था। उसने वहाँ की बाग़ी फ़ौज को मार भगाया, और मुर्ग़ी-अंडे, भेड़-बकरी तथा दूसरा खाने का सामान लेकर लौट आई। वहाँ के निवासी भागकर बड़ी मुश्किल से अमीनाबाद आए।

एक दिन गोरे फिर क़िले से निकले, आठ कोस चलकर बैसवाड़े में पहुँचे, और वहाँ से अन्न वग़ैराह ख़रीद लाए। वे वहाँ से ज़मींदार और आमिल को भी पकड़ लाए।

आस-पास के बनिए भी छिपकर रसद तथा दूसरा सामान आलमबाग़ पहुँचाते रहते थे। एक रुपए का छ सेर आटा देते थे।

एक दिन कुछ गोरे गाड़ियों पर बैठकर बनी के टूटे पुल में चह बाँध उतरकर कानपुर चले गए।

विद्रोहियों के तीसरे रिसाले का पड़ाव मीर ख़ुदाबख़्श की करबला में था। एक दिन इसके कुछ सवार बनी गए। वहाँ के थानेदार और बरक़ंदाज़ों को मार डाला तथा खाने-पीने का जो सामान था, लूट लिया। तारबर्क़ी जगह-जगह तोड़ डाली। एक अँगरेज़ कुछ सवारों के साथ कानपुर की ओर से सड़क पर आ रहा था। बाग़ी सवारों को देख उसके साथ के सवार भाग गए। साहब को उन लोगों ने मार डाला, और उसका सिर काटकर ले गए।

इधर विद्रोही लखनऊ में इसी प्रकार लड़ाई का खेल कर रहे थे, उधर कानपुर में प्रधान सेनापति लखनऊ पर चढ़ाई करने के लिये बहुत बड़ी तैयारी करने में लगे हुए थे।

लखनऊ का अंतिम युद्ध और विद्रोहियों का पराभव

अब प्रधान सेनापति सर कालिन ने लखनऊ को विद्रोहियों के हाथ से छीन लेने की व्यवस्था की। इसके लिये वह कानपुर आकर उपयुक्त तैयारी करने लगे। कानपुर और लखनऊ के बीच की सड़क सुरक्षित रखने के लिये उन्होंने सर होप ग्रांट को पहले से भेज दिया। ८ फ़रवरी, १८५८ को उन्नाव पहुँचकर उन्होंने वहाँ ठहरी हुई अँगरेज़ी सेना का नेतृत्व ग्रहण किया। वहाँ से उन्होंने कुछ फ़ौज तो नवाबगंज भेज दी, और ख़ुद प्रधान सेनापति के आज्ञानुसार १५ को फ़तेहपुर-चौरासी दौड़ लेकर गए। ऐसा समझा गया था कि नानाराव वहाँ ठहरे हुए हैं। दो दिन चलने पर वह वहाँ पहुँचे, पर नानाराव भाग गए थे। कुछ विद्रोही दो तोपों के साथ भाग रहे थे। उनकी तोपें छीनकर बेकार कर दी गईं। वहाँ का क़िला गिराकर और फूँककर सर होप ग्रांट बाँगरमऊ पहुँचे। यहाँ अँगरेज़ी फ़ौज के क़रीब सौ गोरों ने निवासियों को लूटना शुरू किया, जिसकी ख़बर मिलने पर रोक-थाम की गई। २१ को वह सुलतानगंज पहुँचे। यहाँ उन्हें फ़ोरमैन-

नामक एक यूरेशियन मिला, जो मल्लावाँ की कचहरी में क्लर्क था, और जिसकी रक्षा कान्हसिंह नाम के एक जमींदार ने की थी।

२३ फरवरी को वह मियाँगंज पहुँचे। इसके चारो ओर रक्षा की दीवार थी। विद्रोहियों ने यहाँ अँगरेजी सेना का सामना किया। एक घंटे की गोला-बारी के बाद दीवार तोड़कर अँगरेजी सेना क़सबे में घुस गई। विद्रोही यह बात जान भी न सके, और वे बुरी तरह मारे गए। जो फाटक से भागकर बाहर निकले, वे बाहर मार गिराए गए। यहाँ पाँच सौ विद्रोही मारे गए, और चार सौ क़ैद हो गए। यह मालूम होने पर कि वे विद्रोही नहीं हैं, सारे क़ैदी छोड़ दिए गए।

२५ को वह मोहान गए। २६ को पुल से सई पार कर महराजगंज और नवलगंज के बीच में पड़ाव डाला। यहाँ नवाब मौसूमुद्दौला—भूतपूर्व बादशाह के बहनोई—पड़ोस के एक जमींदार के यहाँ छिपे हुए थे। उनका पत्र पाकर सर होप ग्रांट ने आदमी भेजकर उन्हें बुलाया, और रक्षकों के साथ कानपुर भेज दिया।

पहली मार्च को प्रधान सेनापति का पत्र सर होप ग्रांट को मिला कि बंथरा जाओ। परंतु इस पत्र के मिलने में देर हुई, अतएव वह वहाँ ठीक समय पर न पहुँच सके। किंतु उन्हें जो काम सौंपा गया था, उसे पूरा कर दिया। उनकी इस दौड़ से लखनऊ जाने का मार्ग निष्कंटक हो गया।

उधर सर कालिन ने अपने दल-बल के साथ सर होप से पहले आकर बंथरा में पड़ाव डाल दिया। उन्होंने २ मार्च, १८५८ से आक्रमण की योजना प्रारंभ कर दी। उन्हें यह ज्ञात ही था कि नवाब की सेना ने उन्हीं मार्गों का अवरोध करने के लिये अपनी मोर्चेबंदियाँ की हैं, जिनसे होकर दो बार अँगरेज़ी सेना रेज़ीडेंसी गई थी। सर कालिन ने उनकी इस भूल से लाभ उठाने के लिये एक तीसरे मार्ग से लखनऊ पर आक्रमण करने की तैयारी की। अपनी सारी सेना लेकर वह २ मार्च को दिलकुशा में जम गए। दिलकुशा के बाग़ पर उस दिन अधिकार न हो सकने के कारण अँगरेज़ी सेना को रात मैदान में ही बितानी पड़ी।

३ मार्च को सवेरे उन्होंने ४२वीं और ९३वीं हाइलेंडर्स को बिबियापुर में गोमती के समीप और मार्टीनेयर कॉलेज के सामने मोर्चा लगाने को भेज दिया। ४ मार्च को सवेरे गोमती पर, बिबियापुर के सामने, पीपों का पुल बनना शुरू हुआ, और ५ मार्च को सवेरा होते-होते एक पैंटून-ब्रिज बनकर तैयार हो गया, और एक मज़बूत पिकेट भी उसकी रक्षा के लिये उस पार भेज दिया गया। इसी दिन गोरखों की छ रेजीमेंटें भी लखनऊ आ गईं। ये अभी तक जौनपुर और आज़मगढ़ के विद्रोहियों का दमन कर रही थीं। कुल सैन्य-संख्या छ हज़ार थी, जिसमें तीन हज़ार गोरखे थे, शेष तीन हज़ार ब्रिगेडियर फ्रैंक्स के नेतृत्व में थे।

५ मार्च को विद्रोहियों ने अनुमान किया कि अँगरेज़ लोग गुपचुप कोई महत्त्व की काररवाई कर रहे हैं। उनकी एक सेना बिबियापुर से एक हज़ार गज़ की दूरी तक आई, और अपनी गोला-बारी शुरू की। उस गोला-बारी को रोकने के लिये अँगरेज़ों ने भी तोपें लाकर लगा दीं। साथ ही दूसरे पुल के बनाने का काम जारी रहा। विद्रोही सेना की गोला-बारी पुल बनाने के कार्य में कुछ भी बाधा न डाल सकी, और आधी रात तक दूसरा पुल भी बनकर तैयार हो गया।

अँगरेज़ी सेना जलालाबाद के क़िले से बिबियापुर तक फैली हुई थी। सेना संख्या में ३१,००० थी, और उसके पास १६४ तोपें थीं। उधर विद्रोहियों की सैन्य-संख्या १,२०,००० थी, और उसके पास १३० तोपें थीं।

शाहजी चक्करवाली कोठी में ठहरे थे। वह भी निकले, और कुकरायल पर अपना मोर्चा लगाया। उन्होंने फ़ौज से कहा कि नवाब अँगरेज़ों से मिला हुआ है, इससे भाग गया है। अब हम कल धावा करेंगे। तुममें से जो जवान मेरा साथ देना चाहते हैं, उनमें से तगड़े-तगड़े जवान रह जायँ, बाक़ी चले जायँ। इस प्रकार उन्होंने चुने हुए जवानों की दो पल्टनें तैयार कीं, और उन्हें अपनी कोठी के पास ठहराया। जब इसकी ख़बर दरबार में पहुँची, अहलकारों में सलाह हुई। कहा गया कि वह इस फ़ौज से

गोरों को हराकर अधिक शक्तिशाली हो जायगा, जो राज्य के लिये जोखिम की बात होगी। फलतः उस फ़ौज के पास चोब-दार भेजा गया। उसने जाकर कहा कि तुम लोग बिरजिसक़द्र के नौकर हो, तो चलो, तुम्हें मम्मूख़ाँ ने बुलाया है। यह सुनकर वे सब-के-सब चले गए। क़ैसरबाग़ के आस-पास उनका पहरा लगा दिया गया।

यह हाल देखकर शाहजी को बड़ा दुःख हुआ। जो सिपाही रह गए थे, उन्हें कोठी के पहरे पर लगा दिया।

छ मार्च को प्रधान सेनापति की आज्ञा से सर जेम्स आउटराम ने अपने सैन्यदल के साथ पुल से गोमती पार की। सबेरा होने के पहले ही उनकी सेना गोमती-पार पहुँच गई। उस पार दो मील सीधे जाने पर वह सेना लखनऊ की ओर घूम पड़ी। कुछ दूर आने पर उसे पिकेट का एक सवार-दल एक गाँव के पास दिखाई दिया। अँगरेज़ी तोपों की बाढ़ छूटते तथा अँगरेज़ घुड़सवारों को बढ़ते देखकर वह मैदान छोड़कर भागा। ज़मीन ऊबड़-खाबड़ होने के कारण अँगरेज़ी सेना के सवार उसका पीछा न कर सके, और जब बढ़ते-बढ़ते विद्रोहियों की पैदल सेना के मोर्चों तक पहुँच गए, तब वे बुरी तरह मार खाकर लौटे। फलतः अँगरेज़ी सेना ने चिनहट पहुँचकर अपना पड़ाव लखनऊ से चार मील की दूरी पर डाल दिया। उसने उजरियाँव का मोर्चा भी विद्रोहियों से छीन लिया। यहाँ

बख़्तख़ाँ ने अपना मोर्चा लगाया था, पर वह अँगरेज़ी सेना के सामने ठहर नहीं सका।

७ मार्च को सूर्य निकलते ही लड़ाई शुरू हो गई। शरफ़ुद्दौला ने गोमती-पार सर जेम्स आउटराम की सेना पर धावा किया। उनके साथ १२ हज़ार फ़ौज और १२ तोपें थीं। कुकरायल के पास उनका अँगरेज़ी सेना से सामना हुआ। एक घंटे तक घमासान युद्ध होता रहा। अंत में एक बम का गोला उनके हाथी के ऊपर से निकलकर उनके साथ के एक रिसालदार के जा लगा, जिससे वह तत्काल मर गया। यह देखकर नवाब साहब शहर को भागे। उनके भागते ही उनके साथ की सेना भी भाग खड़ी हुई। अब अँगरेज़ों के लिये मैदान साफ़ हो गया। उन्होंने और आगे आकर अपने पिकेट खड़े कर दिए।

८ मार्च को पहर रात रहे फिर दोनो ओर से लड़ाई शुरू हुई। लोहे के पुल पर जाफ़री और नजीबी पल्टनों का मोर्चा था। ये खूब लड़े, और गोरों को पुल से इधर न आने दिया। तब अँगरेजी फ़ौज मूसाबाग़ की ओर गई, और छीलेगाँव के पास नदी पार करने लगी। नाले में एक ताल्लुक़ेदार के आदमी छिपे थे। बाहर आकर उन्होंने एक बाढ़ दागी, दूसरी ओर से हशमतअली के आदमियों ने भी बाढ़ दागी। गोरे वहाँ से भागकर पक्के पुल पर आए। उन्हें देखकर तिलंगे भागे। एक तिलंगा तोप पर रह गया था। उसने बत्ती दे दी। गोला

अँगरेज़ी पट्टी में जा गिरा, जिससे वहाँ आग लग गई। गोरे पीछे हटकर बाँसमंडी के घरों में जा घुसे। उन्हें लूटा, और जो मिला, उसे गोली मार दी। गोरों के डर से रिआया कछार में जा छिपी। गोरों ने उन लोगों को पकड़कर अपने आगे खड़ा किया। जब इधर से तोप चली, वे बेचारे उड़ गए। अब गोरे शाहजी के बाग़, करबला-ए-मरियम मकानी जिआलाल के बाग़ में चले गए। कुछ सिपाही निकलकर लड़े, और मारे गए। गोरों ने घर लूट लिया। नदी-किनारे धोबी कपड़े धो रहे थे। जब गोरे गऊघाट से लौटे, २७ को गोली मार दी, और उनके बैलों को मारकर उठा ले गए।

नदी के उस पार एक गोरा पेड़ के नीचे दूरबीन लगाए पुराने दौलतख़ाने का शीशमहल देख रहा था। इस पार हज़ारों तमाशबीन खड़े थे, और एक रिसाला भी तैयार खड़ा था। इसमें से एक सवार ने निकलकर अपने घोड़े की ज़ेरबंद काट दी, और घोड़े को छोड़ दिया। बात-की-बात में वह उस गोरे पर जा टूटा। गोरे ने अपनी बंदूक़ दाग़ी, पर उसने कावा देकर उसके दोनो वार ख़ाली जाने दिए। फिर उसने अपने तमंचे से गोरे को मार दिया। इतने में कई अँगरेज़ सवार वहाँ आए। उन्हें देखकर वह सवार अपने रिसाले में भाग आया। उसकी बड़ी वाहवाही हुई। अँगरेज़ सवारों ने भी उस पार से चिल्लाकर उसकी प्रशंसा की।

विद्रोही यह नहीं जानते थे कि अँगरेज़ी सेना गोमती पार

करके उत्तर से शहर पर आक्रमण करेगी। अतएव शहर की उस दिशा में उन्होंने वैसी मोर्चेबंदी नहीं की थी। और, जब अँगरेज़ी सेना ने गोमती-पार जाकर, लोहे के पुल के पास तोपें लगाकर गोला-बारी शुरू की, तब विद्रोहियों के मोर्चों की पहली पाँत उसकी मार में आ गई। फलतः उन्हें अपना वह मोर्चा छोड़कर हट जाना पड़ा। उनकी इस गति-विधि का अंदाज़ लगाकर सर जेम्स आउटराम ऐसी जगह की खोज करने लगे, जहाँ तोपें लगाकर वह बाग़ियों के शहर के मोर्चों पर गोला-बारी कर सकें। ८ मार्च की रात को उनके पास २२ तोपें और पहुँच गईं। ९ मार्च का सवेरा होते ही उन्होंने ज़ोर-शोर के साथ गोला-बारी शुरू कर दी, और दोपहर के पहले ही गोमती-किनारे की चक्करकोठी पर अधिकार कर लिया। और, अँगरेज़ी सेना का झंडा फहरा दिया गया, ताकि सर कालिन जान जायँ कि उस पर आउटराम ने अधिकार कर लिया है। इसके बाद अँगरेज़ी सेना ने बादशाहबाग़ पर गोला-बारी शुरू की। उधर उसने अपनी तोपों के दो जगह मोर्चे लगा दिए। एक मोर्चे से नगर के विद्रोहियों के मोर्चों पर गोला-बारी करने के लिये और दूसरे से विद्रोहियों की गोला-बारी रोकने तथा उनके मोर्चों की दूसरी पंक्ति तोड़ने के लिये। परंतु गोमती-पार की इस तैयारी को देखकर विद्रोही अपने मोर्चों की पहली पंक्ति ख़ाली करके पहले ही चले गए थे। अब गोरों ने भरौली, अली-गंज, चाँदगंज-नामक गाँवों तथा बादशाहबाग़ पर अधिकार

किया। बाग़ में बहादुरअली मख़दूमबख़्श कप्तान का पड़ाव था। वह और उनकी फ़ौज अपना सारा सामान छोड़कर भाग निकली। गोरों ने उसे लूट लिया, और बाग़ में आकर अपनी तोपें लगाईं। इस दिन के युद्ध में ८०० सिपाही मारे गए। घायलों की गिनती न थी। मम्मूख़ाँ घबराए हुए कुछ वालंटियरों के साथ धुस पर आए। देखा, गोरों का सामान चक्करवाली कोठी से बादशाहबाग़ में चला आ रहा है। उन्होंने सवारों को बुलाया। बरेली के हमीदुल्लाख़ाँ को लेकर उनसे धावा करने को कहा। अन्य लोगों को भी उनके साथ जाने को कहा। शेख़ एहसानुल्लाबेग जाने को तैयार हुए। १२वें रिसाले के सवार हमीदुल्लाख़ाँ के साथ जाने को तैयार हुए। परंतु वह ख़ुद न बढ़ सके। हाँ, वे दोनो बढ़ते चले गए, और कई गोरों को मारकर अपनी फ़ौज में लौट आए। दोनो की बड़ी प्रशंसा हुई। मम्मूख़ा ने उन्हें दुशाले-रूमाल दिए।

इधर गोमती के इस पार, पूर्व-निश्चय के अनुसार, ६ मार्च को तड़के ही, प्रधान सेनापति सर कालिन ने मार्टीनेर पर गोला-बारी शुरू कर दी। मार्टीनेर के विद्रोहियों ने भी अपने मोर्चे से डटकर मार की। यहाँ मम्मूख़ाँ के भाई यूसुफ़ख़ाँ कुमक लेकर ख़ुद आए। शरफ़ुद्दौला के हुक्म से ग़ुलामरज़ा ने सैनिकों को खाने-पीने का सामान पहुँचाया। अँगरेज़ी सेना की मदद में गोरखों ने इस मोर्चे पर जमकर युद्ध किया। अंत में अँगरेज़ों ने मार्टीनेर पर दोपहर बाद तीन बजे

के लगभग अधिकार कर लिया। मार्टीनेर पर अधिकार कर लेने के बाद सर कालिन को मालूम हो गया कि विद्रोही अपने मोर्चों की पहली पंक्ति छोड़कर चले गए हैं। तो भी उन्होंने यही आदेश दिया कि ६ की रात को अँगरेजी सेना उन मोर्चों पर अधिकार न करे। परंतु ४थी पंजाबी सेना ने अपने अफ़सरों के आदेश पर उसके एक भाग पर अधिकार कर ही लिया। १० को विद्रोहियों के मोर्चों की पहली पंक्ति पर अधिकार कर अँगरेज़ी सेना ने बैंक्स हाउस को विद्रोहियों से दोपहर तक ख़ाली करा लिया। अब अँगरेज़ी सेना को बेगमकोठी पर क़ब्ज़ा करना था। १० को रात-भर विद्रोही गोलियों की वर्षा करते रहे। उधर गोमती पार आउटराम का विद्रोहियों से संघर्ष होता रहा। १० को उन्होंने अँगरेज़ी पिकेट पर आक्रमण किया; परंतु वे मार भगाए गए। तो भी उनके छोटे-छोटे दल दिन में घुड़सवार-सेना से उलझे रहे। आउटराम के दाहनी ओर की तोपों के मोर्चों से हज़रत-गंज के पास तथा क़ैसरबाग़ में गोले बरसाए गए। १० की संध्या तथा रात को आउटराम ने तोपों के और मोर्चे खड़े किए, ताकि विद्रोहियों की दूसरी पंक्ति के भीतर की इमारतों पर गोला-बारी की जा सके।

११ को सवेरा होते ही बेगमकोठी पर गोला-बारी शुरू हो गई, और उसकी दीवार में एक जगह तोड़ कर दिया गया। इसी को लक्ष्य कर तोपें चलती रहीं। उधर अँगरेज़ी

सेना के एक भाग ने सिकंदराबाद, क़दमरसूल मसजिद और शाहनजफ़ पर अधिकार कर लिया। इस ओर अँगरेज़ी सेना विद्रोहियों के मोर्चों की दूसरी पंक्ति के दो सौ गज़ की दूरी तक पहुँच गई। उनकी यह पंक्ति मोतीमहल, पुराना मेसहाउस और ताराकोठी आदि के सामने स्थित थी।

आउटराम ने भी सवेरे लोहे के पुल तथा पत्थर के पुल के विद्रोहियों के मोर्चों पर आक्रमण किया। लोहे के पुल से पत्थर के पुल के मार्ग में हशमतअली की छावनी पर आकस्मिक आक्रमण किया गया। बहुत-से विद्रोही मारे गए, और उनकी दो तोपें छीन ली गईं। यह देखकर कि पत्थर के पुल का शिरोभाग विद्रोहियों की मार में है, आउटराम सुरक्षित स्थान को लौट गए। उनके बाएँ के सेना-दल ने लोहे के पुल पर आक्रमण किया। उसने यद्यपि नदी-किनारे के घरों पर तथा पुल के शिरोभाग पर अधिकार कर लिया, तथापि उसके बहुत-से सैनिक मारे गए।

सर आउटराम दोनो पुलों के शिरोभागों पर १५ तक अधिकार जमाए रहे, और उन मोर्चों पर, जिन पर सर कालिन उस ओर से आक्रमण कर रहे थे, बराबर गोला-बारी करते रहे। साथ ही क़ैसरबाग़ और रेज़ीडेंसी पर भी उनके गोले बरसते रहे।

अब इस पार की अँगरेज़ी सेना ने बेगमकोठी को अपने आक्रमण का लक्ष्य बनाया। यह कोठी कई इमारतों का समूह

थी। इसकी इमारतें सहनों और उद्यानों द्वारा एक दूसरी से पृथक्-पृथक् थीं। इन्हीं में से एक में बेगम साहबा अपने नौकर-चाकरों के साथ सुरक्षित रहती थीं। इस कोठी की बाहरी दीवार में मार की जगहें थीं, जहाँ से सिपाही लोग सुरक्षित रूप से आक्रमणकारियों को गोलियों से मार सकते थे। इस कोठी के एक ओर लंबी खाईं थी, जो १० फ़ीट गहरी और १८ फ़ीट चौड़ी थी। इस खाईं की दूसरी ओर से अँगरेज़ी सेना ने १०वीं को सारे दिन और ११वीं को ४ बजे संध्या-समय तक गोले बरसाए। परंतु बेगम साहबा अपनी कोठी में बराबर मौजूद रहीं। उनकी कोठी उन इमारतों के विशाल अहाते के बीच में थी। और, उसका एक भी कोना न बचा होगा, जहाँ अँगरेज़ी तोपों के गोले जाकर न गिरे हों। लगभग ३½ बजे बाहरी दीवार में दो जगह तोड़ हो गए, जिनकी मरम्मत विद्रोही न कर सकें। ठीक चार बजे अँगरेज़ी सेना के दो दलों ने उन तोड़ों को लक्ष्य में रखकर कोठी पर धावा बोल दिया। दो ओर से अँगरेज़ी सेना खाईं पार कर अपने-अपने तोड़ पर जा पहुँची, जो अरक्षित थे। विद्रोहियों ने आक्रमणकारियों का सामना नहीं किया। विद्रोहियों की सेना भाग खड़ी हुई। पर जो न भाग सके, उन्होंने इमारतों की आड़ से अँगरेज़ी सेना से डटकर युद्ध किया, और सब-के-सब मारे गए। अँगरेज़ी सेना के कोठी में घुस आने पर बेगम साहबा भी भगीं, और उनके

महल की क़रीब ८० दासियाँ क़ैद हो गई। कोठी में ५ हज़ार के लगभग विद्रोही सेना थी, जिसके ७०० आदमी मारे गए, बाक़ी भाग निकले। अँगरेज़ी सेना के २ अफ़सर, १३ नानकमीशंड अफ़सर और सैनिक मारे गए, तथा २ अफ़सर और ४५ नानकमीशंड अफ़सर और सैनिक घायल हुए। क़रीब छ बजे तक सारी कोठी पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया। बेगमकोठी में विद्रोही सेना के जो सैनिक नहीं भाग सके थे, और कमरों छिपकर जान बचानी चाही थी, वे सब बारूद से उड़ा दिए गए। इस प्रकार वहाँ विद्रोहियों का बड़ा संहार हुआ।

इधर यह कांड हो रहा था, उधर दिलकुशा में सर कालिन राना जंगबहादुर का दरबार में आदर-सत्कार कर रहे थे। वह १५ हज़ार सेना के साथ अँगरेज़ों की मदद करने को उसी दिन लखनऊ पहुँचे थे, और उनका स्वागत करने के लिये सर कालिन ने छावनी में दरबार किया था। जब दरबार हो रहा था, सर कालिन को सूचना दी गई कि बेगमकोठी पर अँगरेज़ी सेना ने अधिकार कर लिया है।

बेगमकोठी पर अधिकार हो जाने के बाद अँगरेज़ी सेना ने विद्रोहियों के मोर्चों की दूसरी पंक्ति के भीतर प्रवेश किया। १२वीं को १५,००० नेपाली सेना, अपनी २२ तोपों के साथ, बैंकूस हाउस के बाएँ, नहर के सामने, आ डटी। १३वीं को वह नहर पार कर आगे बढ़ आई। संध्या तक

विद्रोहियों के मोर्चों के बीच में पड़नेवाली सभी इमारतें तोपों की मार से ढहा दी गईं।

१४वीं को सवेरे शरफ़ुद्दौला बेगम साहबा के पास आए, और उन्हें क़ैसरबाग़ छोड़ देने की सलाह दी, और ख़ुद तामजाम पर सवार होकर सीधे अपने घर चले गए। मीर वाजिदअली को भी अँगरेज़ी फ़ौज के आने की बात पहले से मालूम थी। उन्होंने भी आकर बेगम साहबा से उस बात का संकेत किया; और वह भी चुपचाप अपने घर चले गए। अब क़ैसरबाग़ के सब लोग भाग निकलने के लिये उसके पश्चिमी फाटक पर एकत्र हुए। उसमें ताले पड़े हुए थे। तिलंगों ने गोली मारकर उन्हें तोड़ डाला। फाटक खुलते ही बेगम साहबा अपने लवाजमे के साथ बाहर निकलीं। बेगमकोठी पर अधिकार हो जाने के बाद ही उसके और क़ैसरबाग़ के बीच के छोटे इमामबाड़े पर अँगरेज़ों की तोपें चलने लगी थीं। तोपों की मार से इसकी दीवार एक जगह टूट गई। अतएव १४वीं को नौ बजे सवेरे इस पर धावा किया गया। अँगरेज़ी सेना के पहुँचते ही विद्रोही भाग खड़े हुए, और इमामबाड़े पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया।

भागते हुए विद्रोहियों का पीछा किया गया, जिससे अँगरेज़ी सेना उनके मोर्चों की तीसरी पंक्ति के भीतर पहुँच गई, और शीघ्र ही उस पंक्ति की कुंजी—क़ैसरबाग़—पर अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया।

अँगरेज़ी सेना क़ैसरबाग़ पहुँची। फाटक तोड़कर बाग़ में घुस गई, और चाँदी की बारादरी में अपनी जीत का झंडा गाड़ दिया। अफ़सर लोग कुर्सियाँ डालकर बारादरी में बैठे, और लूट-फूँक शुरू हो गई। अगर गोरे उसी समय चौलक्खी के पास फ़रहतअफ़ज़ा के मकान में आ जाते, तो बेगम साहबा, बिरजिसक़द्र तथा अन्य बेगमों को भी क़ैद कर लेते।

संयोग-वश महमूदाबाद के ख़ाँ अलीख़ाँ कई हज़ार फ़ौज लेकर बाग़ में आ पहुँचे। किसी जासूस के चकमे में आकर वह बूंदअलीशाह के नाके पर ठहर गए थे, इससे देर हो गई। तो भी बाग़ में गोरों से जमकर लड़े। गोरे सिमिटकर बारादरी में जा घुसे। इसी बीच जंगबहादुर की फ़ौज आ गई, और उसने एक बाढ़ दाग़ी। सैकड़ों बाग़ी मारे गए। जो बचे, भाग खड़े हुए। ख़ाँ भी घायल हो जाने से भाग निकले।

रात होते-होते क़ैसरबाग़ के सिवा मेसहाउस, ताराकोठी, मोतीमहल और छतर-मंज़िल पर भी गोरी सेना ने क़ब्ज़ा कर लिया। सभी जगहों से विद्रोही भाग खड़े हुए। उन्होंने कहीं भी डटकर अँगरेज़ी सेना के आक्रमणकारी दल का सामना नहीं किया। उधर बेगमें अपनी नौकरानियों के साथ महलों के कोठों से होती हुई पैदल ही घसियारीमंडी के फाटक से बाहर आईं। औरतों की इस भीड़ के पीछे एक सैयद की गोद में बिरजिसक़द्र थे। वह उसके कंधे से चिपटे हुए थे। जिसने इस दृश्य को देखा, रो पड़ा। बेगमें गलियों में गिरती-पड़ती शाह पीर जलील के

टीले से होकर मौलवीगंज के पुल पर पहुँचीं। जवाहरअली ने अपनी पीनस और कहार वहाँ भेज दिए थे। बेगम साहबा और बिरजिसक़द्र उस पीनस पर सवार हो गए। अन्य बेगमें इधर-उधर होकर भागीं। इस समय तक कुछ सवार, तिलंगे तथा दूसरे नौकर भी आ गए थे। वे बेगम साहबा के साथ हो गए। यहियागंज, नख़ास, चौक होकर वे नाल-दरवाज़े में ग़ुलामरज़ाख़ाँ के मकान में जाकर उतरीं। इन्होंने अर्ज़ की कि यहाँ से गोरे बहुत नज़दीक हैं, उनके धावे का बहुत डर है। इस पर बेगम साहबा शरफ़ुद्दौला के घर गईं। यहाँ भी यही बात कही गई। इसके सिवा यह संदेह भी किया गया कि कहीं वही अँगरेज़ों को बुलाकर गिरफ़्तार न करा दें, और ख़ैरख़्वाह बन जायँ। फलतः वहाँ से वह हुसैनाबाद के महल में गईं। वहाँ से फिर ग़ुलामरज़ा के मकान में आईं। वह रात में शाहजी के पुराने मकान में रहीं। मम्मूख़ाँ हुसैनाबाद के महल में रहे, और चौक तक पहरे बिठा दिए।

कहते हैं, जब बेगम साहबा क़ैसरबाग़ में थीं, तब जनरल आउटराम ने मिर्ज़ा अलीरज़ा कोतवाल को शरफ़ुद्दौला के पास भेजकर कहलाया था कि लड़ाई बंद कर दी जाय, शुजाउद्दौला के समय जो अधिकार प्राप्त था, वही दिया जायगा, और वाजिदअली शाह तथा उनके साथ के लोग लखनऊ बुला दिए जायँगे। परंतु दरबार के अहलकारों ने समझा कि अँगरेज़ हार रहे हैं, इसलिये ऐसा कह रहे हैं; और उन्हें वाजिब

जवाब न दिया गया। इसके बाद जब वह ग़ुलामरज़ा के मकान में थीं, तब फिर यह संदेश आया कि वाजिदअली के समय जो अधिकार था, वह हम देंगे, लड़ाई बंद करो। जिस मकान में हो, उसी में ठहरी रहो। तीसरा संदेश शरफ़ुद्दौला के यहाँ आया कि २५ हज़ार रुपया महीना मिला करेगा, लड़ाई बंद करो। परंतु इसका भी कोई ठीक जवाब न दिया गया। इसके विपरीत १५वीं को सवेरे शहर में यह मुनादी फिरी कि सब गोरे मारे गए, थोड़े-से क़ैसरबाग़ में रह गए हैं, वे भी जल्द ही मार लिए जायँगे। रैयत को घबराना न चाहिए।

अब विद्रोहियों के अधिकार में रेज़ीडेंसी तथा शहर का मध्य-भाग रह गया। यहाँ से भी उन्हें मार भगाने के लिये सर कालिन १५वीं को गोमती के दाहने किनारे पर मोर्चेबंदी करते रहे। उधर गोमती के बाएँ से होप ग्रांट ११०० घुड़सवार सेना तथा २ तोपख़ानों के साथ सीतापुर जानेवाली सड़क पर और इधर आलमबाग़ से ब्रिगेडियर कैंपबेल १५०० घुड़सवार, एक पैदल ब्रिग्रेड और कुछ तोपों के साथ संडीला जानेवाली सड़क पर भगोड़े विद्रोहियों को पीछा करने को भेजे गए। परंतु विद्रोही उन सड़कों से नहीं भागे थे, अतएव उन्हें बेकार दौड़-धूप करनी पड़ी।

१६वीं को सिकंदरबाग़ के सामने गोमती पर पीपों का पुल बनाया गया, और जनरल आउटराम इस ओर

बुला लिए गए। उन्हें रेज़ीडेंसी पर आक्रमण करने का हुक्म दिया गया। उन्होंने अपने सेना-दल के साथ छतर-मंज़िल होकर रेज़ीडेंसी पर आक्रमण किया, और आध घंटे के भीतर उस पर अधिकार कर लिया। भागते हुए विद्रोहियों का पीछा किया गया, और मच्छी-भवन पर रेज़ीडेंसी से गोला-बारी शुरू की गई। इसके बाद जब उस पर आक्रमण किया गया, तब विद्रोही वहाँ से भी भाग निकले, और मच्छी-भवन के साथ ही बड़े इमामबाड़े पर भी अँगरेज़ी सेना का अधिकार हो गया।

जब अँगरेज़ी सेना इस प्रकार एक क़िलेबंदी के बाद दूसरी क़िलेबंदी पर अधिकार कर रही थी, तब उधर विद्रोहियों ने वालपोल के पिकेट पर पत्थर के पुल से भागते हुए आक्रमण कर दिया। वालपोल अपने ब्रिग्रेड के साथ गोमती के बाएँ किनारे पर लोहे और पत्थर के पुलों की निगरानी करने को नियुक्त किए गए थे। भागते हुए विद्रोहियों ने उन पर इसलिये आक्रमण किया था कि उनका ध्यान बँट जाय, और उनके २० हज़ार आदमी फ़ैज़ाबाद को सफलता-पूर्वक भाग निकलें। इसी १६वीं को विद्रोहियों ने आलमबाग़ पर भी आक्रमण किया, जहाँ एक हज़ार से भी कम आदमी थे। विद्रोही ६ बजे सबेरे से दोपहर बाद २ बजे तक आक्रमण करते रहे, अंत में अँगरेज़ी तोपों की मार से भाग खड़े हुए।

इधर सुबह को विद्रोही फ़ौज ने गङ्-घाट से धावा किया। खबर आई कि फ़ौज ने बादशाहबाग़ ले लिया, और चार तोपें छीन लीं, अब क़ैसरबाग़ भी लेनेवाले हैं। बड़ी प्रसन्नता हुई। परंतु इसके बाद खबर आई कि गोरों ने धावा किया, सारी फ़ौज भाग खड़ी हुई, सब मोर्चे छूट गए, बड़ा इमामबाड़ा भी ले लिया; जामे मस्जिद और इमामबाड़े से करबाब के पुल तक गोलियाँ बरसा रहे हैं। अब वे हुसेनाबाद भी आ जाना चाहते हैं।

अहमदुल्लाशाह ने तिलंगे और सवार जमा कर फ़ीरोज़शाह से कहा कि तुम पक्के पुल से धावा करो, और मैं ऐशबाग़ से करूँगा। वहाँ जंगबहादुर की पल्टन से खूब तलवार चली। जब और गोरखे मदद के लिये आ गए, शाहजी भागकर नख़ास चले आए। गोरे चौक, मछलीवाली बारादरी और अकबरी दरवाज़े तक फैल गए। फिर शाम से रात-भर बम-गोले बरसते रहे। परंतु उनसे केवल २-३ आदमी ही मरे, और जो आग जहाँ-तहाँ लगी, बुझा दी गई। अब नगर-निवासियों ने भागना शुरू किया। वे पश्चिम की ओर काकोरी, काँकराबाद, कसमंडी की ओर भाग निकले। वह दिन-रात प्रलय का जान पड़ा। शाहजी घबराए हुए हर नाके से फ़ौज लाते, पर किसी के पैर न ठहरते।

इधर १७वीं तक जंगबहादुर ने आलमबाग़ के सामने के चारबाग़ के पुल से रेज़ीडेंसी तक सब मोर्चों पर अधिकार

कर लिया। साथ ही विद्रोहियों की सारी तोपें भी छीन लीं। प्रधान सेनापति ने जो काम उन्हें सौंपे थे, उन सबको उन्होंने बड़ी खूबी के साथ कर डाला, और हानि भी नाम-मात्र की ही उठाई। १७वीं को ही आउटराम ने हुसैनी मसजिद और दौलतख़ाना पर बिना विरोध के अधिकार कर लिया। दोपहर बाद शरफ़ुद्दौला के मकान पर भी उन्होंने अधिकार कर लिया। १८वीं को शहर में इधर-उधर छिपे हुए विद्रोही ढूँढ़-ढूँढ़कर मारे गए।

१९वीं तक अधिकांश विद्रोही लखनऊ-नगर से खदेड़ भगाए गए। बेगम साहबा अपने पुत्र, अनेक विद्रोही नेताओं तथा ८-९ हज़ार सेना के साथ मूसाबाग़ में जा डटीं। यह बाग़ शहर से चार मील उत्तर-पश्चिम के कोने में, गोमती के दाहने किनारे पर है। १९वीं को सवेरे जनरल आउटराम ने मूसाबाग़ पर आक्रमण किया। उधर होप ग्रांट को बाएँ किनारे से मूसाबाग़ पर गोला-बारी करने और विद्रोहियों को नदी पार न करने देने का हुक्म हुआ। साथ ही ब्रिग्रेडियर कैंपबेल मूसाबाग़ की पश्चिम-ओर इस मतलब से नियुक्त किए गए कि जब आउटराम विद्रोहियों को मूसाबाग़ से मार भगावें, तब वे भागकर न जाने पावें। इसके सिवा जंगबहादुर से चारबाग़ से शहर में प्रवेश कर मूसाबाग़ पर आक्रमण करने को कहा गया। ऐसा प्रबंध किया गया कि मूसाबाग़ के विद्रोही भागकर बच न सकें। परंतु जब आउटराम ने मूसाबाग़ के

समीप पहुँचकर उस पर गोला-बारी शुरू की, तब विद्रोही अपने दल-बल के साथ निकल आए। वे उसी ओर से भाग निकले, जहाँ कैंपबेल अपने दल-बल और १५०० सवारों के साथ खड़े थे। परंतु उन्होंने विद्रोहियों को चुपचाप भाग जाने दिया। उन्हें इस तरह निकल भागते देख आउटराम ने अपने साथ के सवारों को उनका पीछा करने का हुक्म दिया। इन सवारों ने ४ मील तक उनका पीछा किया। उनके क़रीब १०० आदमी मार गिराए, और १२ में से छ तोपें छीन लीं। आगे नाला पड़ जाने से सवार उनका पीछा न कर सके। उधर दो सौ गज़ दूर एक गाँव की गढ़ी से उन पर गोला-बारी की गई, अतएव सवारों का दल लौट पड़ा। कैंपबेल के साथ काफ़ी सवार थे, परंतु उन्होंने विद्रोहियों को चुपचाप निकल जाने दिया। हाँ, दोपहर बाद पास के एक गाँव की गढ़ी पर उन्होंने आक्रमण किया, जो ख़ाली जान पड़ती थी। परंतु गढ़ी से ५० आदमियों ने निकलकर धावा कर दिया। ये सब-के-सब मारे गए। उधर कैंपबेल मूसाबाग़ पर गोले चलाकर लौट पड़े, और उस गाँव से एक मील के अंतर पर पड़ाव डाल दिया। दूसरे दिन कुल सेना लेकर काकोरी चले गए। वहाँ से दोपहर बाद फिर मूसाबाग़ आए, और उसके समीप पड़ाव डाल दिया, जो १६वीं की संध्या को ही अँगरेज़ों के अधिकार में आ गया था।

अँगरेज़ी फ़ौज ने २१ मार्च को आलमबाग़ से चलकर, गढ़ी कनौरा हो नाका हैदरगंज से शहर में घुसने का

प्रयत्न किया। जंगबहादुर की पल्टन ऐशबाग़ से चली। अहमदुल्लाशाह मुआतमुद्दौला की सराय से फ़ौज लेकर ऐशबाग़ जा पहुँचे। ख़ूब तलवार चली। १०० नैपाली मारे गए। शाहजी ने उन्हें बाग़ से हटा दिया। वे सब एकत्र होकर शहर के किनारे आए। उधर से अँगरेजी फ़ौज आ रही थी। शाहजी ने उससे भी भिड़कर युद्ध किया, और उसे नहर के इस पार उतरने न दिया। उनके पास ३-४ तोपें थीं। उनसे गोले बरसाए। परंतु जब गोरों ने धावा किया, सब सवार भागने लगे। १५०० सवार हैदरगंज-नौबस्ता होकर सआदतगंज में आ ठहरे। शाहजी भी हज़रत अब्बास की दरगाह में आए, और यहाँ अपना मोर्चा लगाया। दूसरा मोर्चा सआदतगंज में लगाया, और तोप आगे बढ़ाकर तिराहे पर लगाई। नेपालियों ने जदहे सबी के बाग़ में अपना पड़ाव डाला। पहर-भर तक ऐशबाग़ से हैदरगंज, नौबस्ता और सआदतगंज पर गोलियों की वर्षा होती रही। वहाँ के जो निवासी नहीं भाग सके थे, उनकी जान के लाले पड़ गए।

दूसरे दिन गोरे चौक, फ़िरंगीमहल, नख़ास, क़ाज़ियान, मंसूरनगर तक फैल गए, और क़ाज़ियान, दियानतदौला की करबला और दिल्ली-दरवाज़े में अपना मोर्चा लगाया। एक मोर्चा सड़क से घंटाबेग की गढ़ैया तक लगाया। उनका यह मोर्चा अब्बास की दरगाह के शाहजी के मोर्चे के सामने था। जब कोनिया साहब इस मोर्चे पर आए, तब शाहजी

ने हटकर सआदतगंज की लाल कोठी में अपना मोर्चा लगाया।

गोरे मकानों में घुसकर लूटने लगे। इसके दूसरे दिन दोपहर तक यही हाल रहा। अंत में घरों को लूटते हुए गोरे दरगाह पहुँच गए। उनके पहुँचते ही सब भाग खड़े हुए। शाहजी को उनके दो शिष्य ज़बर्दस्ती हाथ पकड़कर और बग़ल में हाथ डालकर पैदल ही महबूबगंज तक ले गए। वहाँ वह घोड़े पर चढ़े। कुछ तिलंगे और सवार साथ हुए। उनके ख़ास शिष्य हाथियों पर चढ़े। इस प्रकार शाहजी अपने साथियों के साथ मूसाबाग़ के नाके से लड़ते हुए निकले। अँगरेज़ी फ़ौज उनके पीछे थी। जब शाहजी कसमंडी का नाला पार कर गए, तब अँगरेज़ी फ़ौज लौट आई। नगरवासी, जो भाग निकले थे, शाहजी की और अँगरेज़ी फ़ौज की मार के बीच में पड़कर बुरी तरह मारे गए। उनमें से बहुत कम लोग भागकर बच सके।

इधर जब शहर में इस प्रकार लड़ाई होने लगी, तब नगर-निवासियों को भाग खड़े होने के सिवा और कोई उपाय न सूझा। जो नहीं भाग सके, शहर में रह गए, उनमें से बहुतों को गोरों ने मारा, स्त्रियों को बेइज़्ज़त किया तथा घरों को लूट लिया। गोरों का विचार था कि सभी लोग क़त्ल कर दिए जायँ, परंतु प्रधान सेनापति ने आज्ञा नहीं दी। तो भी वे अपनी मनमानी करने से विरत नहीं हुए। उनके

अत्याचारों के भय से कितनी ही स्त्रियाँ और लड़कियाँ कुओं में गिरकर मर गईं। निर्दोष नगर-निवासियों पर उस दिन जो बीती, उसके वर्णन करने की यहाँ ज़रूरत नहीं। विजयी सेना ऐसे अवसर पर जो भी अनाचार तथा अत्याचार करती है, गोरों ने वह सब किया, कुछ उठा नहीं रक्खा।

इस प्रकार जब शहर पर अँगरेजों का पूरा अधिकार हो गया, और उनका मुक़ाबला करनेवाला वहाँ कोई न रह गया, तब शहर में इस बात की मुनादी फिरी कि कंपनी बहादुर का फिर राज्य हो गया। इसके बाद १५ दिन तक बराबर शहर में लूट-मार जारी रही। केवल नाल-दरवाजा, जहाँ महाजन रहते थे, और सआदतगंज लुटने से बचा रहा। इनके सिवा शायद ही कोई और मोहल्ला रहा हो, जिसे गोरों, सिक्खों और नैपालियों ने न लूटा हो। कोनिया साहब की दया से अमीर लोग लूटे जाने से बच गए। हज़रत अब्बास की दरगाह में कई सौ पर्दानशीन औरतें जा छिपी थीं। गोरों ने इनके साथ बड़ा अत्याचार किया। बाद को कोनिया साहब ने प्रत्येक को एक-एक रुपया किराया देकर डोलियों पर बिठाकर भेज दिया। कई सौ धोबी कपड़े-लत्ते लेकर दरगाह में आ छिपे थे। उनके सारे कपड़े-लत्ते लूट लिए गए। दरगाह का सारा सामान लूट लिया गया। महाजनों ने सोने के अलम गोरों से रुपए तोले के हिसाब से खरीदे। दरगाह का खास अलम १३ सेर

वज़न में था। उसका भी पता न लगा। ग़ुलामरज़ाख़ाँ और मुफ़ताहुद्दौला उसके लिये हज़ारों रुपया देने को तैयार थे, पर किसी ने पता न दिया।

लूट की रोक-थाम करने के लिये अँगरेज़ अधिकारियों ने पहरा लगा दिया। जिनके पास लूट का माल मिलता, वे पकड़े जाने लगे। और, लुटेरों का लूटा हुआ माल उनसे लेकर प्राइज़ एजेंटों के पास रक्खा जाने लगा। परंतु इन लोगों ने उसमें से बहुत-सा माल हड़प लिया, जिससे स्वदेश लौटने पर आयर्लैंड, स्काटलैंड और इँगलैंड में अपनी रेहन रक्खी हुई जायदादें छुड़ाईं या अपनी रुचि के अनुसार शिकारगाह आदि बनवाने में ख़र्च किया। एक सैनिक ने लिखा है कि इस लूट के बाद दो वर्ष के भीतर एक सज्जन ने १,८०,००० पौंड ऋण चुकाकर अपनी रियासत छुड़ाई। तथापि १८५८ की ३१ मई के 'टाइम्स' के अनुसार प्राइज़ एजेंटों के पास अनुमानतः छ लाख पौंड से अधिक मूल्य का लूट का माल था, जो सप्ताह के भीतर १२$\frac{1}{2}$ लाख पौंड के मूल्य से ऊपर पहुँच गया था। इसमें से प्रत्येक सैनिक को, जिसने लखनऊ के उद्धार तथा उसके जीतने के युद्धों में भाग लिया था, १७-१८ रुपए का माल दिया गया। शेष माल क्या हुआ, इसका पता नहीं लगा।

विद्रोहियों के मार भगाए जाने पर लखनऊ में शांति की

स्थापना हुई। सारे शहर में मुनादी हुई कि लोग आकर अपने घरों में आबाद हों; और जो ९ एप्रिल तक अपने-अपने घरों में न आ जायँगे, उनके घर ज़ब्त कर लिए जायँगे। फिर उन लोगों के लिये, जो बहुत दूर भाग गए थे, या जिन्होंने बाग़ियों का साथ दिया था, एक महीने की मीयाद कर दी गई। इसके लिये विज्ञापन जारी हुए। इसी प्रकार ज़मींदारों और ताल्लुक़ेदारों को हाज़िर होने के लिये परवाने भेजे गए। इधर राना जंगबहादुर अपनी फ़ौज के साथ बिदा हुए। मांटगुमरी साहब चीफ़ कमिश्नर बनाए गए। मेजर कारनेगी साहब सिटी-मैजिस्ट्रेट और मीर क़ुरबानअली मुंशी के पद पर पूर्ववत् नियुक्त हुए। अहमदयारख़ाँ हुसैनाबाद के थानेदार, महमूदख़ाँ कोतवाल, मार्टीन साहब डिप्टी-कमिश्नर तथा दूसरे पदों पर अन्यान्य लोग नियुक्त किए गए।

रज़ाअलीख़ाँ बिरजिसक़दर के दरबार के प्रधान कारबारी होने के कारण ११ दिन तक तारावाली कोठी में क़ैद रहे। क़ाज़ियाना में गोरों ने उन्हें पकड़कर मार डालने का प्रयत्न किया, परंतु कारनेगी साहब की दुहाई देकर उन्होंने अपने प्राणों की रक्षा की। कई महीने बाद कंपनी की अमलदारी की जगह अँगरेज़ी सरकार की अमलदारी की घोषणा हुई। इसका नदी के किनारे फ़रहतबख़्श-महल में जलसा हुआ। ग़ुलामरज़ा ने अपने इमामबाड़े में मुल्की और जंगी अँगरेज़ अफ़सरों को बड़ी शानदार दावत दी, तथा उनके

प्रसन्नतार्थ ख़ूब नाच-रंग और धूमधाम की। इनके बाद शहर के रईस शाहजी ने अपने बाग़ में दावत दी। फिर राजा मानसिंह ने दावत दी। इनके जलसे में प्रधान सेनापति सर कालिन कैंपवेल, जो अब लॉर्ड क्लाइड हो गए थे, भी पधारे।

इस प्रकार लखनऊ पर अँगरेज़ों का पूरा अधिकार हो गया। इसके लिये उन्हें ४ मार्च से २२ मार्च तक युद्ध करना पड़ा। २३ मार्च को राना जंगवहादुर अपनी सेना के साथ लॉर्ड कैनिंग से भेंट करने इलाहाबाद चले गए।

लखनऊ के इस युद्ध के संबंध की एक बात का उल्लेख करना यहाँ आवश्यक है। वह है मीर वाजिदअली का दो अँगरेज़ स्त्रियों को बचाकर अँगरेज़ों का ख़ैरख़्वाह बन जाना। जब गोरे मार्टीन साहब की कोठी और मुहम्मदबाग़ के पास आ पहुँचे, तो दारोग़ा मीर वाजिदअली ने अपने क़ब्ज़े की अँगरेज़-स्त्रियों को मुहसिनुद्दौला के मकान में पहुँचा दिया। क़ैसरबाग़ से नादिरी फ़ौज के तिलंगे भागकर वहाँ पहुँचे। सिपाहियों ने कहा, यहाँ वाजिदअली शाह की बेगमें हैं, यहाँ हम तुम्हें पड़ाव नहीं डालने देंगे। एक सिपाही ने मीर वाजिदअली दारोग़ा को खबर दी। उन्होंने बीवियों को वहाँ से निकालकर नाल-दरवाज़े में, चौधरी जगन्नाथ के मकान में, भेज दिया। जब गोरों ने जाकर मीना-बाज़ार में गोलियाँ बरसानी शुरू कीं, तब उनकी गोलियाँ उस मकान में गिरने लगीं, जहाँ मेमें ठहरी थीं। तब वे

मंसूरनगर के उस मकान में पहुँचाई गईं, जहाँ नवाब खुर्द-महल आदि बेगमें ठहरी थीं। नवाब खुर्दमहल ने उन्हें एक सुरक्षित कमरे में ठहराया, और वह खुद खाना ले जाकर खिलाती थीं।

जब शाहजी ने हजरत अब्बास की दरगाह में आकर मोर्चा लगाया, तब फिर संकट उपस्थित हुआ, क्योंकि मंसूरनगर का वह मकान दरगाह के समीप था। यह देखकर मीर वाजिदअली से यह चिट्ठी लिखवाकर अँगरेजों की छावनी को भेजी गई कि हम मीर वाजिदअली के मकान में हैं, और यहाँ हमें बदमाश चारो ओर से घेरे हुए हैं। अँगरेजी फ़ौज आकर हमारा उद्धार करे। वाजिदअली ने एक आदमी को बीस रुपए देकर वह चिट्ठी भेजवाई। अकबरी दरवाजे के पास उस आदमी को दो नैपाली अफ़सर मिल गए। उसने वह चिट्ठी उन्हें दे दी। वे अपनी दो कंपनियाँ लेकर वहाँ गए, और अँगरेज-स्त्रियों को पीनस में चढ़ाकर २० मार्च, १८५८ को फ़ौज में ले आए। वे वहाँ नेपालियों की एक गारद रक्षा के लिये छोड़ आए। जब इसकी खबर बदमाशों को हुई, तब उन्होंने आकर घर घेर लिया। वाजिदअली ने फाटक में ताला लगा दिया, और गारद को कोठे पर चढ़ा दिया कि वे आक्रमणकारियों को गोली से मारें।

उधर मेमें जब नैपाली सेना में पहुँचीं, तब अपना हाल जनरल से कहा। तुरंत दो पल्टनें भेजी गईं। वे बेगमों को

सवार कराकर फ़ौज में लाए, और अलग ख़ीमे में आराम से ठहराया, तथा एक हज़ार रुपया दावत के लिये भेजा। मेमों ने दारोग़ा वाजिदअली को राना जंगबहादुर से मिलाया। इसके बाद प्रधान सेनापति लॉर्ड क्लाइड से भेंट कराई।

तीसरे दिन दारोग़ा से आउटराम साहब की भेंट हुई। उन्होंने बड़ी खातिर की, और एक लाख रुपया इनाम देने को कहा। दारोग़ा ने बेगमों की ख़ैरख़्वाही की बात कही, और यह निवेदन किया कि उन्हें जागीर आदि दी जाय। फिर आउटराम साहब ने उन्हें एक चिट्ठी दी, जिसमें लिखा कि कोई अफ़सर या सैनिक दारोग़ा के मकान पर न जाय, और न इनके संबंधियों को ही सतावे। इसके बाद बेगमों के लिये गोलागंज में ख़्वाजासराओं का मकान खाली करा दिया और वे वहाँ पहुँचा दी गईं, और उनकी रक्षा के लिये गोरों का पहरा बिठा दिया गया। बाद को जब कारनेगी साहब का ज़माना आया, तब यह जानते हुए भी कि ये लोग सरकार द्वारा संरक्षित हैं, गोरों की दौड़ पहुँची, और दारोग़ा तथा वहाँ के सब आदमियों को क़ैद कर बेगमों को लूट लिया। बाद को वे छोड़े गए, और बेगमों का माल भी बड़ी हुज्जत के बाद पहली । नवंबर को मिला। वाजिदअली को एक लाख का इनाम मिला। ज़मींदारी ख़रीदकर वह बड़े आदमी हो गए।

अवध के भीतरी भाग के विद्रोहियों का दमन

लखनऊ विद्रोहियों से ख़ाली हो गया, उस पर अँगरेज़ों का पूरा अधिकार क़ायम हो गया, परंतु विद्रोहियों की बहुत बड़ी संख्या लखनऊ से बचकर निकल गई। उन्होंने भिन्न-भिन्न भागों में जाकर अपने दलों का संगठन किया। स्वयं बेगम साहबा बिरजिसक़दर को लेकर सही-सलामत लखनऊ से चली गईं। वह १६ मार्च को ही मूसाबाग़ से भाग गई थीं। उस दिन शाम को बेगम साहबा और बिरजिसक़दर पीनस पर सवार हुए। चार तोड़े अशर्फ़ियाँ और कुछ जवाहर अपने साथ लिए। कहते हैं, क़ैसरबाग़ से निकलने के कई दिन पहले मम्मूख़ाँ के कहने से वह जवाहरख़ाने में गईं, और मुफ़ताहुद्दौला से कुंजियाँ लेकर वहाँ से सब संदूक़चे उठवा लाईं। वह सब सामान कहाँ गया, इसका फिर पता न लगा। अस्तु। मूसाबाग़ के नाके से बेगम साहबा की सवारी निकली। उनके आगे-पीछे औरतों का झुंड था। मम्मूख़ाँ घोड़े पर थे। मीर मेहँदी, अहमदहुसैन, हकीम हसनरज़ा, ये सब पैदल थे। कुछ सवार और तिलंगे भी साथ थे। सवेरे भरावन पहुँचे।

राजा मर्दनसिंह ने ठहरने को एक चौपाल बता दी। बेगम साहबा बहुत भूखी थीं। खाने को कहला भेजा। जवाब आया कि जब तैयार होगा, भेज दिया जायगा। राजा मर्दनसिंह ने साथ देने से इनकार किया, और अपमान-जनक व्यवहार किया। वहाँ से सवारी बारी होकर खैराबाद गई। वहाँ के नाज़िम राजा हरप्रसाद कायस्थ और मौलवी इमाहुदीन (उपनाम मौलवी मुहम्मद नाज़िम, बिसवाँ—वही, जो बाद को संडीले में लड़ता रहा, और मारा गया) ने बेगम साहबा के आने की खबर सुनी। तीन कोस आगे आकर स्वागत किया, और बड़ी धूमधाम से उन्हें ले जाकर मिर्ज़ा बंदोअली बेग के इमामबाड़े में ठहराया। राह में फ़क़ीरों को दो हज़ार रुपए बाँटे, और शहर में पहुँचने पर सलामी की तोपें दागीं। राजा हरप्रसाद नसीराबाद (रायबरेली) के निवासी थे। अंत में यह भी बेगम साहबा के साथ नैपाल गए, और वहीं मर गए।

वहाँ यह सलाह हुई कि बरेली चला जाय, पर अंत में यही निश्चय हुआ कि अभी अपने ही मुल्क में रहा जाय। अतएव बेगम साहबा वहाँ से महमूदाबाद गईं, और राजा नवाबअली की मेहमान हुईं। फिर मितौली के राजा की गढ़ी में गईं। वहाँ बौंड़ी के राजा हरदत्तसिंह का वकील आया। उसने कहा कि हम आपके साथ हैं, और मितौली का राजा अँगरेज़ों से मिला हुआ है। अतएव वहाँ से सवारी बौंड़ी गई। यहाँ अन्य बेगमें, नौकर-चाकर, अमीर-उमरा और फ़ौज भी आ गई।

इस प्रकार सबके आ जाने पर बौंड़ी दूसरा लखनऊ-सा जान पड़ने लगी। यही नहीं, बिना माँगे अनेक जमींदारों और ताल्लुक़ेदारों ने मालगुज़ारी भी भेजनी शुरू कर दी। यहाँ से शासन का काम भी शुरू हो गया, साथ ही ज़िलों में लड़ाई भी जारी रही। बरसात का मौसम होने से अँगरेज़ों के आक्रमण का डर भी नहीं था।

यहाँ जब चहलारी के राजा बलभद्रसिंह के घर पुत्र पैदा हुआ, तब उसकी ख़ुशी में तोप छोड़ी गई। तोप की आवाज़ सुनकर बाग़ी फ़ौज भागी। इस पर मम्मूख़ाँ ने रानी पर जुर्माना किया। जब लोगों ने बेगम साहबा को समझाया, तब उन्होंने रानी को ख़िलत और उनके पुत्र को कड़े वग़ैरह भेजे। इस प्रकार बौंड़ी में रहकर वह विद्रोह की चिनगारी बराबर जगाए रहीं। बौंड़ी, गोंडा और चहलारी आदि के राजे उनका साथ दिए थे।

उधर मौलवी अहमदशाह बारी में, राना बेनीमाधवसिंह बैसवाड़ा में, शेख़ फ़ज़लअलीख़ाँ सलोन में, मीर मेहँदीहसनख़ाँ सुलतानपुर आदि में विद्रोह का झंडा ऊँचा उठाए हुए थे। अतएव प्रधान सेनापति लार्ड क्लाइड ने अँगरेज़ी फ़ौजों को कई भागों में बाँट दिया, और इन विद्रोहियों का दमन करने के लिये इधर-उधर भेज दिया।

२२वीं मार्च, १८५८ की आधी रात को होप ग्रांट कुर्सी पर आक्रमण करने को भेजे गए। यह जगह लखनऊ से २५ मील

दूर, फ़ैज़ाबाद जानेवाली सड़क पर, है। सुना गया था कि यहाँ ४ हज़ार विद्रोही सेना एकत्र है। होप ग्रांट को मार्ग में ठहरकर तोपों की प्रतीक्षा करनी पड़ी, जो मार्ग भूल जाने से दूसरे दिन दोपहर तक पहुँचीं। तोपों के आ जाने पर उन्होंने कूच किया, और चार बजे तक कुर्सी के पास पहुँच गए। विद्रोहियों को अँगरेज़ी सेना के आने की ख़बर लग गई, और उन्होंने उस स्थान को ख़ाली कर दिया। वहाँ पहुँचने पर होप ग्रांट ने भागते हुए विद्रोहियों का पीछा किया, और शीघ्र ही उन्हें जा पकड़ा। विद्रोही खुले मैदान में जम गए। अँगरेज़ी घुड़सवार सेना ने उन पर तीन बार आक्रमण किया, पर वे अपने मोर्चों से नहीं हिले। पिछले आक्रमण में दो अँगरेज़ अफ़सर मारे गए। अंत में विद्रोही भाग निकले, और उनकी १४ तोपें अँगरेज़ों के हाथ लगीं। इसके बाद अँगरेज़ी सेना लौट गई। लखनऊ और उसके आस-पास यही अंतिम युद्ध हुआ।

११वीं एप्रिल को सर होप ग्रांट ३ हज़ार सेना के साथ बारी भेजे गए। १३वीं एप्रिल को विसवाँ के पास उनका शाहजी की सेना से सामना हुआ। मौलवी ने कुछ घुड़सवारों के साथ उनके अग्र दल पर आक्रमण किया, और उन्होंने उसे घेरकर उसके साथ की दो तोपें छीन ली होतीं, यदि उसी समय अँगरेज़ घुड़सवारों को आक्रमण करने को मुस्तैद न पाते। फलतः वह भाग गए, और सेना के पृष्ठ-भाग पर

आक्रमण करने को प्रवृत्त हुए। यह देखकर सवारों के दल ने शाहजी के दल पर आक्रमण कर उसे मार भगाया। इसके बाद विद्रोहियों के एक दूसरे दल ने सेना के माल-असबाब पर आक्रमण किया, परंतु गोरी सेना ने उस दल को भी गोलियों की मार से मार भगाया। अब विद्रोहियों ने भागकर पास के एक गाँव में अपना मोर्चा लगाया। इस गाँव के किनारे एक छोटी नदी थी। परंतु अँगरेजी सेना ने बढ़कर वहाँ से भी विद्रोहियों को मार भगाया। यहाँ से अँगरेजी सेना बसेरी, बरेसी, मनीराबाद, बेलहिर, घुरशूपुर होती हुई १९वीं एप्रिल को रामनगर पहुँची। बेगम साहबा यहाँ से पहले ही भग गई थीं। इसके बाद वह सेना नवाबगंज आ गई। इस परिदर्शन में कोई भी गोरी सेना के मुक़ाबिले में नहीं आया।

इधर दक्षिणी ज़िलों में विद्रोही अपना सिर उठाए हुए थे। यही नहीं, उन्होंने कानपुर जानेवाली सड़क पर आक्रमण करने का प्रयत्न किया। बनी के पास कई गाँव जला दिए। फलतः सर होप ग्रांट सेना के साथ उनका दमन करने को भेजे गए। २९वीं एप्रिल को बनी, ३०वीं को काँथा और पहली मई को पुरवा पहुँचे। उनकी सेना में ४,५०० आदमी थे। पुरवा से उन्होंने बैसों के पच्छिमगाँव के क़िले पर धावा किया, और उसे लूट लिया। वहाँ कोई सामने नहीं आया। वहाँ से अँगरेजी सेना डौंड़ियाखेरे को गई, जहाँ वह १० मई को पहुँच गई। डौंड़ियाखेरा ख़ाली मिला। फलतः सेना १२वीं मई को नगर

लौट गई। यहाँ सर होप ग्रांट को सूचना मिली कि विद्रोही सिमरी में एकत्र हुए हैं। अतएव अँगरेज़ी सेना ने दोपहर बाद सिमरी को कूच किया, और वहाँ चार बजे पहुँच गई। यहाँ एक नाले में विद्रोही मोर्चा लगाए थे। १,५०० पैदल, १,६०० सवार और २ तोपें थीं। अँगरेज़ी सेना ने पहुँचते ही मार शुरू कर दी। बिहार के ताल्लुक़दार शिवरतनसिंह और उनके भाई जगमोहनसिंह यहाँ मारे गए। उनके मरते ही विद्रोही भाग खड़े हुए। अँधेरा हो जाने से उनका पीछा न किया जा सका। रात में सेना ने वहाँ पड़ाव डाल दिया। दूसरे दिन अँगरेज़ी सेना नगर को लौट गई। वहाँ रात-भर ठहरी रही। वहाँ से पुरवा गई। वहाँ उसने दो दिन मुक़ाम किया। वहाँ से बनी और बनी से जलालाबाद गई। उसके बाद गोमती-पार जाकर पड़ाव डाला।

इस प्रकार होप ग्रांट ने विद्रोहियों का चारो ओर घूमकर दमन किया, ताल्लुक़ेदारों के क़िले ध्वंस किए, और उनकी तोपें उठा लाए।

७वीं एप्रिल को ब्रेग्रेडियर जनरल वालपोल के नेतृत्व में सेना का एक डिवीज़न रुहेलखंड के विद्रोहियों का दमन करने के लिये भेजा गया। इस डिवीज़न में चुनी हुई सेनाएँ थीं। ४२वीं, ७६वीं, ६३वीं, ४४वीं आदि पैदल, ६वीं और दूसरी सवार सेनाएँ तथा बंगाल का तोपख़ाना और कुछ अन्य तोपें एवं इंजीनियरों की एक टुकड़ी थी। १५वीं एप्रिल को

यह सेना रुइया या रुद्यामऊ पहुँची, जहाँ नरपतिसिंह का मिट्टी का छोटा-सा क़िला था, और जिसमें कुल ३५० आदमी थे। परंतु वालपोल को यह ख़बर मिली कि क़िले में १,५०० आदमी हैं। अतएव उन्होंने क़िले पर आक्रमण करने का विचार किया। यह जगह लखनऊ से ५१ मील पर है। क़िले के चारो ओर मिट्टी की दीवार थी, जिसमें बंदूक़ चलाने के लिये छेद बने हुए थे। इसके उत्तर और पूर्व-ओर चौड़ी और गहरी खाई थी, और इधर दोनो ओर घने जंगल से होकर क़िले को जाना होता था। क़िले के कोनों पर बुर्ज बने हुए थे, और पश्चिम तथा दक्षिण-ओर दो फाटक थे। क़िले के ये भाग वैसे रक्षित नहीं थे। दीवार के बाहर जो खाई थी, वह छिछले पानी से भरी हुई थी।

१५वीं को साढ़े चार बजे सेना रुइया की ओर चली। चार मील जाने के बाद सारा सामान रक्षक-दल की संरक्षा में एक जगह छोड़ दिया गया, और शेष सेना रुइया की ओर बढ़ी। छ मील किसी क़दर घने जंगल से होती हुई वह क़िले की मार के भीतर कोई ११ बजे उसके उत्तर और पूर्व की ओर पहुँच गई। वालपोल ने ४२वीं की दो कंपनियों को आक्रमण करने की आज्ञा दी, जो बढ़ती हुई खाई के किनारे पहुँच गई। इनकी मदद के लिये चौथी पंजाब रायफ़िल को भेजा। क़िले से भीषण गोली-वर्षा हो रही थी, जिससे अँगरेज़ी सेना के अनेक आदमी मारे गए। क़िले की मार से बचने के लिये

४२वीं के सैनिक खाई में कूद पड़े। परंतु वहाँ रक्षा का कोई आश्रय न मिला। उनके पास सीढ़ियाँ भी नहीं थीं, अतएव वे आगे भी नहीं बढ़ सके। इस प्रकार वे संकट में पड़ गए। यही नहीं, ४२वीं के २ अफ़सर और ७ आदमी मारे गए, तथा ३१ आदमी घायल हो गए, एवं चौथी का एक अफ़सर और ४६ आदमी मारे गए तथा घायल हो गए। दो बजे के लगभग दक्षिणी फाटक को ध्वस्त करने के लिये उस ओर तोपें भेजी गईं। तोपों का दगना शुरू ही हुआ था कि ब्रिग्रेडियर एड्रियन् होप को गोली लगी, और तत्काल मर गए। इस पर गोला-बारी बंद कर दी गई, और तोपें लौटा ली गईं, तथा सारी सेना को तैयार हो जाने का हुक्म हुआ। ४२वीं और चौथी भी वापस बुलाई गईं, और सेना को पीछे हटने का हुक्म हुआ। उधर क़िले से अँगरेज़ी सेना पर अग्नि-वर्षा की जा रही थी। एक मील हटकर अँगरेज़ी सेना ने अपना पड़ाव डाल दिया। परंतु रात में नरपतसिंह क़िला छोड़कर भाग गए, जिसे दूसरे दिन अँगरेज़ी सेना ने तोड़-फोड़ डाला। इसके बाद सेना रुहेलखंड की ओर रवाना हुई। रामगंगा के इस पार उसने सिरसा पर अधिकार कर अलीगंज में भागते हुए विद्रोहियों का तहस-नहस किया।

इधर बैसवाड़े में राना बेनीमाधवसिंह विद्रोह का झंडा अभी तक खड़ा किए हुए थे। यही नहीं, उनकी सैनिक गति-विधि के कारण कानपुर की सड़क सुरक्षित नहीं थी, और वह लखनऊ

पर चढ़ाई करने की भी घोषणा कर चुके थे। फलतः लखनऊ के चीफ़ कमिश्नर मिस्टर मॉटगुमरी ने सर होप ग्रांट को इसकी सूचना दी, और उसका प्रतिकार करने के लिये आग्रह किया।

सर होप ग्रांट को सेना लेकर सड़क की रक्षा के लिये जाना पड़ा। २५वीं मई को उन्होंने बनी में पड़ाव डाला। पैदल सेना और तोपख़ाने को यहाँ छोड़कर वह दूसरे दिन नवाबगंज गए। उनके साथ सवार और घोड़ों का तोपख़ाना था। यहाँ वह कपूरथला के राजा की सेना के आने की प्रतीक्षा करने लगे; क्योंकि उसे पुरवा में नियुक्त करने की बात पहले से तय थी। इधर चीफ़-कमिश्नर की चिट्ठी-पर-चिट्ठी आ रही थी कि राना बेनीमाधव ६५ हज़ार सेना के साथ लखनऊ पर चढ़ दौड़ना चाहता है, और बनी से आठ मील दूर जेसेंडा में ठहरा हुआ है। यह हाल जानकर सर होप ग्रांट बनी लौट आए, और सेना लेकर परसेंडा गए, पर विद्रोही वहाँ नहीं मिले। वहाँ का राजा ऊपर से तो अँगरेज़ी सरकार का ख़ैरख़्वाह था, पर भीतर से विद्रोहियों से मिला हुआ था। ४ जून को सर होप पुरवा गए, जहाँ कपूरथला के राजा पहले से ही पहुँच चुके थे। उनके साथ ३ तोपें और ६०० आदमी थे, और ७०० आदमी पीछे आ रहे थे। यहाँ से वह चीफ़-कमिश्नर की सलाह से बनी लौट गए।

परंतु उधर नवाबगंज (बाराबंकी) में विद्रोही फिर एकत्र होने लगे, और वहाँ एक सुरक्षित स्थान में अपना

पड़ाव डाला। वे १५ हज़ार थे, और उनके पास लगभग २० तोपें थीं।

१२वीं जून को सर होप ग्रांट पाँच हज़ार सेना लेकर आधी रात के समय लखनऊ से नवाबगंज को चले, जहाँ विद्रोहियों की सेना पड़ी हुई थी। जब अँगरेज़ी सेना सवेरे वेती-नदी का पुल पार करने लगी, तब विद्रोहियों ने उस पर अपनी गोला-बारी शुरू कर दी, परंतु अँगरेज़ी सेना का अग्रदल बढ़ता गया। विद्रोहियों ने उसे घेर लेने का उपक्रम किया, और अपनी आड़ से बाहर निकल आए। इस पर २०० गज़ की दूरी से, अँगरेज़ी तोपों से, उन पर गोले बरसने लगे, जिससे वे बुरी तरह मारे गए, और उन्हें आगे बढ़ने का साहस न हुआ। इधर इसी बीच में अँगरेज़ी सवार-दल और पैदल-सेना के एक दल ने उन पर आक्रमण कर दिया, और उनके ३०० आदमी मार गिराए। अब विद्रोही सेना अपना मोर्चा छोड़कर भाग खड़ी हुई, और नवाबगंज में जाकर आश्रय लिया। १३वीं को सर होप ग्रांट ने नवाबगंज पर आक्रमण किया। इस दिन यहाँ भीषण युद्ध हुआ। एक हज़ार के लगभग विद्रोही मारे गए तथा घायल हुए, एवं उनकी ६ तोपें तथा दो झंडे अँगरेज़ी सेना के हाथ लगे। १४वीं की दोपहर को सर होप ग्रांट ने नवाबगंज पर अधिकार कर लिया। विद्रोही वहाँ से भागकर घाघरा और चौका के संगम पर बिठौली के क़िले में चले गए। नवाबगंज के युद्ध में अँगरेज़ी सेना के ३६ आदमी मारे गए

तथा ६२ घायल हुए। यहाँ के युद्ध में मम्मूख़ाँ के भाई यूसुफ़ख़ाँ प्रधान सेनापति थे। उनके साथ कई राजे थे। चहलारी के राजा बलभद्रसिंह ने बड़ी बहादुरी दिखाई, और वह इस युद्ध में मारे गए।

सर होप ग्रांट नवाबगंज की रक्षा के लिये अपने साथ की फ़ौज छोड़कर लखनऊ चले आए।

लखनऊ लौट आने के कुछ ही समय बाद सर होप ग्रांट को प्रधान सेनापति लार्ड क्लाइड का यह हुक्म मिला कि वह महाराज मानसिंह की मदद के लिये शाहगंज जायँ। कोई २० हज़ार विद्रोही सेना ने जाकर उनके शाहगंज के क़िले को घेर लिया था, और वह बड़े संकट में पड़ गए थे। फलतः सर होप ग्रांट २२वीं जुलाई को नवाबगंज से शाहगंज को रवाना हुए। २६वीं को वह फ़ैज़ाबाद पहुँच गए। परंतु उनके वहाँ पहुँचने के पहले ही विद्रोही सेना वहाँ से खिसक गई थी। आठ हज़ार सिपाही तो सुल्तानपुर चले गए थे, शेष बारह हज़ार बेगम साहबा की सेना में जाकर शामिल हो गए। सर होप ग्रांट अपनी सेना के साथ फ़ैज़ाबाद में ठहरे रहे। इसी समय उन्हें प्रधान सेनापति का सुल्तानपुर के विद्रोहियों को दमन करने का हुक्म मिला। परंतु वर्षा के कारण वह ७ अगस्त को ही सेना भेजने में समर्थ हो सके। परंतु बाद को सेनापति से यह ख़बर पाकर कि सुल्तानपुर के विद्रोहियों की संख्या १४ हज़ार है, और उनके पास १५ तोपें भी हैं,

वह ख़ुद और सेना लेकर १९वीं. अगस्त को सुल्तानपुर रवाना हुए। यहाँ २८वीं की संध्या को उनकी विद्रोहियों से मुठभेड़ हुई। दूसरे दिन उन्होंने विद्रोहियों पर आक्रमण किया और वे भाग निकले।

अब सर होप ग्रांट को टाँडा जाने का हुक्म हुआ। वह ११वीं ऑक्टोबर को लखनऊ से टाँडा गए। उन्होंने एक सेना जलालपुर को भी भेज दी। इस सेना का कोई चार हज़ार विद्रोहियों से सामना हो गया। विद्रोही उस समय टोंस-नदी पार कर रहे थे, जिन्हें अँगरेज़ी सेना ने हराकर जंगल में भगा दिया। यहाँ अँगरेज़ी सेना को विद्रोहियों की दो तोपें मिल गईं, और विद्रोहियों के नेता फ़ज़लअली क़ैद होते-होते बचे।

२३वीं ऑक्टोबर को सर होप ग्रांट सुल्तानपुर चले गए। उन्होंने काँदो-नदी पर विद्रोहियों पर आक्रमण किया, जो लग-भग ४ हज़ार थे, और उनके साथ २ तोपख़ाने थे। परंतु अँगरेज़ी सेना के पहुँचते ही वे भाग खड़े हुए, तो भी उसने उनका तीस मील तक पीछा किया। उनकी दो तोपें अँगरेज़ी सेना के हाथ लगीं। २८वीं ऑक्टोबर को सर होप ने महोना के क़िले को ध्वंस करा दिया। यहाँ उन्हें ५ तोपें मिलीं। अँग-रेज़ी सेना जगदीशपुर लौट गई।

महारानी की घोषणा और विद्रोह का उन्मूलन

प्रधान सेनापति ने उन कुछ विद्रोही नेताओं तथा ताल्लुक़ेदारों के दमन करने का निश्चय किया, जो प्रांत में अभी इधर-उधर अपने दल-बल को लिए विद्रोह का झंडा खड़ा किए हुए थे। इसके लिये उन्होंने सैनिक दृष्टि-कोण से महत्त्व-पूर्ण आयोजन किया। उन्होंने एक सेना बरेली में संगठित की, और आज्ञा दी कि यह उस ओर से अवध में प्रवेश करे, और उस ओर के ज़िलों से होकर विद्रोहियों का दमन करती हुई आगे बढ़े। दूसरी सेना का संगठन उन्होंने ख़ुद इलाहाबाद में किया, और इसे लेकर वह प्रतापगढ़ आए। इस तरह इन दोनो सेनाओं द्वारा उन्होंने अवध के दक्षिणी भाग के विद्रोहियों को घेर लेने का उपक्रम किया।

प्रधान सेनापति लार्ड क्लाइड के आज्ञानुसार ब्रिग्रेडियर कालिन ट्रूप बरेली से अपना सैन्य-दल लेकर १२वीं ऑक्टोबर, सन् १८५८ को ही अवध की ओर चल चुके थे। शाहजहाँपुर पहुँचने पर उनकी सेना में बंगाल हार्स आर्टीलेरी का एक ट्रूप, २ बड़ी तोपें, छठी ड्रेगून गार्ड, ६०वीं राइफ़िल्स का एक

बटालियन और ६६वीं गुरखा आदि सेनाएँ आ मिलीं। उनके साथ ६३वीं हाइलेंडर्स, फ़ील्ड आर्टीलेरी की एक बेटरी, क्यूरेटन का मुलतानी घुड़सवार रेजीमेंट, इंजीनियर्स और सैपर्स थे ही। वहाँ उन्होंने इन सबका संगठन किया, और १८वीं को सवेरे वह अवध में घुस आए। ब्रिग्रेडियर ट्रूप को यह आदेश था कि जिस गाँव के लोग विरोध या एक भी फ़ायर करें, उसे लूट लो, और फूँक दो; और विद्रोहियों को शाहजहाँपुर के पूर्व के ज़िलों में मारकर खदेड़ दो, ताकि वे प्रधान सेनापति के सैन्य-दल के चंगुल में जा फँसें, जो इलाहाबाद से उसी समय बैसवाड़े की ओर बढ़ा चला आ रहा था।

· ब्रिग्रेडियर ट्रूप का सैन्य-दल शाहजहाँपुर से १५ मील दूर १६वीं को पासगाँव पहुँच गया। यहाँ विद्रोहियों की सेना सामना करने को मौजूद थी। दोनो ओर से तोप दगने लगी। परंतु कुछ ही गोलों के चलने के बाद विद्रोही अपना मोर्चा छोड़कर हट गए, और घुड़सवारों ने लंबा चक्कर काटकर बारबरदारों के अरक्षित अंश पर आक्रमण किया, और कुछ देशी स्त्री-पुरुषों को मार डाला। परंतु शीघ्र ही वे मार भगाए गए। इस संघर्ष में विद्रोहियों की एक तोप छीन ली गई।

पासगाँव से भागकर विद्रोहियों ने रसूलपुर में जाकर अपना मोर्चा बाँधा। इसकी ख़बर पाकर २५वीं को सवेरे ·अँगरेज़ी सेना ने वहाँ पहुँचकर उन पर आक्रमण किया।

उनके बाएँ पार्श्व पर तोपों से गोला-बारी की गई, और घोड़ों के तोपखाने की सहायता से ६०वीं राइफ़िल्स ने सामने से धावा किया। विद्रोहियों ने भी अपनी गोला-बारी से जवाब दिया, और उनके घुड़सवार अँगरेज़ी सेना के बाएँ पार्श्व की ओर बढ़े। परंतु जब अँगरेज़ी सेना ने बीच के नाले को पार कर लिया, तब विद्रोही अपने मोर्चे छोड़कर पीछे हट गए, और अँगरेज़ी सेना ने बढ़कर उन पर अधिकार कर लिया। कुछ दूर तक विद्रोहियों का पीछा किया गया। इस युद्ध में सौ से ऊपर विद्रोही मारे गए, और उनकी एक तोप भी अँगरेज़ों के हाथ लग गई।

इसके बाद छ नवंबर तक अँगरेज़ी सेना उस अंचल में विद्रोहियों को खोजती हुई अपना प्रदर्शन करती रही। छ नवंबर की रात को मितौली के क़िले पर चढ़ाई करने का हुक्म हुआ। विद्रोह के प्रारंभ में वहाँ के राजा लोनेसिंह ने शरणार्थी अँगरेज़ों को अपने क़िले में आश्रय दिया, जिन्हें बाद को पाँच हज़ार रुपया लेकर लखनऊ भेज दिया। परंतु जब ब्रिगेडियर ट्रूप ने उन्हें महारानी की घोषणा के अनुसार बुलाया, तब उन्होंने उसका कोई उत्तर न दिया। इस पर ब्रिगेडियर साहब ने क़िले पर सामने से आक्रमण करने का विचार किया, परंतु उन्हें सूचना मिली कि राजा ने मार्ग मज़बूती से बंद कर दिया है, विशेषकर नदी के पास। वहाँ पहुँचने पर एक ग्रामीण ऐसा मिल गया, जिसने भारी रक़म के लालच

में नदी के पुल का मार्ग बता देने का वादा किया। १८ मील चलने के बाद वह पुल मिला, और अँगरेज़ी सेना बिना किसी बाधा के पुल से नदी पार हो गई। ७वीं की रात नदी पार एक बाग़ में बिताई गई। ८वीं को दिन में सेना ने प्रस्थान किया, और एक बजे के लगभग क़िले के पास पहुँच गई। क़िले से तुरंत ही गोला-बारी शुरू हुई। इधर से भी जवाब में गोले चलने लगे। ८ बजे रात तक दोनो ओर से गोला-बारी होती रही; परंतु कोई नतीजा न निकला।

मितौली का क़िला अधिक सुदृढ़ तथा एक मील लंबा-चौड़ा था। इसके घेरे की दीवार लगभग ४० फ़ीट चौड़ी मिट्टी की थी। इसकी बाहर की खाईं ४० फ़ीट गहरी और ३० फ़ीट चौड़ी थी। उक्त दीवार के भीतर चारो ओर बाँस की ४० फ़ीट चौड़ी बेनई थी, जिससे होकर तंग रास्ते गए थे। बीच में क़िला था। उपर्युक्त दीवार में उत्तर, पूर्व और पश्चिम की ओर बीच में तथा दोनो कोनों में बुर्ज बने हुए थे। दक्षिण-ओर और भी बड़ा बुर्ज था। इसी के पास फाटक था, जहाँ तोपें लगाने तथा बंदूक़ें चलाने की जगहें बनी हुई थीं। उधर भीतर की बाँस की क़तार से आक्रमणकारियों पर सुविधा-पूर्वक गोलियाँ चलाई जा सकती थीं। इसके भीतर जो क़िला था, उसके भी चारो ओर खाईं थी, जो ३० फ़ीट गहरी और २० फ़ीट चौड़ी थी। इसका भी प्रवेश-द्वार पहले ही जैसा सुरक्षित था।

क़िले पर आक्रमण करने की सारी व्यवस्था ८वीं की रात को ही निश्चित हो गई थी, परंतु दूसरे दिन मालूम हुआ कि राजा क़िला छोड़कर भाग गया है। क़िले में ४ या ६ लाशें, ६ छोटी तोपें, ३ हज़ार पौंड बारूद और बहुत-सा अन्न तथा तेल मिला। राजा का पीछा नहीं किया गया। अँगरेज़ी सेना वहाँ ठहर गई, और यथासंभव क़िले को ध्वंस कर डाला।

१७ नवंबर को कर्नल त्रिंड ने मितौली से २५ मील दूर अलीगंज में विद्रोहियों को जा घेरा। दो घंटे तक युद्ध हुआ। विद्रोहियों की ८ तोपें छीन ली गईं। ४ बजे संध्या-समय वे भागे। अँधेरा होने तक उनका पीछा किया गया, और उनके कई सौ आदमी मारे गए।

उधर प्रधान सेनापति लॉर्ड क्लाइड ने भी विद्रोहियों के दमनार्थ नीचे-लिखे अनुसार अपनी सेनाओं को नियुक्त किया—

ब्रिग्रेडियर विथरल की अधीनता में ई० ट्रूप रॉयल हॉर्स आर्टीलरी, भारी फ़ील्ड बैटरी आर० ए०, पहला पंजाबी रिसाला, ७६वीं हाइलेंडर्स सेना, बलोच बटेलियन और ६वीं पंजाबी पैदल सेना का एक भाग सोराँव (इलाहाबाद) से चलकर चोरास और लालगंज होता हुआ रामपुर-कसिया के क़िले पर चढ़ गया, और क़िले पर अधिकार कर वहाँ छावनी डाल दी।

ब्रिग्रेडियर पिंकने के सैन्य-दल में रॉयल इंजीनियर की

एक कंपनी देहली-पायोनियर, हल्की फ़ील्ड बैटरी रॉयल आर्टीलेरी, भारी बैटरी बंगाल-आर्टीलेरी, काराबिनियरों का एक स्क्वाडरन, अवध-पुलिस-घुड़सवारों का एक रेजीमेंट, छठे मद्रास-रिसाले का एक स्क्वाडरन, पठान-सवारों के २५० सैबर, ५वीं फ़ुसिलियर्स का एक भाग, ५४वीं पैदल सेना, पहली सिक्ख पैदल और अवध-पुलिस-पैदल-सेना का एक रेजीमेंट आदि थे। यह सेना-दल लूली-नामक स्थान में पड़ाव डाले था, जो प्रतापगढ़ से ६ मील पर था।

होप-ग्रांट के सेना-दल में क्यू बैटरी रॉयल आर्टीलेरी, एफ़० ट्रूप आर० एच० ए०, हैवी फ़ील्ड बैटरी आर० ए०, मद्रास सैपरों की सी० कंपनी, ७वीं हुसार-सेना, हडसन्स हॉर्स का एक रेजीमेंट, ३२वीं लाइट-इन्फ़ेंटरी, सेकंड बैटेलियन राइफ़ल ब्रिगेड, फ़र्स्ट मद्रास-फ़ुसीलियर्स, ५वीं पंजाब-इन्फ़ेंटरी आदि थे। यह सेना-दल जगदीशपुर और जायस होकर उटेहर जा पहुँचा, और वहाँ अपना पड़ाव डाल दिया। यह जगह अमेठी के क़िले से आठ मील पश्चिम थी।

३ नवंबर को १० बजे अँगरेज़ी सेना ने रामपुर-कसिया के क़िले को जा घेरा। यह सई के किनारे पर एक सुदृढ़ क़िला था। यह चारों ओर से घने जंगल से घिरा हुआ था। उस समय इसमें चार हज़ार विद्रोही थे, जिनमें अधिकांश १७वीं, २८-वीं और ३२वीं के तिलंगे थे। १० बजे के बाद अँगरेज़ी तोपों से क़िले पर गोले बरसने लगे। साथ ही नवीं पंजाब-सेना

क़िले की ओर बढ़ी। यद्यपि विद्रोहियों ने भी अपनी तोपों से गोले छोड़े, पर सिक्ख-सैनिकों ने कुछ परवा न की, और उनके मोर्चों पर टूट पड़े। उनकी तोपें छीनकर भागते हुए विद्रोहियों की ओर उनका मुँह फेर दिया। इस पर विद्रोही लौट पड़े। उन्होंने देखा, सिक्ख संख्या में कम हैं, अतएव उन पर आक्रमण कर दिया। परंतु इतने में ही बिलोचियों की ४ और ७९वीं की दो कंपनियाँ मदद के लिये पहुँच गईं। तीन बजे तक ख़ूब डटकर युद्ध होता रहा। अंत में विद्रोही भाग खड़े हुए। उनके ३०० आदमी मारे गए। क़िले में अँगरेज़ों को १७ तोपें और मोर्टर तोपें मिलीं। वहाँ तोप ढालने, चर्ख़ियाँ और बारूद बनाने का कारख़ाना भी था। अंत में क़िला ढहा दिया गया, और तोपें आदि तोड़ डाली गईं। इसके बाद वह सेना अमेठी चली गई।

पहली नवंबर सन् १८५८ को इलाहाबाद में वाइसराय लॉर्ड कैनिंग ने दरबार करके महारानी विक्टोरिया की घोषणा का प्रचार किया, जिसकी सूचना विद्रोही नेताओं को यथा विधि दी गई। इसका अच्छा प्रभाव पड़ा।

महारानी विक्टोरिया की ओर से क्षमा-प्रदान का घोषणा-पत्र प्रकाशित हुआ। उसकी ख़बर पाकर शांति चाहनेवाले आत्मसमर्पण के लिये आने लगे। इनमें नवाब तफ़ज़ुल-हुसैनख़ाँ (फ़र्रुख़ाबाद के रईस), शेख़ फ़ज़लआज़म, मीर

मेहँदीहसनखाँ, मुक़रबुद्दौला के बेटे मीर गुलामहुसैन, नवाबअली-खाँ के भाई ईवादअलीखाँ, क़ाज़िमहुसैनखाँ, जनरल इस्माइल-खाँ, क़ाज़ी इनायतअलीखाँ और ब्रिग्रेडियर आदि लोग थे।

उक्त घोषणा के हो जाने के बाद प्रधान सेनापति भी १८५८ की दूसरी नवंबर को सवेरे इलाहाबाद से रवाना हुए, और ३५ मील यात्रा कर बेला की छावनी में जा ठहरे। यहाँ से उन्होंने अमेठी के लाल माधोसिंह को वश्यता स्वीकार करने के लिये एक पत्र लिखा। पत्र के साथ महारानी विक्टोरिया के घोषणा-पत्र की एक नक़ल भी भेज दी। यह घोषणा-पत्र पहली नवंबर को सभी प्रांतीय राजधानियों में जनता को पढ़कर सुनाया गया। लाल माधोसिंह को उत्तर देने के लिये ६ नवंबर तक अवधि दी गई। लाल माधोसिंह ने वश्यता स्वीकार करने में हीला-हवाला किया। और, जब ६ नवंबर को नहीं आए, तब लॉर्ड क्लाइड ने सेना को कूच की आज्ञा दी। होप ग्रांट और विथरल के सेना-दलों ने अमेठी के क़िले को उत्तर और दक्षिण की ओर से घेर लिया। लाल माधोसिंह ने अपनी असहाय अवस्था देखकर १० नवंबर को आत्मसमर्पण कर दिया।

अमेठी से निवृत्त होकर लॉर्ड क्लाइड शंकरपुर की ओर बढ़े। यह अनुमान किया गया कि रामपुर-कसिया और अमेठी के बाग़ी तिलंगे भागकर शंकरपुर पहुँचे हैं। शंकरपुर पर चढ़ाई करने के लिये अँगरेज़ी सेना तीन दलों में विभक्त

की गई। होप ग्रांट अपने सेना-दल के साथ दाहनी ओर, ब्रिगेडियर विथरल अपने सेना-दल के साथ बाईं ओर और लॉर्ड क्लाइड अपने सेना-दल के साथ इन दोनो सेनाओं के बीच में होकर चले। इस प्रकार अँगरेज़ी सेना परसदेपुर होकर आगे बढ़ी।

१५ नवंबर को होप ग्रांट को रायबरेली की ओर जाने की आज्ञा दी गई। उन्हें शंकरपुर के बराबर पहुँचने पर बाएँ मुड़कर शंकरपुर के क़िले के उत्तर में अपना मोर्चा लगाने का आदेश दिया गया। इधर प्रधान सेनापति और विथरल के सेना-दलों ने सीधा शंकरपुर का मार्ग पकड़ा। शंकरपुर के समीप पहुँचकर इन्होंने उसके दक्षिण-पूर्व अपने मोर्चे लगा दिए।

उधर ब्रिगेडियर इवलेव ८ नवंबर को पुरवा से रवाना हुए। उन्होंने उसी दिन बागियों के एक दल को मार भगाया, और ६ नवंबर को सबेरे सिमरी के क़िले पर अधिकार किया। उन्हें आज्ञा दी गई कि वह शंकरपुर पर उत्तर-पश्चिम से आक्रमण करें। इस प्रकार शंकरपुर तीन ओर से घेर लिया जाय। परंतु ब्रिगेडियर इवलेव को प्रधान सेनापति की आज्ञा देर में मिली, और मार्ग की कठिनाइयों के कारण वह नियत समय पर शंकरपुर नहीं आ सके, अतएव राना बेनीमाधो और उनकी सेना के निकल भागने का मार्ग खुला रहा।

शंकरपुर की बाहरी खाई की परिधि ८ मील के लगभग

थी, परंतु वह अपूर्ण थी। इसके भीतर चार अलग-अलग क़िले थे। इन क़िलों के बीच के भागों में काँटेदार वृक्षों का सघन जंगल था, जिनके बीच से इधर-उधर तंग पगडंडियाँ गई थीं। इनमें से प्रधान क़िला राना बेनीमाधो के अधिकार में था। शंकरपुर का क़िला ५ एकड़ के रक़बे में था। इस आक्रमण के कुछ ही समय पहले इस क़िले के मोर्चे नए सिरे से मज़बूत किए गए थे। शेष तीन क़िलों में से राना के भाई नरपतिसिंह का ही क़िला युद्ध के काम का था।

प्रधान सेनापति के सेना-दल के शंकरपुर के सामने पहुँचने पर पैट्रोलों द्वारा होप ग्रांट की सेना से संबंध स्थापित किया गया, और क़िले की दक्षिण-ओर डेढ़ मील तक निगरानी रखने के लिये पिकेट बिठा दिए गए। इस बात का विशेष ध्यान रक्खा गया कि सेनाएँ काफ़ी दूर रहें, ताकि सुलह की शर्तें देने के पहले लड़ाई का कोई बहाना न मिले। बेनीमाधो को आत्मसमर्पण करने को लिखा गया, पर उन्होंने साफ़ इनकार कर दिया, और १५वीं तथा १६वीं की आधीरात को क़िले की सेना ने क़िला ख़ाली कर दिया। सेना १० हज़ार के क़रीब रही होगी। इसके साथ १० या ६ तोपें भी थीं। होप ग्रांट के दाहने बाज़ू के पिकेटों की निगाह बचाने के लिये यह सेना पश्चिम-ओर से एक लंबे दायरे में घूमकर राय-बरेली से तीन मील उत्तर-पश्चिम के जंगल में चली गई। कदाचित् यह गोमती और घाघरा के पार उतर जाने की इच्छा

रखती थी। रात को दो बजे इस बात की सूचना लॉर्ड क्लाइड को मिली। उन्होंने होप ग्रांट को सवेरे ही रायबरेली जाने की आज्ञा दी। जब सवेरे अँगरेज़ी सेना ने शंकरपुर के क़िले पर अधिकार किया, तब उसे वहाँ एक या दो तोपें मिलीं। शेष या तो ले जाई गईं या कहीं गाड़ दी गई होंगी।

१६ नवंबर को सवेरे विथरल का ब्रिगेड, ७६वीं हाइलेंडर्स के कर्नल टेलर की अध्यक्षता में, फ़ैज़ाबाद की ओर भेज दिया गया, ताकि बैसवाड़ा विद्रोहियों से ख़ाली करा लेने पर वह घाघरा के पार विद्रोहियों से लड़ाई जारी करें।

शंकरपुर में क़िला गिराने और जंगल साफ़ करने के लिये प्रधान सेनापति ने थोड़ी-सी सेना छोड़ दी, और वह १८वीं की रात को अपने सेना-दल को लेकर रायबरेली रवाना हुए। इसी बीच होप ग्रांट के दल को जगदीशपुर और गोमती की ओर जाने की आज्ञा दी गई। जगदीशपुर पहुँचकर होप ग्रांट हाडसन्स हॉर्स की एक रेजीमेंट लेकर फ़ैज़ाबाद चले गए। जगदीशपुर के सेना-दल का भार ब्रिगेडियर हॉर्सफ़ोर्ड पर पड़ा। लखनऊ जाते हुए मार्ग में पड़नेवाले सभी क़िलों को गिरा देने का दायित्व इन्हें सौंपा गया।

रायबरेली पहुँचने पर लॉर्ड क्लाइड ने ब्रिगेडियर इवलेघ की सेना का पता लगाने के लिये पेरू को एक पेट्रोल भेजा, क्योंकि उन्हें वहाँ तक बढ़ आने की आज्ञा थी। परंतु पेट्रोल को उस सेना की कोई ख़बर न मिली। १९वीं की रात को

ब्रिगेडियर इवलेव का एक पत्र मिला । उसमें लिखा था कि बागियों की एक बड़ी सेना ने १७वीं को बेरा (भीरा) में उन पर आक्रमण किया, जिसे उन्होंने परास्त कर दिया ; और वह पश्चिम की ओर चली गई । इससे स्पष्ट हो गया कि होप ग्रांट जगदीशपुर की ओर राना बेनीमाधो से पहले पहुँच गए थे ।

यह अनुमान किया गया कि बागी सिमरी की ओर गए होंगे, अतएव ब्रिगेडियर इवलेव को रातोरात सिमरी की ओर जाने और बागियों का पीछा कर उन्हें पीड़ित करने की आज्ञा दी गई । ब्रिगेडियर ने अपने साथ के रोगियों, घायलों, भारी तोपों तथा अन्य ऐसी ही दूसरी चीजों को उन घुड़सवारों के सिपुर्द कर दिया, जो इसी कार्य के लिये सदर से आए थे ।

इधर रायबरेली की ओर तोपों की रक्षा का भार एक फ़ौज को सौंपकर लॉर्ड क्लाइड २०वीं की आधी रात को बछरावाँ चले गए । वहाँ आवश्यक कार्यवाही करने को तैयारी से प्रतीक्षा करने लगे । उन्हें वहाँ सूचना मिली कि बेनीमाधो ने अपने दल-बल के साथ डौंड़ियाखेरा में जाकर डेरा लगाया है, और ऐसा प्रतीत होता है कि उसकी लड़ने की इच्छा है । इवलेघ छ मील की दूरी पर नगर में थे, और वहाँ से विद्रोहियों पर अपनी निगाह रक्खे थे । उनके पास काफी पैदल सेना नहीं थी, अतएव लॉर्ड क्लाइड ने अपनी सेना ले जाकर उनके साथ बेनीमाधो पर आक्रमण करने

का निश्चय किया। फलतः वह २३वीं को नगर में जा पहुँचे। बेनीमाधो अभी तक अपनी जगह पर जमे हुए थे। उनकी सेना का दाहना बाज़ू बकसर में और बायाँ डौंड़ियाखेरा में था। उनके पृष्ठ-भाग का सेना-दल गंगा के तट पर स्थित था, और आगे के भाग में कटीला सघन जंगल था, जिसमें उनके योद्धाओं की जगह-जगह ठहरी हुई टोलियाँ उसे अपने अधिकार में किए हुए थीं।

अँगरेज़ी सेना के ख़ीमे उखाड़ दिए गए, और सारा सामान पैक करके एक मज़बूत दल को सौंप दिया गया। २४वीं को सबेरे लॉर्ड क्लाइड बाग़ियों के पड़ाव की ओर बढ़ने को तैयार हो गए। ७ बजे सबेरे सेना ने कूच किया। नगर के आगे जाने के पहले ही सेना दो भागों में विभक्त हो गई, और अपने बीच में आध मील का अंतर रखकर आगे बढ़ने लगी। दाहने बाज़ू की सेना ब्रिग्रेडियर इवलेघ की अधीनता में थी। इसका लक्ष्य डौंड़ियाखेरा था। और, बाएँ बाज़ू की सेना कर्नल जोन्स की अधीनता में थी। इसका लक्ष्य बकसर था। दोनो सेनाएँ परस्पर संपर्क बनाए हुए जा रही थीं। दोनो के बाज़ुओं में रिसाला था। भिदौरा के आगे जाने पर दोनो सेनाओं ने भिन्न-भिन्न मार्ग ग्रहण किया, अतएव दोनो में संबंध बनाए रखने के लिये बीच में योद्धाओं की टोलियाँ नियुक्त कर दी गईं। ये दोनो सेनाओं की अपनी-अपनी टोलियाँ थीं।

भिदौरा पहुँचने पर बेनीमाधो को अंतिम बार आत्म-समर्पण करने का मौक़ा देने को लिखा गया, परंतु जब डेढ़ घंटे तक कोई उत्तर न मिला, तब सेनाओं ने फिर कूच किया। जब बाग़ियों का पड़ाव नज़दीक आ गया, तब जाँच-पड़ताल करने के लिये थोड़ी देर सेनाएँ ठहर गईं।

पहले शत्रु ने तोप चलाई, फिर हमारी तोपें छूटनी शुरू हुईं, और योद्धा तुरंत लड़ने लगे। तितिर-वितिर होकर लड़नेवाले सैनिकों ने जंगल से होकर मार शुरू की, जिससे बाग़ियों की पंक्ति टूट गई। शत्रुओं के तितिर-वितिर होकर लड़नेवाले योद्धा जंगल से हटकर नालों में छिपने को बाध्य हुए, और जो सेना उक्त दोनो गाँवों में मोर्चा लगाए हुए थी, वह भी वहाँ से खदेड़ बाहर की गई। अँगरेज़ी सेना के मुख्य दल को आक्रमण करने की आवश्यकता नहीं हुई।

शत्रु की बहुत हानि हुई, परंतु उसकी सेना का बहुत बड़ा भाग दोनो ओर नदी के किनारे-किनारे भाग गया। इसका, विशेषकर दाहनी ओर की सेना का, घुड़सवार सेनाओं ने दृढ़ता से अँधेरा होने तक पीछा किया। तीन-चार सौ के लगभग विद्रोही मारे गए, और उनकी ७ तोपें मोर्चों पर छूट गईं। २५वीं को सेना-दल ठहरा रहा। यह निश्चय न हो सका कि बाग़ी कहाँ जाकर ठहरेंगे, क्योंकि वे दो दिशाओं में भागे थे।

२६वीं को रॉयल आर्टीलेरी के लेफ़्टिनेंट कर्नल गार्डन को

आज्ञा दी गई कि वह एक छोटी-सी सेना लेकर सई की ओर जायँ, और बागियों का पीछा करें। जब यह पता लगा कि बेनीमाधो गोमती की ओर जा रहे हैं, तब उनका पीछा करने और घाघरा पार खदेड़ देने के लिये पहली दिसंबर को राय-बरेली से लेफ्टिनेंट कर्नल कार्माइकल भेजे गए। इनके साथ लाइट फ़ील्ड बैटरी की ४ तोपें, अवध - पुलिस - कवेलरी की एक रेजीमेंट, हिज़ मेजेस्टीज़ ३२वीं लाइट इंफेंटरी और १६वीं पंजाबी सेना थी। इस सेना और हॉर्सफ़ोर्ड की सेना ने मिलकर ५वीं दिसंबर को विद्रोहियों को गोमती के पार मार भगाया।

परंतु अभी तक रुइया के नरपतिसिंह बचे हुए थे। पहली दिसंबर को बिसवाँ के पास अँगरेज़ी सेना का नरपतिसिंह से सामना हो गया। उनके पास ६ या ८ तोपें, दो हज़ार पैदल और १० हज़ार के लगभग सवार थे। उनके दो हज़ार सवारों ने सेना से अलग होकर अँगरेज़ी सेना के पृष्ठ-भाग पर आक्रमण करना चाहा। परंतु अँगरेज़ी सेना के मुलतानी सवारों के दल ने बढ़कर उनका सामना किया, और उन्हें शीघ्र ही मार भगाया। उनके क़रीब २० आदमी मारे गए। अँगरेज़ी सेना के तीन सवार मारे गए, और एक अँगरेज़ अफ़सर तथा १२ सवार घायल हो गए। अग्र-भाग से भी नरपतिसिंह ने उस दृढ़ता से मोहरा नहीं लिया। अंत में वह अल्प हानि सहकर भाग खड़े हुए।

३ दिसंबर को संडीला से ब्रिग्रेडियर वार्कर भी बिसवाँ आ गए। यह लखनऊ से ३ ऑक्टोवर को संडीला गए थे। इन्होंने ८ ऑक्टोवर को विद्रोही-नेता हरिचंद को पूर्ण रूप से परास्त किया। इस अवसर पर बड़ा भयानक युद्ध हुआ। १० ऑक्टोवर को उन्होंने बिरवा के क़िले पर अधिकार किया। यह क़िला लेने में उन्हें दिन-भर युद्ध करना पड़ा। २८ ऑक्टोवर को उन्होंने रुइया के क़िले पर, जिसे नरपति-सिंह ने फिर सुधार लिया था, फिर चढ़ाई की, परंतु इस बार कोई सामने नहीं आया। अंत में वह फिर संडीला लौट गए, जहाँ दिसंबर शुरू होने तक ठहरे रहे।

जब लॉर्ड क्लाइड बैसवाड़े में बेनीमाधोसिंह से निबटने में लगे थे, तब उन्होंने सर होप ग्रांट को १२ नवंबर को फ़ैज़ाबाद भेज दिया था। फ़ैज़ाबाद में चार हज़ार के ऊपर सेना पहले से ही मौजूद थी। सर होप ग्रांट ने पहुँचकर देखा कि नदी के उस पार विद्रोहियों की सेना जमा है। उन्होंने नदी पार करने के लिये पुल तैयार करने का हुक्म दिया। जब पुल बनने लगा, तब विद्रोहियों ने गोला-बारी शुरू की, परंतु वे बाधा न डाल सके, और पुल तैयार हो गया। २६ नवंबर की रात को उन्होंने नावों से कुछ सेना, मेजर गार्डन के नेतृत्व में, उस पार उतार दिया। सवेरे वह ख़ुद सेना लेकर पुल से नदी पार हो गए, और विद्रोहियों के मोर्चे पर आक्रमण किया। उधर पूर्व-निश्चय के अनुसार विद्रोहियों के बाज़ पर

मेजर गार्डन ने भी आक्रमण कर दिया। विद्रोही इस दोहरे आक्रमण के लिये तैयार न थे, अतः भाग गए। उनकी एक तोप युद्ध-क्षेत्र में रह गई। अब अँगरेज़ी सेना ने विद्रोहियों का पीछा किया। मार्ग में दो और तोपें मिलीं। इसके बाद एक तोप के साथ ५०० विद्रोही भी दिखाई दिए, जो भागकर पास के जंगल में घुस गए, और वहाँ से अँगरेज़ी सेना पर गोले चलाने लगे। परंतु धावा करके उनकी वह तोप छीन ली गई। २४ मील का धावा मारकर, अँगरेज़ी सेना ने लौटकर घाघरा के बाएँ किनारे पर पड़ाव डाल दिया।

३ दिसंबर को सर होप ग्रांट बनगाँव और वहाँ से मछली-गाँव गए। मछलीगाँव से एक मील आगे जंगल के पास विद्रोहियों का एक दल दिखाई दिया। अँगरेज़ सैनिकों को देखते ही उसने गोला-बारी शुरू की। सारी अँगरेज़ी सेना के आ जाने पर उस पर धावा किया गया, और उसकी दो तोपें छीन ली गईं। वह एक तोप ले जंगल से होकर निकल भागा। इसके बाद अँगरेज़ी सेना ने गोंडा के राजा के बनकुसिया के क़िले पर अधिकार किया। यहाँ उसे पाँच तोपें तथा गोला-बारूद आदि मिला। अँगरेज़ी सेना के आने की खबर पाकर राजा क़िला छोड़कर भिनगा भाग गए।

९ दिसंबर को सर होप ग्रांट गोंडा पहुँचे और १६वीं को बलरामपुर। यहाँ ख़बर मिली कि बालाराव तुलसीपुर के

क़िले में ठहरे हुए हैं, और उनके पास १२ तोपें हैं, तथा मुहम्मदहुसैन भी उनके साथ है। फलतः उन्होंने गोरखपुर-ज़िले के हीर से ब्रिग्रेडियर रोक्राफ़्ट को बुलाया। जब वह अपनी सेना के साथ आ गए, तब अपनी सेना से एक रेजीमेंट उनके साथ कर तुलसीपुर पर आक्रमण करने को भेजा। रोक्राफ़्ट का विद्रोहियों ने सामना किया, पर वे ठहर नहीं सके, और दो को छोड़कर सारी तोपों के साथ भाग खड़े हुए। अँगरेज़ी सेना काफ़ी घुड़सवार पास में न होने से उनका पीछा न कर सकी। सर होप ग्रांट ख़ुद तुलसीपुर गए। वहाँ उन्हें मालूम हुआ कि विद्रोही पश्चिम की ओर नहीं, पूर्व को गए हैं; और सर होप ग्रांट ऐसा नहीं चाहते थे। अतएव वह अपनी सेना तुलसीपुर ले आए, और विलकोहर होकर, घूमकर हीर पहुँच गए। वहाँ से नैपाल की सीमा पर ढुलहरी को गए। पास के जंगल में जो विद्रोही थे, वे अँगरेज़ी सेना को देखकर भाग गए। इसके बाद सर होप ग्रांट पुशुरोवा गए। यहाँ उन्हें पता लगा कि बालाराव और उनकी सेना अभी पीछे ही है। बालाराव छ हज़ार सेना और १५ तोपों के साथ कुंडा-कोट की ओर भागे। सर होप ग्रांट को पता लगा कि अमुक स्थान में विद्रोही ठहरे हुए हैं, अतएव वह उस ओर रवाना हुए, और जब वह जगह पाँच मील रह गई, रात में विश्राम करने के लिये पड़ाव डाल दिया। ४ जनवरी, १८५९ को वह आक्रमण करने के लिये आगे बढ़े।

दो घंटे बाद विद्रोही सैनिक एक जंगल के किनारे दिखाई दिए। सर होप ग्रांट ने अँगरेजी सेना को बढ़ने का हुक्म दिया। परंतु इस बार विद्रोही अपनी सारी तोपें छोड़कर भाग खड़े हुए। इस बार वे पश्चिम, कुंडा-कोट, की ओर भागे। अँगरेजी सेना भी उनके पीछे लग गई, और विद्रोही सेना को एक जंगल में जा घेरा। परंतु अँगरेजी सेना के देखते ही विद्रोही अपनी १५ तोपें छोड़कर भाग खड़े हुए। अँगरेजी सेना की विद्रोहियों से यह इस ओर अंतिम मुठभेड़ थी।

बौंड़ी में बेगम की हार और विद्रोह की समाप्ति

उधर प्रधान सेनापति अवध के दक्षिणी ज़िलों के, इधर सर होप ग्रांट घाघरा-पार के विद्रोहियों का जब पूर्ण रूप से पराभव कर चुके, तब प्रधान सेनापति लॉर्ड क्लाइड ने बौंड़ी की ओर ध्यान दिया, जिसे बेगम साहबा और उनके दरबारी तथा विद्रोही ताल्लुक़ेदार दूसरा लखनऊ बनाए हुए थे।

बहराइच में क़ाज़िमहुसैनख़ाँ, भटवामऊ के ज़मींदार तजम्मुलहुसैनख़ाँ, गोंडा के राजा देवीबख़्श, बरवा के राजा गुलाबसिंह, महोना के राजा दिग्विजयसिंह, रुइया के राजा नरपतिसिंह, राना बेनीमाधोबख़्श बहादुर, चौधरी मुसाहबअली, अनंदी कुर्मी और चुरवा के राजा जोतसिंह, ये सब अपने-अपने यहाँ लड़ते रहे। जब न ठहर सके, तब सब भागकर बौंड़ी में आ जमा हुए। इनके सिवा नानाराव, बालाराव आदि दूसरे विद्रोही नेता भी अन्त में बौंड़ी में ही आ रहे थे। यह हाल जानकर लॉर्ड क्लाइड ने सर होप ग्रांट को चंद्रपुर बुलाया। फलतः वह ७ जनवरी, १८५९ को चंद्रपुर को रवाना हुए; परंतु लॉर्ड क्लाइड बहराइच चले गए थे।

सर होप ग्रांट को इस मर्म का पत्र भी मिल चुका था कि अब विद्रोह का अंत समझना चाहिए। बहराइच पहुँचने पर लॉर्ड क्लाइड ने कहा कि नैपाल की सीमा पर चौकस पहरा होना चाहिए, ताकि विद्रोही सीमा पार कर वहाँ से अवध में फिर न आने पावें। विद्रोही भी नैपाल छोड़कर इधर आना नहीं चाहते थे, इससे अँगरेज़ी सेना को किसी तरह के झमेले में नहीं पड़ना पड़ा। उस समय ब्रिग्रेडियर हॉर्सफ़ोर्ड रापती के किनारे पड़ाव डाले पड़े थे। यहाँ उन्होंने विद्रोहियों के सवारों को बुरी तरह खदेड़ा, जिन्हें नदी में कूदकर भागना पड़ा। इस संघर्ष में कई अँगरेज़ी सवार भी नदी में डूब गए। हॉर्सफ़ोर्ड सीमा पार कर नैपाल में प्रवेश न कर सकते थे। अंत में राना जंगबहादुर ने अनुमति दे दी। फलतः हॉर्सफ़ोर्ड सोनार-घाटी में गए, और सिदोनिया घाट से रापती पार कर विद्रोहियों को जा घेरा। उन्होंने विद्रोहियों में से कुछ को पकड़ ही नहीं लिया, बल्कि उनकी १४ तोपें भी ले लीं।

अब विद्रोही ठंडे पड़ गए थे। राना जंगबहादुर ने उनके हथियार ले लेना चाहा, परंतु उन्होंने इनकार कर दिया; न हथियार ही रक्खे, न उनका देश ही ख़ाली किया।

जब प्रधान सेनापति लॉर्ड क्लाइड अँगरेज़ी फ़ौज लेकर बहराइच से लड़ते-भिड़ते बौंड़ी के समीप पहुँचे, तब बेगम साहबा की फ़ौज और ज़मींदारों तथा ताल्लुक़ेदारों ने उनका सामना किया, और डटकर लड़ाई हुई। परंतु जब अँगरेज़ी फ़ौज ने धावा

किया, उनके पैर उखड़ गए, और वे तितर-बितर होकर नैपाल-राज्य की सीमा में चले गए। राना जंगबहादुर ने अपनी सीमा पर घाटियों में जगह-जगह पहरे लगा दिए थे; परंतु उनके सिपाही इन्हें न रोक सके, तब तरह दे गए। थक जाने से बेगम साहबा दो-तीन दिन तुलसीपुर की अचवा-गढ़ी में रहीं। वहाँ से सुनारी पहाड़ होकर नए कोट चली गईं। यहाँ नवाब आसफ़ुद्दौला की बारादरी थी, जो अब तक मौजूद है।

जब बेगम साहबा सुनारी से आगे बढ़ीं, उसी समय (२७ फ़रवरी, १८५६) कप्तान निरंजन माँझी राना जंगबहादुर की चिट्ठी लेकर आया। उन्होंने लिखा था कि या तो अँगरेज़ों से मेल करें, या यहाँ का रहना मंज़ूर करें। हम न तो आपकी मदद करेंगे, और न आपके साथ होकर अँगरेज़ों से लड़ेंगे। या आप यहाँ से चली जायँ। मम्मूख़ाँ ने जवाब दिया कि न तो हम मेल करेंगे, और न हमें आपकी मदद की ज़रूरत है। हम यहीं अँगरेज़ों से लड़ेंगे। इसका जवाब यह आया कि इधर से हम मारेंगे, उधर से अँगरेज़। साथ ही रसद-पानी का भी निषेध कर दिया। बाद को रसद-पानी की तो आज्ञा हो गई, पर मदद करने से इनकार कर दिया।

पहले बेगम साहबा पीनस पर सवार होकर अकेले नए कोट को गईं। उनके साथ और कोई नहीं जाने पाया। बाद को राजे और रईस, उनकी स्त्रियाँ और लड़के उनके साथ जाने पाए।

मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र के साथ क़प्तान निरंजन माँझी, एक सरदार हिमतपीर साही और मुक़ताहुद्दौला थे। पहले टाँवन पर सवार होकर चले, पर चल न सके। तब कप्तान के कहने से हाथी पर सवार हुए। राह में बिरजिसक़द्र प्यासे हुए। कप्तान ने नारंगियाँ खाने को दीं। कुछ आगे जाने पर कप्तान ने मुक़ताहुद्दौला से कहा कि तुम्हें आगे जाने का हुक्म नहीं, पर तुम यहाँ अलग रह सकते हो। उन्होंने स्वीकार न किया, और वह लौट आए। मम्मूख़ाँ फ़ौज के साथ रह गए। जब फ़ौज हारकर घबराहट के साथ पहाड़ पर चढ़ने लगी, तब सौ घोड़े और सैकड़ों ऊँट गिरकर मर गए। पहाड़ के नीचे जो लड़ाई हुई, उसमें फ़ौज ने बड़ी बहादुरी से युद्ध किया। परंतु अँगरेज़ी सेना ने उसका पीछा नहीं किया, नहीं तो उसी दिन सारी फ़ौज मारी जाती।

प्रधान सेनापति लॉर्ड क्लाइड बौंड़ी से लखनऊ लौट आए। सीमा पर जगह-जगह फ़ौज ठहरा आए थे, ताकि बाग़ी नैपाल से लौटकर न आ सकें।

जब बेगम साहबा तथा कुछ मुख्य-मुख्य बाग़ी सरदार नए कोट में पहुँच गए, तब जंगबहादुर बेगम साहबा से मिलने आए। बिरजिसक़द्र भी उनके ख़ीमे में गए। जंगबहादुर ने उन्हें आदर के साथ कुर्सी दी। बिरजिसक़द्र ने कहा कि हम आपके यहाँ इस दशा में आए हैं। जंगबहादुर ने कहा

कि बेगम साहबा और आप यहाँ आराम से रह सकते हैं। परंतु बाग़ियों को हम अपने यहाँ नहीं रहने देंगे। अँगरेज़ों से हमारी मित्रता है, और हम उनके शत्रु को अपना शत्रु समझते हैं।

कुछ दिनों बाद एक अँगरेज़ मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र की तसवीर खींचने नए कोट गया। उसने तसवीर खींचने के बाद कहा—अँगरेज़-सरकार का कहना है कि आप अपने मुल्क को लौट चलें, लखनऊ या फ़ैज़ाबाद, जहाँ चाहें, रहें। ख़र्च के लिये काफ़ी पेंशन मिलेगी, और आप अपने शाही ढंग से रह सकेंगे, परंतु नौकर-चाकर अधिक न रख सकेंगे। बेगम साहबा ने कहा कि जब नौकर न रख सकेंगे, तब वह रुपया किस काम आएगा। हमें यहीं रहने में क्या कष्ट है। उस अँगरेज़ के चले जाने पर जंगबहादुर ने कहा कि आप ख़ुशी से यहाँ रहें, और किसी तरह की चिंता न करें। उनके साथ के कई लोग लखनऊ चले गए। बेगम साहबा को नेपाल की सरकार से ५००) मासिक मिलने लगा। मिर्ज़ा बिरजिसक़द्र के यहाँ संतान भी हुई।

उधर बेगम साहबा अपने पीछे जो सेना छोड़ आई थीं, उसका बुरा हाल हुआ। मम्मूख़ाँ को जब नेपालियों ने धोखा देकर पकड़वा दिया, तब सेना के अन्य सरदारों ने बुटवल के पास प्रकट होकर अपनी छावनी डाल दी। इस पर नेपाल-सरकार से आज्ञा लेकर कर्नल केली ने नेपाल की

सीमा पार की, और बुटवल पहुँचकर विद्रोहियों पर आक्रमण किया। विद्रोही भागकर पहाड़ पर चढ़ गए। इस प्रयत्न में उनके क़रीब १३०० घोड़े नष्ट हो गए, और उनकी छ तोपें भी अँगरेज़ी सेना ने छीन लीं।

इस घटना के बाद मुहम्मदहुसैन ने आत्मसमर्पण कर दिया। पर इनके विरुद्ध कोई वैसा प्रमाण नहीं मिला, अतएव इन पर केवल निगरानी रक्खी गई। इन्होंने बताया कि विद्रोहियों की संख्या ५० हज़ार थी, जिनमें ३० हज़ार सिपाही थे। परंतु जंगबहादुर से मदद न पाने से वे सब भाग खड़े हुए और अब आधे रह गए हैं। नानाराव और बालाराव जंगल में छिपे हुए हैं।

६ एप्रिल, १८५६ को सर होप ग्रांट को लॉर्ड क्लाइड का तार मिला कि वह फ़ैज़ाबाद जायँ, और उन विद्रोहियों का मार्ग रोकें, जो अवध में घुसने का प्रयत्न करें। फ़ैज़ाबाद जाने पर सर होप को पता मिला कि चार हज़ार विद्रोहियों ने बनकुसिया में अपना मोर्चा लगाया है, और १२०० विद्रोही दक्षिण की ओर चलकर घाघरा-पार करने आ रहे हैं। सर होप ग्रांट ने फ़ौज की एक टुकड़ी को रामपुर थाने से जंगल की जाँच करने को भेजा, और खुद घाघरा के किनारे-किनारे चले। फ़ौज की दूसरी टुकड़ी को बनकुसिया भेज दिया। यह सेना जब सेकरोरा में ठहरी हुई थी, तब विद्रोही गजाधर-सिंह के नेतृत्व में उस पर आ टूटे। परंतु अँगरेज़ी सेना ने

उन्हें मार भगाया, और उनका पीछा किया। विद्रोहियों ने वनगाँव के क़िले में आश्रय लिया। जब मदद के लिये और सेना आ गई, तब अँगरेज़ी सेना ने क़िले पर आक्रमण किया। लगभग १५० विद्रोही मारे गए, शेष भाग गए। इस युद्ध में गजाधरसिंह मारा गया।

७ मई को सर होप ग्रांट बलरामपुर पहुँचे। वहाँ उन्हें पता मिला कि नानाराव, बालाराव, मम्मूखाँ तथा दूसरे अनेक सरदार पहाड़ के नीचे, नैपाल के जंगल में, ठहरे हुए हैं, और वह स्थान गोरखपुर तथा अवध की सीमा से अधिक दूर नहीं। यहाँ उन्हें बालाराव और नानाराव की चिट्ठियाँ भी मिलीं। बालाराव ने अपने को निर्दोष लिखा था, पर नानाराव की चिट्ठी कड़ी थी।

१० मई, १८५९ को सर होप ग्रांट विसकोहर पहुँचे। यहाँ पता मिला कि विद्रोही सेरवा-दर्रे में हैं। अतएव उन्होंने पिंक्नि को तुलसीपुर की ओर भेजा, और ख़ुद २१ मई को दर्रे में प्रवेश किया। विद्रोहियों ने दोनो ओर की पहाड़ियों से गोलियाँ चलानी शुरू कीं। इस पर सर होप ने एक फ़ौज उन पर आक्रमण करने को भेजी। चार मील का चक्कर काटकर इस सेना ने विद्रोहियों पर बग़ल से आक्रमण किया। इधर सर होप के साथ की सेना ने बढ़कर विद्रोहियों की दो तोपें ले लीं। २३ मई को उनका पहाड़ियों के पार पीछा किया गया, और खदेड़ कर वे ऊपर के पहाड़ों पर, नैपाल में, भगा

दिए गए। इसके बाद सीमा पर, भिन्न-भिन्न स्थानों पर, सेना की टुकड़ियों को तैनात कर सर होप ग्रांट ४ जून, १८५९ को लखनऊ लौट गए, और इस प्रकार अवध के विद्रोह की समाप्ति हो गई।

कुछ विद्रोही नेताओं का अंत

बेगम हज़रतमहल और नवाब बिरजिसक़द्र नेपाल चले गए। वहाँ की सरकार ने उन्हें आश्रय दिया। परंतु उनके साथ के सरदारों की बड़ी दुर्दशा हुई। यहाँ तक कि उनमें से कई प्रधान व्यक्तियों का पता न लगा कि कहाँ चले गए, और उनकी क्या गति हुई।

बिरजिसी दरबार के प्रधान व्यक्ति शरफ़ुद्दौला इब्राहीमखाँ ने अंत समय बेगम साहबा का साथ नहीं दिया, बहाना बताकर लखनऊ में ही रह गए। जब बेगम साहबा ने क़ैसरबाग़ छोड़ा, तब सबसे पहले वह शरफ़ुद्दौला के ही घर गईं, और उन्हें अपने साथ चलने को कहा। उन्होंने कहा कि आप चलें, मैं भी फ़ौज इकट्ठा करके आता हूँ। फिर नज़र की अशर्फ़ियाँ देकर बिदा किया। उनके घरवालों ने कहा कि ऐसे समय आपको इस तरह बहाना नहीं करना चाहिए था। उन्होंने कहा कि बेगम साहबा के दरबार के लोग तथा बाग़ी फ़ौज यह जानती है कि मैं अँगरेज़ों से मिला हुआ हूँ। इसलिये मेरा घर पर ही रहना ठीक है। उनके साथ जाने से मैं भी बाग़ी ठहराया जाऊँगा। उस रात को, जब वह अपने तिमंज़िले में आराम कर रहे थे, एक बम का गोला उनकी

छत पर आकर गिरा। तुरंत नीचे उतर आए और सहन में आ खड़े हुए। मुंशी क़ुदरतउल्ला ने कहा कि यहाँ ठहरना ठीक नहीं, कहीं और जगह चलना चाहिए। उन्होंने कहा कि पहले अपना घर जाकर देखो। तुम्हारे घर में आग लगी है। मुंशी-जी अपने घर दौड़े गए। देखा, घर में कोई नहीं। गोलों के गिरने से सब लोग निकल भागे थे। थोड़ी देर में शरफ़ुद्दौला भी अपने घर की स्त्रियों के साथ उनके दरवाज़े पर जा पहुँचे। उन्होंने कहा कि अब चलो। मुंशीजी ने कहा कि तहवील में ४० हज़ार रुपया रक्खा है। एक-एक तोड़ा साथ ले लेना चाहिए। उन्होंने कहा कि ऐसे समय ईश्वर पर भरोसा करना ठीक है। फिर वे गलियों से होकर शाहगंज में मीर मुईन कुमेदान के घर गए। पहर रात रहे क़मरुद्दौला के बेटे हसनजान को बुलवाया, और कहा कि दारोगा आशिक़-अली से जाकर कहो कि अपने स्त्री-बच्चों के साथ मेरे स्त्री-बच्चों को भी लेते जायँ। हसनजान ने कहा कि आप खुद चलकर कहें। शरफ़ुद्दौला हसनजान के साथ गए, पर दारोगा ने सख्त जवाब दिया। उसने कहा कि तुम्हारा साथ देकर हम कहीं के न रहे। इस पर शरफ़ुद्दौला लौट आए। इधर उनके घर की औरतें घबराकर मूसाबाग़ के नाके से किसी गाँव को चली गईं। शरफ़ुद्दौला बड़े दुखी हुए। वह कश्मीरी मुहल्ले से होकर चले। सवेरा हो गया था। चौराहे पर उनकी कई तिलंगों से भेंट हो गई, जो हज़रत अब्बास की दरगाह से आ रहे थे। उन्होंने कहा

कि यह कोई जासूस जा रहा है। यह सुनकर शरफ़ुद्दौला ने क़दम बढ़ाया। एक तिलंगे ने बंदूक़ चला दी। गिर पड़े, फिर दौड़ कर रफ़ीक़ुद्दौला की सबील के दरवाज़े से जाकर चिमट गए। वह बंद था। तब घूमकर तमंचा दागा, पर वह नहीं चला, उसे फेंक दिया। इतने में उनके सिर की चादर गिर पड़ी। तिलंगों ने पहचान लिया। पकड़कर शाहजी के पास मूसाबाग़ ले गए। शाहजी शरफ़ुद्दौला को पाकर बहुत खुश हुए, और तोप की पेटी पर बिठाकर दरगाह ल आए। शाहजी ने उनसे एक लाख रुपया माँगा। शरफ़ुद्दौला ने कहा कि दो लाख दूँगा, अपने आदमी साथ कर दो। शाहजी ने कहा कि सारे शहर में गोरे फैले हुए हैं। मेरे आदमियों को ले जाकर उन्हें सौंप देगा, और आप उनकी रक्षा में हो जायगा। उन्होंने नहीं जाने दिया। जब कारनेगी साहब अपने दल-बल के साथ दरगाह में आ पहुँचे, तब शाहजी भागे। जो सिपाही शरफ़ुद्दौला की देख-रेख में नियुक्त थे, उनमें से एक ने शाहजी से पूछा कि शरफ़ुद्दौल के बारे में क्या हुक्म है। उन्होंने कहा कि मार डालो। जब सिपाही लौटते दिखाई दिये, तब शरफ़ुद्दौला ने अपना जोशन खोलकर इनायत-अली खिदमतगार को दिया, और कहा कि मेरी यह निशानी मेरे घरवालों तक पहुँचा देना। उसने डर के मारे लेने से इनकार किया। इतने में सिपाही समीप आ गये। उन्हें देखकर शरफ़ुद्दौला नमाज पढ़ने के क़रीने में हो गए। एक तिलंगे ने गोली मारी, और वह गिर पड़े। जब कारनेगी साहब वहाँ

पहुँचे, तब वह सिसक रहे थे। उन्होंने पूछा कि यह किसकी लाश है। इनायतअली ने कहा कि शरफ़ुद्दौला इब्राहीमखाँ की है। उन्होंने कहा कि सब लाशें यहाँ से हटाई जायँ। सब उठाकर एक गड्ढे में डालकर जला दी गईं। इस तरह बिरजिसक़दर के दरबार के इन प्रधान व्यक्ति का दुःखद अंत हुआ।

विद्रोही नेताओं में अहमदुल्लाशाह सर्व-प्रधान थे। लखनऊ की अंतिम लड़ाई में इन्होंने बड़ा ज़ोर बाँधा था। अंत में हार गए, और भागकर बारी पहुँचे। वहाँ इन्होंने फिर फ़ौज इकट्ठा की। नवाब मुतज़ादुद्दौला और नवाब मुईनुद्दौला से लड़ाई के लिये जबर्दस्ती रुपया लिया। अनेक उमरा डर के मारे इनकी ख़ुशामद में लगे रहते थे। बारी से यह मुहम्मदी गए, और अपने नाम का सिक्का जारी किया। इस बात पर इनका शाहज़ादा फ़ीरोज़शाह से बिगाड़ हो गया, और वह शाहजी का साथ छोड़कर चले गए। शाहजी को अपनी शक्ति और प्रभाव का घमंड था ही, एक दिन दो-चार सवार लेकर पुवायाँ जा पहुँचे। वहाँ के राजा के गढ़ के फाटक पर गए। फाटक बंद था। खोलने को कहने पर भी नहीं खोला गया। इस पर शाहजी बिगड़े, और अपने स्वभाव के अनुसार राजा को अंट-संट कहने लगे। तब एक चमार ने भीतर से, एक छेद से, उन्हें गोली मार दी। वह गिरकर तत्काल मर गए। राजा ने सिर काटकर अँगरेज़ अधिकारियों के पास भेज दिया। उनके मारे जाने की खबर पाकर उनकी सेना, जो

पुवायाँ से क़रीब तीन कोस दूर थी, भंग हो गई, और उसके सब सैनिक भाग खड़े हुए। इस प्रकार विद्रोह के प्रमुख नेता अहमदुल्लाशाह का अंत हुआ।

शाहजी मद्रास (अरकाट) के निवासी थे। यह अँगरेज़ी भी जानते थे, और बड़े कट्टर सुन्नी थे। यह 'क़ाफ़िरों' अर्थात् अँगरेज़ों के विरुद्ध धर्मयुद्ध का जगह-जगह प्रचार करते हुए फ़ैज़ाबाद पहुँचे। वहाँ पकड़कर जेल में बंद कर दिए गए। कुछ ही दिनों बाद, जब वहाँ की सेना ने विद्रोह कर दिया, उसने इन्हें जेल से मुक्त कर अपना नेता बनाया। और, यद्यपि इनसे किसी की नहीं पटी, तो भी विद्रोहियों का अंत तक साथ दिया। यह बड़े चतुर और वीर भी थे।

मुम्ताहुद्दौला जब बिरजिसक़द्र के साथ नहीं जाने पाए, तब लौट आए, और पहाड़ पर ही अपने को अँगरेज़ सेनापति के हवाले कर दिया। वह पहरे में फ़ैज़ाबाद भेजे गए। यहाँ उन्हें रहने को एक मकान दिया गया, और हुक्म हुआ कि बिना इजाज़त के कहीं न जाओ। पुलिस के साहब उन्हें अपने साथ दौरे पर ले गए। उसने उनसे बेगम साहबा को यह चिट्ठी लिखवाई कि वह अपने मुल्क को लौट आएँ, सरकार ने उनका अपराध क्षमा कर दिया है, और वह यहाँ बड़े सम्मान के साथ रक्खी जायँगी। परंतु इसका कोई जवाब नहीं आया। एक महीने बाद वह लखनऊ गए। वहाँ कारनेगी साहब के सामने उनका मामला पेश

हुआ। हाकिमों ने उन्हें जेल में रखने का विचार किया। परंतु चीफ़ कमिश्नर ने उन्हें छोड़ दिया, और कह दिया कि चाहे जहाँ जायँ। फ़िरंगीमहल में आकर एक संबंधी के घर रहे। सफ़ाई की चिट्ठी पाने पर कलकत्ते गए। वहाँ उन्होंने लखनऊ के दस बाग़ियों के नाम मेजर हर्वर्ट को लिखा दिए। उसने इनका भी नाम उनके साथ लिख लिया। बादशाह वाजिदअली ने कहा कि जब तक तुम्हें सफ़ाई की चिट्ठी नहीं मिलेगी, अपने पास नहीं रक्खूँगा। और, वह चिट्ठी उन्हें नहीं मिली। लाचार होकर लखनऊ लौट आए। यहाँ भी चिट्ठी नहीं मिली। हाकिमों को गुमान था कि इन्हें शाही ख़ज़ाने का पता है, यह ख़ैरख़्वाही के मारे नहीं बताते। यह बेचारे कहीं के न रहे।

मम्मूख़ाँ बाग़ी फ़ौज के साथ जब नए कोट की ओर चले, उन्होंने समझा कि बेगम साहबा ने उनके लिये जंगबहादुर से आज्ञा ले ली होगी। राह में, एक घाटी में, जंगबहादुर के भाई बमबहादुर सेना लिए हुए पड़े थे। उन्होंने बाग़ी फ़ौज को आगे बढ़ने से रोका, और मम्मूख़ाँ को अपने पास बुलाया। विश्वास में आकर वह बमबहादुर के पास चले गए। उसने कहा कि तुम यहाँ ठहरो। मैं जंगबहादुर को लिखता हूँ। जब उनका हुक्म आ जाय, तब जाना। और, उसने उन्हें एक प्रकार से अपने यहाँ नज़रबंद कर लिया। जब जंगबहादुर आए, मम्मूख़ाँ से आदर-पूर्वक बातचीत की।

जब उन्होंने पूछा कि आपने किसी अँगरेज़ को मारा है, तब साफ़ इनकार किया। जब यह बातचीत कर रहे थे, वहाँ मुसलमानी वेश में बेल साहब आए। वह पास ही किसी पहाड़ी पर कुछ फ़ौज के साथ ठहरे हुए थे। मम्मूख़ाँ को अपने साथ लिवा ले गए, और उन्हें लखनऊ भेज दिया। वहाँ उन पर मुक़दमा चला। अपने बचाव में उन्होंने अँगरेज़ों की चिट्ठियाँ पेश कीं, और कहा कि क़ैसरबाग़ से जो क़ैदी बच निकले थे, वे मेरी आज्ञा से ही बचे थे। मुझे दो लाख रुपया इनाम मिलना चाहिए। उस दिन से वह जेल से हटाकर फ़रहतबख़्श के कमरे में आराम के साथ रक्खे गए। उन्हें ख़िदमतगार मिले, और ख़र्च के लिये कई रुपए रोज़ दिए जाने लगे। कई महीने तक मुक़दमा चलता रहा। आख़िर उन्हें फाँसी देने का हुक्म हुआ। अपील होने पर कालापानी की सज़ा दी गई, और वह अंडमन भेजे गए। राह में वह भाग निकले; परंतु फिर पकड़ लिए गए। अंडमन में उन्होंने अपने निर्वाह के लिये एक दूकान कर ली थी। उनकी वहीं मृत्यु हुई।

बैसवाड़े के राना बेनीमाधवबख़्श बहादुर ताल्लुक़ेदार बराबर लड़ते रहे। उन्होंने आत्मसमर्पण नहीं किया। जब मुक़ाबला नहीं कर सके, तब बेगम साहबा के पास बौंड़ी पहुँचे, और उनके साथ नैपाल गए। बेगम साहबा के साथ नए कोट नहीं जाने पाए। अतएव अन्य विद्रोहियों के साथ तराई में ठहरे रहे, जहाँ से उनका दल लाचार होकर पहाड़

की ओर बढ़ा। जंगबहादुर को जब यह सूचना मिली कि नेपाल की तराई के पश्चिमी भाग में, सूढ़ी खोला के जंगलों में, विद्रोहियों का एक दल घुस आया है, तब उन्होंने तत्काल कर्नल पहलवानसिंह की अधीनता में सैनिकों की चार कंपनियाँ भेज दीं। उन्हें आज्ञा हुई कि चांगमी के क़िले में रहकर शत्रु की गति-विधि की देख-रेख करें, और उन्हें ऊपर पहाड़ों में न आने दें, और हो सके, तो उनके हथियार छीन लें, तथा दूसरी आज्ञा होने तक उन्हें रोक रक्खें। १८५९ की मई के अंत में कर्नल पहलवानसिंह ने चांगमी के क़िले में जाकर अपना मोरचा लगा दिया। परंतु उन्हें यह देखकर आश्चर्य हुआ कि विद्रोहियों की संख्या उनकी सेना से कहीं अधिक है। वह विद्रोहियों का मारा-मारा फिरनेवाला कोई छोटा-मोटा दल न था, बल्कि २ हज़ार जवानों की एक सेना थी, जो बंदूक़ों, तलवारों और तोपों से लैस थी। साथ ही उसके पास काफ़ी गोली-बारूद भी थी, और बड़े मौक़े के स्थान को अधिकृत किए थी। सबसे अधिक चिंता की यह बात थी कि वह सेना दिन-दिन बढ़ती जा रही थी; क्योंकि प्रतिदिन सैकड़ों नए विद्रोही आ-आकर उसमें शामिल होते जाते थे। पहलवानसिंह दो महीने तक उसकी बड़ी सावधानी से देख-रेख करते रहे। अगस्त के मध्य में उन्होंने नैपाल को और सेना भेजने के लिये लिखा। उनकी सेना उस विशाल समूह को अपने अधीन ले आने को अपर्याप्त थी।

माँगी हुई मदद के न मिलने से निराश होकर पहलवान-सिंह विद्रोहियों को निःशस्त्र करने को अधीर हो उठे। अतएव १३वीं ऑक्टोबर को उन्होंने विद्रोहियों को यह कहलाया कि वे लोग अपने हथियार रख दें। इस पर विद्रोही हिचकिचाए। तब पहलवानसिंह ने शंकरपुर के राना-बेनीमाधव को अपने पास अकेले बुलाया। उन्होंने यह विश्वास दिलाया कि अगर वह उनकी आज्ञा का पालन करेंगे, तो वे नहीं मारे जायँगे। उन्होंने भी हिचकिचाहट दिखाई। इससे पहलवानसिंह का धीरज जाता रहा, और उन्होंने अपनी सेना एकत्र कर विद्रोहियों से यह माँग की कि राना बेनीमाधव उनके सिपुर्द कर दिए जायँ। इस बात से विद्रोहियों की छावनी में सनसनी फैल गई। कुछ ने आत्मसमर्पण का समर्थन किया, और कुछ ने विरोध। उत्तर पाने में देरी होने से पहलवानसिंह उत्तेजित हो उठे, और ११वीं नवंबर को उन्होंने अपनी सेना को विद्रोहियों की छावनी की ओर बढ़ने का हुक्म दिया, ताकि उन्हें डराकर अपने वश में कर लें। सेना ले जाकर उन्होंने विद्रोहियों को आज्ञा दी कि अपने हथियार रख दो, अन्यथा मार डाले जाओगे। इस पर राना बेनीमाधव नैपाली सरदार से बातचीत करने के लिये अपने ख़ीमे से बाहर निकल आए। कुछ उग्र विद्रोहियों ने, जो आत्मसमर्पण की अपेक्षा प्राण दे देना अच्छा समझते थे, बेनीमाधव का उद्देश न समझकर

यह समझ लिया कि वह आत्मसमर्पण करने जा रहे हैं, और अत्यंत क्रोध में आकर नैपालियों पर गोली चला दी। इस पर क्रुद्ध होकर पहलवानसिंह ने अपनी सेना को क़त्ल कर देने की आज्ञा दे दी, जिससे बेनीमाधव तथा अन्य दो विद्रोही सरदार तुरन्त मार डाले गए। जब कर्नल के क्रोध की आग क़रीब ४०० विद्रोहियों के रक्त से ठंडी हुई, तब उसने क़त्ल करना बंद करने की आज्ञा दी।

राना बेनीमाधवसिंह बड़े वीर और बड़े स्वामिभक्त थे, और अंत तक अपने निश्चय पर दृढ़ रहे।

राजा जयलालसिंह नसरतजंग राजा ग़ालिबजंग दर्शनसिंह के पुत्र थे। बड़े कुशल व्यक्ति थे। अपनी योग्यता से कलेक्टर के पद पर पहुँच गए थे, और प्रायः शहर का प्रबंध उनके सिपुर्द किया जाता था। बिरजिसक़दर की सरकार में वह इसी पद पर नियुक्त हुए थे, और बाग़ी फ़ौज के अफ़सर उनसे सलाह लेकर काम किया करते थे। वह भी भाग गए थे। शांति की घोषणा होने पर वह हाज़िर हुए, और अपने फ़ैज़ाबाद-ज़िले के इलाक़े पर अधिकार जमाया। पुलिस के ओर साहब के पेशकार देवीप्रसाद से उनकी शत्रुता थी। २४ सितंबर, १८५७ के वध के अपराध में वह पकड़े गए, और उन्हें फाँसी का हुक्म हुआ। फाँसी देते समय राजा ने फाँसी की रस्सी अपने हाथ से गले में डाल ली। डेढ़ रुपए का कफ़न देकर वहीं जला दिए गए। उन्हें पहली

१८ ५ हुआ था।

परंतु ग़ुलामरज़ा कोतवाल मज़े में रहे। यह भी भीतर-भीतर अँगरेज़ों से मिले हुए थे। जब ग़दर होने पर नवाबी सरकार क़ायम हुई, तब यह शहर के कोतवाल बनाए गए। इस बात की सूचना इन्होंने सर जेम्स आउटराम को, जो बेलीगारद में घिरे हुए थे, यथासमय दे दी थी।

ग़दर के बाद अँगरेज़ी राज्य क़ायम होने पर यह एक्स्ट्रा असिस्टेंट कमिश्नर बनाए गए।

हिंदू से मुसलमान हुए थे। इनका हिंदू नाम जगन्नाथ था, और यह वैश्य थे। जब बादशाह अमजदअली ने अपने वज़ीर शरफ़ुद्दौला को पदच्युत किया था, तब यह पदवी उन्होंने इन्हीं को दी थी। इनका अलीनक़ी वज़ीर पर बड़ा प्रभाव था। अँगरेज़ी होने पर इन्हें शहर के बड़े-बड़े ठेकों के काम मिले थे। इनका अँगरेज़ों के साथ पहले से ही अच्छा सिलसिला था। विद्रोह-काल में भी यह उसे बनाए रहे, और जब अँगरेज़ी अमलदारी फिर क़ायम हुई, तब इनके भी भाग्य फिरे।

सहायक पुस्तकों की सूची

1. Douglas Dewar—A Hand-book to the English Pre-Mutiny Records.
2. William Edward—Personal Adventures during the Indian Rebellion.
3. William Forbes-Mitchell—Reminiscences of the Great Mutiny.
4. Gordon-Alexander (Lieutenant-Colonel)–Recollections of a Highland Subaltern during the Campaigns of the 93 Highlanders in India.
5. Martin Richard Gubbins—An account of the Mutinies in Oudh and of the Siege of the Lucknow Residency.
6. William Rev. Brock's Biographical Sketch of Sir Henry Havelock.
7. Henry Knollys—Incidents in the Sepoy War 1857-58.
8. Col. A. R. D. Mackenzie—Mutiny Memoirs.
9. Mark Thornhill—Personal Adventures and Experiences.
10. Col. Thomas Nicholls Walker—Through the Mutiny.

11. Reginald Cr. Wilberforce—An unrecorded Chapter of the Indian Mutiny.
12. Julius George Medley—A years Campaigning in India.
13. Lt. Gen. Shadwell—The Life of Sir Colin Campbell.
14. J. Baillie Fraser—Military Memoir of Lt. Col. James Skinner.
15. Col. Hugh Pearse—Hearseys.
16. Pudma Jung Bahadur Rana—Life of Maharaja Sir Jung Bahadur.
17. सैयद कमालुद्दीन हैदर—सवानहाते-सलातीने-अवध।

इतिहास की उत्तमोत्तम पुस्तकें

१—हिंदी-साहित्य का इतिहास

(प्रथमावृत्ति)

लेखक, हिंदी-संसार के प्रख्यातनामा समालोचक मिश्रबंधु। आपकी कमनीय कृति 'मिश्रबंधु-विनोद' में भी यद्यपि हिंदी-साहित्य का इतिहास और कवि-कीर्तन है, फिर भी उसमें कवि-वर्णन बहुत अधिकता से है। और, सिर्फ़ साहित्यिक इतिहास जानने के लिये इतने बृहत् ग्रंथ का पढ़ना सबके लिये संभव नहीं। इसलिये ऐसे संक्षिप्त ग्रंथ की बहुत आवश्यकता थी। इन्हीं बातों पर विचार करके माननीय मिश्रबंधुओं ने इस अनुपम ग्रंथ की रचना की है। यह ग्रंथ बड़ी खोज, अध्ययन, परिश्रम और अनुभव से लिखा गया है। साहित्य के भांडार में अब तक ऐसा महत्त्व-पूर्ण ग्रंथ आपने न देखा होगा। मिश्रबंधु ही सबसे प्रथम इस प्रयास में आगे बढ़े हैं। मूल्य सादी १॥), सजिल्द २)

२—इँगलैंड का इतिहास

(तृतीयावृत्ति)

लेखक, सुप्रसिद्ध हिंदी-लेखक प्रोफ़ेसर डॉक्टर प्राणनाथजी विद्यालंकार। हिंदी में इँगलैंड-जैसे स्वतंत्रता-प्रिय देश का एक अच्छा-सा इतिहास भी अभी तक नहीं लिखा गया! इसी अभाव की पूर्ति के लिये अँगरेज़ी की ढेरों प्रसिद्ध-प्रसिद्ध पुस्तकें पढ़कर और उनका अवलंब लेकर इस ग्रंथ-रत्न की रचना की गई है। यह ग्रंथ

हिंदी-साहित्य का गौरव बढ़ानेवाला है। प्रत्येक लाइब्रेरी और पुस्तकालय में इसकी एक-एक प्रति रहनी चाहिए। कॉलेज के विद्यार्थियों के लिये तो यह ग्रंथ अमूल्य ही है। यह उत्कृष्ट और अपूर्व ग्रंथ हिंदी-साहित्य-सम्मेलन और सी० पी०, यू० पी०, बिहार आदि में पढ़ाया जाता है। मूल्य सादी ३॥), सजिल्द ४॥), प्रत्येक भाग अलग-अलग सादी १), सजिल्द १॥), द्वितीय और तृतीय भाग एक साथ सजिल्द २॥)

३— ग़दर के पत्र तथा कहानियाँ

(तृतीयावृत्ति)

मूल-लेखक, ख़्वाजा हसन निज़ामी; अनुवादक, हिंदी के प्रौढ़, प्रतिभाशाली लेखक श्रीचतुरसेनजी शास्त्री। लेखक की रचनाएँ उर्दू-साहित्य में अनमोल रत्न हैं, और साहित्य-सागर में सांप्रदायिक भाव, ऊँच-नीच और जाति-पाँति-रूपी रोड़े सब विलीयमान हो जाते हैं। इस पुस्तक में ख़्वाजा हसन निज़ामी की पैनी लेखन-शैली, भाषा के माधुर्य और भावों की उच्चता का पूर्ण समावेश है। दिल्ली के ग़दर के समय लोगों को कैसी यातनाएँ भोगनी पड़ीं, लोग हथेलियों पर जान लेकर कैसे भाग रहे थे, आदि बातों का दिग्दर्शन कराया गया है। कहना न होगा, प्रत्येक पत्र सचाई से भरा हुआ है। इसका अनुभव पाठकों को पढ़ने से ही होगा। मूल्य सादी १), सजिल्द १॥)

४—पुरानी दुनिया

(प्रथमावृत्ति)

अनुवादक, श्रीयुत रामचंद्र वर्मा। क्या आप जानते हैं कि आज से तीन-चार हज़ार वर्ष पहले संसार में कौन-कौन-सी जातियाँ बसती थीं, उनकी सभ्यता और संस्कृति कैसी थी, उनका कैसे और कहाँ से

उत्थान हुआ था, उनकी शक्ति कितनी और कैसी थी, उनके राज्य अथवा साम्राज्य का विस्तार कहाँ तक था, और किस प्रकार उनका पराभव या अंत हुआ ? यदि आप ये सब बातें जानना चाहते हों, तो हमारे यहाँ की प्रकाशित 'पुरानी दुनिया' मँगाकर पढ़िए। इस पुस्तक में राजनीतिक घटनाओं, युद्धों और राजा-महाराजों का इतिहास नहीं, बल्कि जातियों और राष्ट्रों का सांस्कृतिक इतिहास है, और इसलिये यह पुस्तक हिंदी में अपने ढंग की बिलकुल निराली और एक ही है। प्राचीन बैबिलोन, मिस्र, असीरिया या असुरिया-जैसे परम प्रतापी और प्रबल देशों और खालिडया, पारस, यूनान और रोम आदि राष्ट्रों ने अपने-अपने समय में आजकल संसार में जो सभ्यता दिखाई पड़ती है, उसकी बहुत कुछ नींव रक्खी थी। इस पुस्तक में इन्हीं सब राष्ट्रों का सांस्कृतिक इतिहास बहुत ही अच्छे और मनोरंजक रूप से दिया गया है—इतने मनोरंजक रूप से कि एक बार पुस्तक आरंभ करने पर उसे छोड़ने को जी नहीं चाहता। और, इससे साधारण ज्ञान की जो वृद्धि होती है, उसका तो कुछ पूछना ही नहीं। शीघ्र ही एक प्रति मँगाकर आप भी लाभ उठावें, और अपने बच्चों का भी ज्ञान बढ़ावें। अनेक चित्र। मूल्य सादी १॥), सजिल्द २)

५—दक्षिण तथा पश्चिम के तीर्थ-स्थान

(द्वितीयावृत्ति)

लेखक, श्रीकेसरीमल अग्रवाल। भारत में तीर्थ-यात्रा की प्रथा बड़ी प्राचीन है। यद्यपि रेल और मोटरों की सुविधा के कारण यात्रियों की संख्या तो बढ़ गई है, परंतु वे तीर्थ-यात्रा से पूरा लाभ नहीं उठा पाते। कारण है यात्रियों को तीर्थ-स्थानों का यथेष्ट ज्ञान न होना। यह पुस्तक इसी उद्देश की पूर्ति करती है। तीर्थ-संबंधी

अलंकृत पुस्तक का मूल्य सादी ।।।), सजिल्द १)

६—टर्की का मुस्तफ़ा कमाल पाशा

(द्वितीयावृत्ति)

रचयिता, हिंदी के प्रसिद्ध लेखक श्रीयुत शिवनारायण टंडन । इस पुस्तक में शाहों और सुलतानों के राजत्व-काल में टर्की की दुर्दशा, गत योरपीय महायुद्ध में टर्की को जर्मनी का साथ क्यों देना पड़ा, इसका रोमांचकारी वर्णन, कमाल पाशा ने अपनी मातृभूमि टर्की को घर और बाहर के शत्रुओं से कैसे बचाया, कमाल पाशा का पूरा जीवन-चरित्र, कमाल पाशा डिक्टेटर कैसे बना, उसने अकेले टर्की-से टूटे-फूटे साम्राज्य को किस तरह उठाकर एक उन्नतिशील, बलवान् राष्ट्र बना दिया, पुनर्निर्माण में वर्तमान उन्नतिशील टर्की का जीता-जागता चित्र, राष्ट्रीय भावना, आर्थिक उन्नति, सामाजिक क्रांति, पर्दे का दूर होना, शिक्षा का प्रचार, स्त्रियों को समानता के अधिकार आदि-आदि सभी बातों का बड़ा ही रोचक और शिक्षा-प्रद वर्णन है ।

इस पुस्तक को पढ़कर आप घर बैठे कमाल पाशा और टर्की के बारे में सारी ज्ञातव्य बातें जान सकते हैं । पढ़ने में बिलकुल उपन्यास का-सा मज़ा आता है । बढ़िया काग़ज़ पर छपी हुई पुस्तक का मूल्य सादी १।।), सजिल्द २)